CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

3999

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

STATE MUSEUM, LUCKNOW
LIBRARY

Acc. No.________________

Book No.________________

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

3999
8.2.71
Library, Lucknow

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ब्रज भारती

भाद्रपद सं० २०२२ वि०

वर्ष १६ अङ्क १

संपादक

वृन्दावनदास

बी. ए., एल-एल. बी.

प्रकाशक

किशन प्रसाद जैन

संयुक्त प्रधान मन्त्री

ब्रज साहित्य मण्डल, मथुरा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अनुक्रमणिका

क्रम	ख	लेखक	पृष्ठांक
१	सूर के दो पद	महाकवि सूरदास	१
२	ब्रजसाहित्य मण्डल पर एक निवेदन (संपादकीय)	श्री बृन्दावनदास	२
३	राजापटनीमल और उनके निर्माण कार्य	श्री प्रभुदयाल मीतल	७
४	"सूर" का वात्सल्य रस	श्री जयकुमार मुद्गल	११
५	मुस्लिम काल में हिन्दुओं की स्थिति । एक अध्ययन	श्री वृन्दावन दास	१७
६	राष्ट्र भाषा हिन्दी (कविता)	ज्यो० श्री राधे श्याम द्विवेदी	२२
७	तीर्थमयी पुण्य पुरी मथुरा	" "	२३
८	ब्रज लोक जीवन में हास्य	डा० बरसाने लाल चतुर्वेदी	२७
९	मुरलिया बोल उठी (कविता)	कविरत्न बालमुकुन्द चतुर्वेदी	३०
१०	महाकवि विहारी लाल का साहित्य तीर्थ	श्री बाल मुकुन्द चतुर्वेदी	३३

ब्रजभारती

प्रेस एंड रजिस्ट्रेशन आफ बुक्स एक्ट १८६७ (१९५६ में संशोधित की धारा १९ डी के अनुसार ब्रजभारती' के स्वामित्व आदि के संबंध में निम्नलिखित विवरण प्रकाशित किया जाता है—

१ - प्रकाशन का स्थान — मथुरा

२ - प्रकाशन की बार — त्रैमासिक

३ - मुद्रक, नाम, राष्ट्रीयता और पता — श्री गोविन्द प्रसाद अग्रवाल भारतीय
हीरालाल प्रिंटिंग प्रेस मथुरा

४ - प्रकाशक, नाम, राष्ट्रीयता और पता — श्री किशन प्रसाद जैन भारतीय सं० प्र०
मन्त्री अ० भा० व्रज साहित्य मंडल, मथुरा

५ - संपादक, नाम, राष्ट्रीयता और पता — श्री वृन्दावन दास
भारतीय, प्रकाश भवन, मथुरा

६ - उन व्यक्तियों के नाम-पते जो इस पत्र के मालिक या साझेदार या जो इसकी सारी पूंजी के एक प्रतिशत से अधिक के हिस्से दार हैं। — अ० भ० ब्रज साहित्य मंडल, मथुरा

मैं, किशन प्रसाद जैन, यह घोषित करता हूं कि उपर्युक्त विवरण मेरी पूरी जानकारी और विश्वास के अनुसार सही हैं।

ता० १—३—५८ प्रकाशक का हस्ताक्षर (ह०) किशनप्रसाद जैन

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ब्रज भारती

[अखिल भारतीय ब्रज-साहित्य-मंडल की मुख-पत्रिका]

वर्ष १६] मथुरा, भाद्रपद सं० २०२२ [अंक १

—: सूर के दो पद :—

(१)

मेरो मन अनत कहाँ सुख पावै ।
जैसे उड़ि जहाज को पंछी फिर जहाज पै आवै ।।
कमल नैन को छाँड़ि महातम और देव को धावै ।
परम गंग को छाँड़ि पियासो दुर्मति कूप खनावै ।।
जिन मधुकर अम्बुजरस चारकौ क्यों करीलफल खावै ।
'सूरदास' प्रभु कामधेनु तज छेरी कौन दुहावै ।।

(२)

मन में रह्यो नाहिन ठौर ।
श्री नन्द नन्दन अछत कैसे आनिये उर और ।।
चलत चितवन द्यौस जागत सपने सोवति राति ।
हृदय से वह मदन मूरति छिन न इत उत जाति ।।
कहत कथा अनेक ऊधौ लोग लोभ दिखाय ।
कहा करौं मन प्रेम पूरन घट न सिन्धु समाइ ।।
स्याम गात सरोज आनन ललित मृदु मुख हास ।
'सूर' उनके दास कारन, मरत लोचन प्यास ।।

====

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

संपादकीय

ब्रज-साहित्य मण्डल पर एक निवेदन

ब्रज-साहित्य मण्डल के कार्यवाहक अध्यक्ष पद को स्वीकार करने का प्रस्ताव जब श्री जगदीशनारायण चतुर्वेदी आदि कतिपय मित्र मेरे पास लाये थे उस समय मैं मथुरा नगरपालिका का अध्यक्ष था। प्रकट है नगर पालिका के कार्य संचालन का दायित्व एक अध्यक्ष पर इतना भारी होता है कि उसको दूसरी बातों में भाग लेने का तो क्या सोचने का भी अवसर नहीं मिलता है। मैंने अपनी सीमाऐं उन्हें बताई परन्तु वे अपने निश्चय पर अटल थे। मेरे सम्मुख उनकी आज्ञा को स्वीकार करने के अतिरिक्त कोई अन्य बिकल्प न था।

तथ्य तो यह है कि जब तक मैं नगर पालिका के कार्य में व्यस्त रहा मण्डल की कोई विशेष सेवा न कर सका। प्रधानमन्त्री श्री जगदीशनारायणजी ही अपने कतिपय मित्रों के सहयोग से जिनमें श्रीरामप्रसाद कमल, श्रीजुगलकिशोर चतुर्वेदी श्रीसुरेन्द्रप्रसाद श्रीवास्तव आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं मण्डल का काम चलाते रहे, अब जबकि विगत ६,७ मासमे मैं नगरपालिका के अध्यक्ष पद से मुक्त होगया तो मुझे मण्डल की चिन्ता सवार हुई। यह दुर्भाग्य है कि उसी समय से श्रीजगदीशनारायणजी का मथुरा आना जाना बन्द होगया और मेरी उत्कट अभिलाषा के बावजूद कि मण्डल का कार्य तेजी से चलना चाहिये उसमें गतिरोध उत्पन्न होगया। इसी मध्य में एक खेद जनक बात यह भी हुई कि मण्डल की उस भूमि के मुकदमे में जिसको मण्डल अधिग्रहण करना चाहता था दीवानी अदालत से एक गम्भीर निर्णय हो गया उस भूमि पर कब्जा एक डिग्रीदार का हो गया। ज्ञात हो कि अधिग्रहण की कार्यवाही का किसी दीवानी दावे से कोई सम्बन्ध नहीं है परन्तु मण्डल को भूमि तो तभी मिल सकती है जब अधिग्रहण की कार्यवाही अन्तिम रूप से सम्पन्न हो जाय।

मण्डल के लिए भूमि अधिग्रहण के विषय में अब तक मेरी भूमिका केवल आदेशात्मक अथवा निरीक्षणात्मक थी। मेरा विचार हुआ कि इसप्रकार की भूमिका से यहकाम कदापि पूरा न होगा। मैं ने सोचा कि यदि मंडल के लिए भूमि नियोजित न हुई तो यह अकाल काल कवलित हो जायगा और पूर्ववर्ती साहित्यसेवियों की यह अमूल्य निधि हठात् नष्ट हो जायगी जिसका कलंक वर्तमान पदाधिकारियों की निष्क्रियता पर लगेगा। अत: मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि अधिग्रहण के मामले में मुझे स्वयं एक सक्रिय कार्यकारी (पैरोकार) के रूप में काम करना चाहिये। एक बात मेरे पक्ष में और थी, अधिग्रहण की फाइल राज्यसरकार के स्तर पर लखनऊ में पड़ी हुई थी जिसके लिए अनेक बार लखनऊ जाकर उस मामले को सीधा करने की आवश्यकता थी। मैं लखनऊ में स्थित तीन शीर्ष सहकारी संस्थाओं के जिनका नाम उत्तरप्रदेश सहकारी यूनियन उत्तरप्रदेश सहकारी संघ और

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उत्तरप्रदेश सहकारी बैंक्स् के संचालक मण्डलों का सदस्य हूं। उपरोक्त संचालक मण्डलों की बैठकों में सम्मिलित होने के निमित्त मुझे प्रत्येक मास में तीन चार बार और कभी इससे भी अधिक लखनऊ जाना पड़ता है। मैंने सोचा कि लखनऊ के इन दौरों के मध्य में ही अनवरत प्रयत्न करके अधिग्रहण सम्बन्धी समस्त बाधाओं और औपचारिक अड़चनों पर मैं काबू पालूंगा। इन विचारों से प्रेरित होकर मन्डल के तीन मन्त्रियों से मैंने विचारविमर्श किया (१) श्री रामप्रसाद कमल, [२] श्री जुगलकिशोर चतुर्वेदी तथा [३] श्री सुरेन्द्रप्रसादश्रीवास्तव। तीनों ने ही मेरे विचारों से सहमति प्रकट की और इस प्रकार से इस भार को स्वयं उठाने के लिए मेरे प्रति काम होने से पहिले ही कृतज्ञता भी प्रगट की। प्रबन्धमन्त्री श्री सुरेन्द्रप्रसाद श्री वास्तव ने एक फाइल जो उनके पास पड़ी थी मुझे देदी।

मैं उस फाइल को लेकर जिसमें कुछ स्फुट कागजों के अतिरिक्त कुछ भी न था और जिसमें एक भी कागज ऐसा न था जिससे कि यह पता चलता कि यह विषय सरकार के कौन से विभाग के विचाराधीन है लखनऊ पहुँचा। मैंने कल्पना के आधार पर सर्वप्रथम शिक्षा विभाग को खटखटाना उचित समझा। परन्तु वहां जाकर ज्ञात हुआ कि शिक्षाविभाग के तो अनेकों उपविभाग हैं, कहीं "क" है तो कहीं ख"। ड़" विभाग तक को मैंने देखे। मैंने सोचा शायद पूरी वर्णमाला के प्रत्येकवर्ण के नाम पर शिक्षा के उपविभाग होंगे। एक विभाग में अधीक्षक महोदय से मिला, उन्होंने मेरी कहानी सुनकर बहुत सोच विचार किया और अपने अधीनस्थ लिपिकों से परामर्श करके मुझसे कहा कि आपका मामला "सांस्कृतिक पुनरुत्थान" विभागमें मालुम होता है। अपनी दूसरी यात्रा में मैं उपरोक्त विभाग में भी गया जो रायल होटल में स्थित है। वहां भी लगभग २ घण्टे व्यतीत हुए परन्तु मण्डल की इस फाइल का कोई पता न लगा। अपनी तीसरी यात्रा में मैं पुनः शिक्षा विभाग ही में पहुँचा और उनसे आग्रह पूर्वक कहा कि यह फाइल आपके विभाग ही में निसंदेह होनी चाहिये। दैव योग से एक वरिष्ठ लिपिक कहने लगे कि यह फाइल कहीं शिक्षा 'ग'२ में तो नहीं है। उनकी धारणा सत्य सिद्ध हुई, ढूंढने पर फाइल वहां ही निकली।

आगे का वृत्तान्त संक्षेप में इस प्रकार है। शिक्षाविभाग ने मण्डल के सम्बन्ध में कुछ पूछताछ कर रक्खी थी, उसका दीर्घकाल से उन्हें कोई उत्तर नहीं मिला था। मैंने उस पूछताछ का सन्तोषजनक उत्तर उनकी इच्छानुसार जिलाविद्यालय निरीक्षक मथुरा और उपशिक्षासंचालक आगरा की संस्तुति करा कर भिजवा दिया है। वह संस्तुति इनके पास पहुँच भी गई है। अब वह विषय भूमिअधिग्रहण समिति के समक्ष प्रस्तुत होगा, उसकी स्वीकृति के बाद कुछ औपचारिक एग्रीमेंन्ट आदि मण्डल और राज्यसरकार के मध्य होंगे। चूंकि प्रत्येक कार्यवाही जिलाधीश मथुरा के माध्यम से होगी अतः मुझे यह दिखता है कि इसमें अभी कई महीने लग जावेंगे। लेकिन कुछ भी हो, लाल फीताशाही हमें कितना ही झकझोरे, हमें विचलित नहीं होना है। हम इस में डटे ही रहेंगे और आज नहीं तो कल, अधिग्रहण होकर ही रहेगा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मन्डल का प्रधान कार्य व्रज-साहित्य की उन्नति एवं विकास है। इसके तीन साधन ही मुख्य समझे जाते हैं (१) गोष्ठियों द्वारा साहित्य चर्चा (२) व्रज भारती के प्रकाशन द्वारा साहित्यिक शोध का कार्य (३) ग्रन्थ प्रकाशन। कुछ समय से उपरोक्त तीनों दिशाओं में गतिरोध उत्पन्न हो गया था। अन्य कारणों में प्रधानमंत्री की अनुपस्थिति इस गतिरोधका मुख्य कारण थी अतः ता० २५-७-६५ को मन्त्रिमन्डल की एक आवश्यक बैठक बुलाई गई। प्रधानमन्त्री की अनुपस्थिति में कार्यवाहक अध्यक्ष की हैसियत से मैंने बैठक के सम्मुख अब तक की प्रगति का प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। यह प्रतिवेदन अधिग्रहण के सम्बन्ध में अब तक मैंने जो भागदौड़ की थी उसके विवरण के अतिरिक्त और कुछ न था। बैठक में विचार विमर्श के उपरान्त निम्नलिखित महत्वपूर्ण निर्णय लिये गये।

(१) चूँकि प्रधान मन्त्री श्री जगदीशनारायण अब दिल्ली ही रहने लगे हैं और उनका मथुरा आना जाना बहुत कम होता है अतः एक संयुक्त प्रधान मन्त्री का नियुक्त कियाजाना बहुत आवश्यक है। सर्वसम्मति से श्री किशन प्रसाद जी जैन मन्डल के संयुक्त प्रधानमन्त्री निर्वाचित हुए

(२) व्रजभारती के सम्पादन का भार मुझको सोंपा गया। सर्वसम्मति से यह भी निश्चय हुआ कि अब व्रजभारती का प्रकाशन नियमित रूप से किया जाय। श्री किशनप्रसाद जैन, नवनिर्वाचित संयुक्तमन्त्री, ने घोषित किया कि एक अंक के प्रकाशन का व्यय भार वे वहन करेंगे, उसी समय मैंने भी एक अंक के प्रकाशन के व्यय को अपने पास से देने का वचन दिया। इस प्रकार वर्ष के चार अंकों में से दो के लिए तो व्यय की व्यवस्था हो ही गई। शेष दो अकों तथा भविष्य में नियमित रूप से प्रकाशन के लिए समुचित अर्थव्यवस्था जुटाने के लिए मन्त्रिमन्डल कृतसंकल्प है, उसके लिए बहुत शीघ्र चेष्टा की जायगी।

(३) गोष्ठियों को नियमित रूप से करने के विषयमें गोष्ठी मन्त्री श्रीजुगलकिशोर चतुर्वेदी नेकहा कि अबचूँकि संयुक्त प्रधानमन्त्री का निर्वाचन हो चुका है वे उनके सहयोग से निरन्तर नियमित रूप से गोष्ठियों का आयोजन करते रहेंगे। उन्होंने घोषणा की कि आगामी १२ अगस्त को रक्षाबन्धन के दिन एक साहित्यगोष्ठी का आयोजन संयुक्त प्रधानमन्त्री श्री किशन प्रसाद जैन के निवास-स्थान पर होगा।

(४) उपरोक्त कार्यक्रम के कार्यान्वित होने पर ग्रन्थप्रकाशन के कार्य को प्रगति देने पर विचार होगा ऐसा निश्चय किया गया।

भावी योजनाएँ

मन्डल के सभापतित्व के आसन से श्रद्धेय श्री बनारसीदास जी चतुर्वेदी ने एक बार बड़े

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

महत्वपूर्ण विचार प्रगट किये थे। उनके कहने का भाव यह था कि साहित्यकार केवल साहित्य की साधना में ही न लगें, उन्हें चाहिये कि वे अपने चारों ओर सुन्दर, स्वच्छ और स्वस्थ बातावरण भी उत्पन्न करें। उन्होंने यह भी कहा था कि साहित्य में रुचि रखने वाले व्यक्ति समाज की सांस्कृतिक उन्नति के हेतु ललितकलाओं के विकास में योगदान दें तथा नगरों को सफाई और सौन्दर्य की ओर भी ध्यान दें। उनके ये सुझाव बड़े महत्वपूर्ण हैं। मथुरा नगरी ब्रज जन पद की मुख्य धार्मिक एवं सांस्कृतिक नगरी है। हमें मथुरा को एक सुन्दरतम पर्यटक केन्द्र बनाना है। हमारा ध्येय वृहत्तर मथुरा होना चाहिये। मथुरा विद्या, संस्कृति, धर्म और सभ्यता का केन्द्र रही है। इसका महत्व भगवान श्री कृष्ण की जन्म भूमि होने के कारण ही नहीं वरों बौद्ध कालीन सम्राठों की राजधानी होने के कारण भी है। यहां की भूमि से निकले हजार शिलालेखों ने प्राचीन इतिहास के निर्माण में अपनी यह महत्व पूर्ण भूमिका अदा की हैं। मथुरा का पुरातत्व संग्रहालय मथुरा की शालीनना का द्योतक है। श्री कृष्ण जन्म भूमि पर वर्तमान काल में अब तक जो निर्माण हो चुके हैं उन्होंने मथुरा के गौरव को बढाया है कुछ निर्माण वहां और भी हो रहे हैं जिनमें प्रमुख श्री मद्भागवत मन्दिर हैं। इस मन्दिर के निर्माण पर लाखों रुपये व्यय होंगे और वह एक भव्य स्थल होगा।

ब्रजसाहित्य मन्डल की वर्तमान भूमि के अधिग्रहण हो जाने के बाद उसको एक भव्य सांस्कृतिक स्थल के रूप में परिवर्तित करने की योजना पर विचार होना चाहिये। मथुरा में प्राचीन दुर्लभ हस्तलिखित ग्रन्थ हजारों की संख्या में पड़े हैं। बहुतसे घरों में उनको सुरक्षित रखने की समुचित व्यवस्था का अभाव है और उसका परिणाम यह है कि उन ग्रन्थों में दीमक लग रही है। मेरी एक बार लखनऊ में श्रद्धेय पं० प्रतापनारायण जी मिश्र से भेंट हुई थी। उन्होंने मुझे बताया कि ब्रज में हस्तलिखित ग्रन्थों कि इतनी संख्या है कि उसकी हम आप कल्पना भी नहीं कर सकते। उनकी राय भी कि उपयोगी ग्रन्थों को यदि हम आर्थिक साधनों के अभाव में मुद्रित न करा सकें तो उनकी प्रतिलिपि ही करालें। सुझाव सुन्दर था परन्तु उसके लिए भी आर्थिक व्यवस्था की आवश्यकता है। एक योजना हस्तलिखित ग्रन्थ अधिकोष की भी हो सकती है। मन्डल के प्रांगण में एक ऐसे भवन का निर्माण हो सकता है जिसमें उपरोक्त अधिकोष स्थापित किया जासके। उसमें लौह अलमारियों में रासायनिक प्रक्रिया के अंतर्गत हस्तलिखित ग्रन्थ सुरक्षित रक्खे जासकते हैं। यदि इस प्रकार का संरक्षण निःशुल्क होगा तो मुझे विश्वास है कि ग्रन्थस्वामी बड़ी प्रसन्नता से अपने ग्रन्थों को अधिकोष में जमा करा देगे जिनकी कि उनको रसीद दी जायगी। अधिकोष ग्रन्थों की सुरक्षा ग्रन्थ स्वामियों के हितार्थ करेगा।

अष्टछाप भवन

सूरदास के सहित्य अष्टछाप के कवि ब्रजसाहित्य के आचार्य ही क्यों एक प्रकार से सर्वस्व हैं। मेरा सुझाव है कि मन्डल के प्रांगण में एक मन्दिर का भी निर्माण हो जिसमें भगवान श्री कृष्ण प्रतिष्ठापित हों और उसी में एक ओर अथवा समीपवर्ती स्थल पर अष्ट छापके

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कवियों की संगमरमर की प्रतिमाएं हों। प्रत्येक प्रतिमा के नीचे एक विशाल शिला पट्ट पर कवि की संक्षिप्त जीवनी हो। मन्दिर में दीवालों पर चारों ओर अष्टछाप के कवियों की सुन्दर कृतियाँ अंकित हों। क्या ऐसा करके हम ब्रजसाहित्य के प्रवर्तक आचार्यों के प्रति अपना औचित्य पालन न करेंगे ? क्या ऐसा न होना मथुरा नगर कीएक गम्भीर कमी नहीं है। मैं तो समझता हूं कि यदि हम इसकी एक सुन्दर योजना तैयार करदें तो इसके लिए अर्थ की कमी न रहेगी। मैं धर्म परायण धनी मानी लोगों से निवेदन करता हूं कि वे मथुरा नगर की इस भयंकर कमी को दूर करें। यदिब्रजसाहित्य मन्डल इस योजना में सफल होगया तो उसके भवन का नगर से दूर होने का दोष समाप्त हो जायगा। वहां दर्शनार्थियों की भीड़ उसी तरह लगी रहेगी जिस प्रकार स्थानीय बिड़ला मन्दिर पर रहती है।

सारांश यह कि अधिग्रहण होने के बाद मन्डल की भूमि पर उद्यान सहित आवश्यक निर्माणों द्वारा उसको एक अद्वितीय सांस्कृतिक स्थल बनाने की चेष्टा होनी चाहिये। मन्डल के साथ उसका एक पुस्तकालय भी उससे सम्बद्ध होना चाहिये।

गोष्ठियां

मन्डल के कार्य में कितनी ही निष्क्रियता क्यों न रही हो साहित्यिक गोष्ठियाँ तो उसके तत्वा धान में होती ही रहीं हैं इन गोष्ठियों में काव्य और सङ्गीत की जो धाराऐं प्रवाहित हुई हैं उनका श्रेय स्थानीय तथा बाहर से आये हुए कवियों और संगीतज्ञों को है। इस सम्बन्ध में सर्वश्री बच्चन जी, भगवानदत्त जी, बालमुकुन्द जी, राजेन्द्र रंजन, राजाबाबू वर्मन, सतीश चन्द्र मिश्र 'कृष्ण' जी, दीनानाथ सुमनेश, रामलला तथा गोविंद 'कविरत्न' के नाम विशेष रूप में उल्लेखनीय हैं। संगीतज्ञों में सर्वश्री लक्ष्मण जी, कृपानाथ, बालकृष्ण, केशवदेव पांडे, सत्यभान, आनन्द बिहारी तैलंग आदि समय समय पर गोष्ठियों में पधार कर अपना अमूल्य योगदान देते रहे हैं। हम उपरोक्त सभी कवियों और संगीत कारों के प्रति मन्डल कीओर से आभार प्रदर्शित करते हैं।

मन्डल के पुराने साहित्यक कवियों में सर्वश्री प्रभुदयाल जी मीतल, डा० बरसाने लाल चतुर्वेदी तथा शर्मनलाल अग्रवाल आदि ने भी मन्डल की गति विधियों में पूर्ण रूप से योग देने का आश्वासन दिया है इसके लिए उन्हें भी धन्यवाद है।

मन्डलको अपने नवीन संयुक्त प्रधान मन्त्री श्री किशन प्रसाद जैन से बड़ी आशायें हैं। वे एक सुशिक्षित एवं कुशल कार्यकर्ता हैं। उनपर लक्ष्मी और सरस्वती दोनों की कृपा है उनमें काम करने की लगन और उत्साह भी है। हमें पूर्ण आशा है कि उनके प्रयत्नों से मंडल का कार्य प्रगति की ओर अग्रसर होगा।

-वृन्दावनदास

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

राजा पटनीमल और उनके निर्माण कार्य

लेखक श्री प्रभुदयाल मीतल

राजा पटनीमल एरण्य गोत्रीय अग्रवाल वैश्य थे, उनके पूर्वज मूलतः दिल्ली निवासी थे और महाजनी का कारोबार करते थे, उन्हें दिल्ली के मुगल दरबार से "राय" की वंश परंपरागत पदवी प्राप्त हुई थी पटनीमल के पितामह राय ख्यालीराम एक प्रतिष्ठित महाजन होने के साथ ही साथ अनुपम सूझ-बूझ के राजनयिक भी थे मुगल सम्राट शाह आलम ने सं० १८२६ में उन्हें राजा की पदवी प्रदान की थी और उन्हें अपना वकील बनाकर ईस्ट इंडिया कम्पनी के संचालकों के साथ वार्तालाप करने के लिए कलकत्ता भेजा था। जब वे वहां से सम्राट का कार्य सिद्ध कर वापिस आये तब मुगल दरबार की ओर से उन्हें बिहार और उत्तर प्रदेश में जागीरें प्रदान की गईं थी ईस्ट इंडिया कम्पनी ने ख्याली राम की योग्यता से प्रसन्न होकर उन्हें राजकीय सेवा में ले लिया था और उन्हें नायब दीवान बनाकर पटना भेज दिया। बाद में उन्हें बिहार प्रान्त का नायब सूबेदार बना दिया गया था राय बालगोविंद राजा ख्यालीराम का पुत्र थे वे तपस्वी और साधक प्रकृति के एक धार्मिक व्यक्ति थे उन्हें राजनीति और महाजनी के कारोबार में रुचि नहीं थी।

राजा पटनीमल राय बालगोविंद के ज्येष्ठ पुत्र और राजा ख्यालीराम के पौत्र थे उनका जन्म स० १८२७ में हुआ था उनकी प्रकृति और योग्यता अपने यशस्वी पितामह के समान थी उन्होंने भी मुगल दरबार के प्रतिनिधि होकर ईस्ट इंडिया कम्पनी से कई सन्धियाँ और समझौते कराये थे जिनके लिए सं० १८६० में मुगल-सम्राट अकबर सानी ने उन्हें राजा की पदवी और पंजहजारी का मनसव प्रदान किया था। सं० १८६५ के लगभग वे राजनयिक जीवन से विरत होकर काशी में जाकर बस गये थे वहां पर उन्होंने महाजनी और जिमीदारी द्वारा प्रभूत सम्पति अर्जित की थी। वे काशी के अतिरिक्त दिल्ली आगरा और मथुरा में भी रहा करते थे उन सभी स्थानों में उन्होंने कोठी, भवन, मंदिर, तालाब आदि बनवाये थे और विविध धार्मिक कार्यों में उदारता पूर्वक अपने धन का सदुपयोग किया था। उसकी रुचि तीर्थों के प्राचीन धार्मिक स्थानों का महत्व कायम करने की ओर अधिक रहती थी फलतः उन्होंने काशी हरिद्वार गया और मथुरा में अनेक प्राचीन धर्म स्थलों का पुनरुद्धार किया था।

मथुरा में उनका निवास स्थान नक्कारची टीले पर था, जहाँ बाद में नारमल स्कूल कायम कर दिया गया था। उन्होंने मथुरा के प्राचीन शिव स्थल पर शिवताल का निर्माण कराया तथा दीर्घ विष्णु और वीरभद्र के मन्दिर बनवाये थे। उन्होंने यहाँ सोने का तुला दान भी किया था। वे श्री कृष्ण जन्म स्थान पर श्रीकेशव देवजी का विशाल मन्दिर भी बनवाना चाहते थे उसके लिए उन्होंने अंगरेज सरकार से कटरा की भूमि भी खरीद ली थी किन्तु कई

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कारणों से वे अपनी मनोभिलाषा कोपूर्ण नहीं कर सके थे श्री ग्राउस ने उसका मुख्य कारण कटरा के मुसलमान निवासियों द्वारा विरोध किया जाना बतलाया है। ग्राउस ने राजा साहब के सम्बन्ध में एक मनोरंजक किंवदन्ती का उल्लेख किया है। उन्होंने लिखा है। वे बहुत कम खाते थे अतः मथुरा के भोजन भट्ट प्रातःकाल उनका नाम लेने में इसलिये संकोच करते थे कि उस दिन उन्हें व्रत न रखना पड़े (१)

राजा पटनीमल धनी और दानी होने के साथ ही साथ विद्वान और विद्या व्यसनी भी थे। उनके पास हिंदी संस्कृत फारसी और अंग्रेजी ग्रंथों का विशाल संग्रह था जो उनके बाद नष्ट प्राय हो गया था। भारतेन्दु बा० हरिश्चन्द्रजीने उनकी प्राचीन सामग्रीके आधार पर ही अपनी पुरावृत्तसंग्रह नामक ऐतिहासिक लेख माला लिखी थी। उसके प्रथम लेख में ही उन्होंने राजा पटनीमल का परिचय और उनके उक्त ग्रंथ भंडार की दुर्दशा पर दुःख प्रकट करते हुए लिखा था। काशी में राजा पटनीमल बहादुर अग्रवाल कुल के भूषण हो गए हैं। इनके उद्योग अध्यवसाय साहस धर्मनिष्ठा, गंभीर गवेषणा बुद्धि और अपूर्व औदार्य सभी गुण प्रशंसा के योग्य हैं। कई बेर राजविप्लव में ऐसे लुट गए कि कुछ भी पास न रहा किंतु अपने उद्योग से फिर करोड़ों की संपत्ति को पैदा किया गया। काशी मथुरा वैतरणी किस तीर्थ में इनके बनाये मंदिर, घाट, तालाब आदि नहीं हैं। कर्मनाशा का पक्का पुल अद्यपि इन की अतुल कीर्ति का चिन्ह वर्तमान है। फारसी विद्या के ये पारंगत थे काशी खंड का संपूर्ण फारसी में इन्होंने स्वयं अनुवाद किया है। और भी कई ग्रन्थों का हिन्दी और फारसी में इन्होंने अनुवाद कराया था। वेद स्मृति पुराण काव्य कोष आदि विषय मात्र की पुस्तकें इन्होंने संग्रह की थी। फारसी पुस्तकों के संग्रह की कोई बात ही नहीं। अगरेजी यद्यपि स्वयं नहीं जानते थे किन्तु दस पन्द्रह हजार की पुस्तक अंगरेजी भाषाकी संग्रह की थी और सब के ऊपर फारसी में उसका नाम विषय कवि,मूल्य आदिका वृत्तांत लिखाहुआ था इनका सरस्वती भंडार और औषधालय तीन लाख रुपये का समझा जाता था किंतु हाय वह अमूल्य भंडार नष्ट हो गया कीट, दीमक, छुई मुई चूहे आदि उन अमूल्य ग्रन्थों को खा गए उस संग्रह की भस्मावशिष्ट हड्डियों में से मैं टूटे फूटे दस पाँच ग्रंथ ले आया हूं इन में कुछ सरकारी पुराने छपे हुए कागज और कुछ खडित पुस्तकें हैं। इस सम्बन्ध में बहुत सी बात उन्हीं सबों में से चुन कर लिखी जायगी इस हेतु उस संगृहीतनामा महा पुरुष का भी थोड़ा वृतान्त लिखे बिना जी न माना २)

राजा पटनीमल का देहांत सं० १९०१ (१७ सितम्बर सन १८४४ ई०) में हुआ था उन्होंने अतुल सम्पत्ति विशाल परिवार प्रभूत कुलःप्रतिष्ठ और अनश्वर कीर्ति-कलाप पीछे छोड़ कर अपना नश्वर शरीर त्यागा था [३]

उनके वन्शजों में काशी के राय कृष्णदास हिंदी साहित्य के विख्यात विद्वान और भारत प्रसिद्ध कला कर्मज्ञ हैं। उनके द्वारा स्थापित भारत कला भवन उनकी कला साधना का अनुपम उदाहरण है। भारत सरकार ने उन्हें पद्म भूषण के अलंकार से सम्मानित किया है।

---

[१] मथुरा-ए-डिस्ट्रिक्ट मेमोअर तृ० सं पृष्ठ १३७

(२ पुरावृत संग्रह (भारतेन्दु ग्रन्थावली तीसरा भाग) पृ० ११७-११८

(३) राजा साहब के बन्श श्री राय कृष्णदास जी की सूचना-सामग्री के आधार पर लिखित

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

जैसा पहले लिखा गया है, राजा पटनीमल मथुरा के श्री कृष्ण जन्म स्थान पर केशव भगवान् के मन्दिर का पुनर्निर्माण इच्छा रहते हुए भी नहीं करा सके थे। उनकी इच्छा की पूर्ति के लिए राय कृष्णदास जी ने कटरा केशवदेव जी की भूमि को महामना मालवीय जी के आदेशानुसार सेठ जुगलकिशोर जी बिड़ला को सं० २००१ ता० १८ फरवरी सन् १९४४ को दे दी थी, ताकि वहां पर भव्य मन्दिर का निर्माण किया जा सके। बिड़ला जी ने सं० २००८ तदनुसार ता० २१ फरवरी सन् १९५१ को 'श्री कृष्ण जन्म भूमि ट्रस्ट' की स्थापना कर उक्त भूमि को उसके अधिकार में कर दिया। अब यहां अनेक सुन्दर भवनों का निर्माण किया जा रहा है।

राजा पटनीमल ने मथुरा में जिन धार्मिक स्थानों का निर्माण कराया था, उनका संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है—

शिवताल—मथुरा नगर के बाहर प्राचीन शिव-स्थल पर यह अत्यन्त पुराना कुण्ड है, जिसका जीर्णोद्धार राजा साहब ने सं० १८६४ में कराया था। उन्होंने प्रचुर धन लगा कर इसे एक विशाल सङ्गीन तालाब का रूप प्रदान किया। इसके चारों ओर पक्के घाट सङ्गीन सीढ़ियाँ, चौड़े चबूतरे तथा सुन्दर बुर्जियां और छतरियां हैं। इसके एक ओर गौघाट भी है। इस विशाल तालाब के चहुँओर निर्मित १२ तिमंजली बुर्जियाँ और ऊँचे पक्के परकोटे ने इसकी भव्यता और कलात्मकता को चार चाँद लगा दिए हैं। यह ब्रज के सुन्दरतम तालाबों में से है, किंतु आज कल यह उपेक्षित अवस्था में होने के कारण शोभाहीन हो रहा है। इसकी दीवारों की सुन्दर चित्रकारी अब धुँधली पड़ गई है।

वीर भद्र का मन्दिर—मथुरा छत्ता बाजार के चौबच्चा मौहल्ला में यह प्राचीन शैव स्थान जो वीर भद्रेश्वर महादेव के नाम से प्रसिद्ध है। राजा साहब ने इसका जीर्णोद्धार करा कर वहां शिवालय बनवाया था। यह स्थान आजकल अत्यन्त जीर्णावस्था में में है और इसकी दशा अत्यन्त शोचनीय है।

दीर्घ विष्णु का मन्दिर—मथुरा भरतपुर दरवाजे के निकटवर्ती मनोहरपुरा नामक मुहल्ला में यह भगवान विष्णु का सुप्रसिद्ध धार्मिक स्थल है। इसका प्राचीन विष्णु मन्दिर मुसलमानों के आक्रमण काल में नष्ट हो गया था, किन्तु इसका धार्मिक महत्व बना रहा था। सुलतानों और सूरियों के शासन काल में यहां पर रामानन्दी संप्रदाय की गद्दी होने का उल्लेख मिलता है। सम्वत १६०९ में उस गद्दी का महन्त द्वारकादास नामक कोई सन्त था, जो स्वामी रामानन्द की शक्ति परम्परा में ५ वीं पीढ़ी में हुआ था। इसका उल्लेख उक्त द्वारकादास के एक शिष्य सासदास कृत 'भगति भावती' नामक रचना में हुआ है। (१)

---

(१) ब्रज भारती, वर्ष १३ अङ्क में लिखित श्री अगरचन्द नाहटा का लेख—'मथुरा में रचित तीन हिंदी ग्रन्थ।'

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उक्त रचना के अन्त में लिखा गया है कि सासदास ने सं० १६०४ की आश्विन कृ० ११ रविवार को मथुरा के केशवालय में 'भगति भावती' की रचना केवल छह पहर की थी। उसने रात्रि जागरण और परिक्रमा करने के उपरांत अपनी इस रचना को भगवान के समर्पण किया था। सासदास ने इसमें अपनी गुरू परम्परा बतलाते हुए रामानन्द से द्वारिकादास तक के नाम लिखे हैं। उसने द्वारिकादास को अपना गुरु बतलाते हुए उसे मनोहर पुरा निवासी कहा है।

भगति भावती याको नाम। दुख खण्डन सब सुख विश्राम ।।
संवत सोलहसै नव सालै। मथुरा पुरी केशवा आलै।।
असुन पहल ग्यारसि रविवारी। तहां षट पहर भांति विस्तारी ।।
करि जागरण प्रकम्मा दीनी। तब ठाकुर ने समर्पणु कीनी ।।
नाम द्वारिकादास विचार। मनोहरपुरा जस विस्तार ।।
तासु चरण रज जन सिर धारी। सासदास तास्यौ कहि प्यारी ।।

उक्त उल्लेख में जहां दीर्घ विष्णु के मन्दिर की चार शताब्दियों से भी अधिक की प्राचीन परम्परा मिलती है, वहाँ यह भी ज्ञात होता है कि मथुरा का मनोहर पुरा मुहल्ला उस काल में भी इसी नाम से प्रसिद्ध था। इसके अतिरिक्त मथुरा में केशव भगवान का मन्दिर भी किसी रूप में विद्यमान था। मुगल सम्राट, अकबर, जहांगीर और शाहजहां के शासन काल में इस स्थान पर रामानन्दी गद्दी और विष्णु मन्दिर की विद्यमानता रही होगी। बाद में औरंगजेब के शासन काल में मथुरा मण्डल के अन्य देव स्थानों की भांति इसे भी नष्ट कर दिया गया होगा। अन्त में सं० १८६४ में राजा पटनीमल ने इस प्राचीन स्थान का पुनरुद्धार करते हुए यहां जो मन्दिर बनवाया था, वह अभी तक विद्यमान है, किन्तु इसकी दशा भी अच्छी नहीं है।

मथुरा के इन प्राचीन देव स्थानों की उन्नति में योग देने से जहां इन ऐतिहासिक स्थानों का महत्व स्थिर रहेगा, वहाँ राजा पटनीमल की कीर्ति भी स्थायी होगी।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सूर का वात्सल्य रस

लेखक श्री जयकुमार मुद्गल

प्रस्तावना

सूर के पूर्व भी वात्सल्य रस के कवि हुए और उनके पश्चात् भी। पर इस समस्त परम्परा में सूर का स्थान अन्यतम है। भारतीय साहित्य में ही नहीं, सूर के वात्सल्य का विश्व साहित्य में भी महत्व पूर्ण स्थान है। यह भाव भावुकता और पक्षपात नहीं, यथार्थ है। सूर से पूर्व संस्कृत के कवियों ने भी वात्सल्य वर्णन किया है। आदि कवि वाल्मीकि ने भी इसका स्पर्श किया है, पर उनका वात्सल्य वर्णन एकांगी है। केवल वियोग वात्सल्य को ही उन्होंने उभारा है। वस्तुत: वाल्मीकि करुणा के कवि हैं। इससे वात्सल्य भी स्नात है। महाभारत में भी यत्र तत्र वात्सल्य के चित्र हैं। पर यहाँ पुत्र कामना, (१) पुत्र-सुख, (२) का ही अधिक वर्णन हुआ है। सत्यवती अपने चिरवियुक्त पुत्र व्यास को स्तन्य से स्नात कर देती है। (३) इस प्रकार के शुद्ध वात्सल्य के चित्र अति विरल हैं। श्री मद्भागवत में भक्ति—मिश्रित वात्सल्य रस का श्रोत अजस्र है। (४) यहाँ पुत्र जन्मोत्सव, बालक्रीड़ा, बाल स्वभाव, मातृ मनोभाव आदि के सुन्दर चित्र मिलते हैं। वात्सल्य के संयोग और वियोग दोनों ही पद कवि कल्पना से सजीव हुए हैं। पर भागवतकार आलम्बन के अलौकिकत्व को याद करता रहता है। वाणभट्ट ने हर्ष के प्रति प्रभाकर वर्धन के वात्सल्य की संक्षिप्त पर मार्मिक अभिव्यक्ति की है। (५) कादम्बरी में अनेकत्र वात्सल्याभिव्यक्ति हुई है। इसमें विस्तार और रस-परिपाक दोनों ही उल्लेखनीय है। इसी प्रकार दण्डी-रचित दशकुमार-चरितम् में भी वात्सल्य के कुछ स्थल हैं। (६) कालिदास के प्राय: सभी ग्रन्थों में वात्सल्य-प्रेम का प्रदर्शन मिलता है। रघुवन्श में दिलीप का रघु के प्रति वात्सल्य के और रघु की शिशु क्रीड़ा के महत्वपूर्ण स्थल हैं। साथ ही पुत्रैषणा और पुत्र-सुख भी वर्णित हैं। शाकुन्तलम् में शकुन्तला के प्रति कण्व का पुत्री प्रेम तथा दुष्यन्त का सर्व दमन के प्रति वात्सल्य प्रेम सजीव है। भवभूति ने भी लव-कुश

---

(१) पाण्डु की पुत्र कामना, महाभारत, आदिपर्व, ११९।१५-१७; शर्मिष्ठा की पुत्र कामना। ८२।८-९

(२) शकुन्तलोपाख्यान' आदिपर्व, ७४।५३-५४।

(३) आदिपर्व, १०४।२५-२६

(४) दशम स्कंध, अध्याय ५-२८ बाललीला का वर्णन।

(५) हर्षचरित, ५।९९

(६) उच्छ्वास ४, ५

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

के प्रति रामके प्रेम की अभिव्यक्ति की है। (७)स्वयंभ आदि अपभ्रंश के कवियों ने भी वात्सल्य का वर्णन किया है, पर अत्यल्प। हिन्दी में चन्द्रवरदाई ने पृथ्वीराज के जन्मोत्सव, और उसकी बालछवि का वर्णन किया है। (८) जायसी ने रत्नसेन की माता का वियोग-वात्सल्य, तथा बावल का रण-क्षेत्र गमन इसी रस से भिगो दिया है। अन्य प्रेम गाथाकारों ने प्रबन्ध के आग्रह से वर्णन किया है। इस प्रकार वात्सल्य रस की परम्परा तो अक्षुण्ण है, पर सूर के वात्सल्य वर्णन में जो सर्वांगीर्णता और मार्मिकता है, वह सारी परम्परा में नहीं मिलती। इसका एक यह भी कारण हो सकता है कि सारी परम्परा में प्रबन्ध-गत वात्सल्य ही मिलता है। वात्सल्य की अनुभूतियों की गीतों के रूप में अभिव्यक्ति नहीं मिली। वास्तव में सूर ने वात्सल्य को रस-दशा तक पहुँचाया। सूर को वात्सल्य सम्राट कहना अत्युक्त नहीं है। अन्य अष्टछापी कवियों ने और तुलसी ने भी वात्सल्य पर लिखा। पर सूर की कोटि सर्वोच्च ही बनी रही।

१ वात्सल्य का रसत्व

संस्कृत के साहित्य-शास्त्र में वात्सल्य रस की दृष्टि से आचार्यों के तीन वर्ग मिलते हैं। कुछ ने वात्सल्य को रस रूप में स्वीकार ही नहीं किया, कुछ ने अन्य रसों में उसका अन्तर्भाव कर दिया और कुछ आचार्यों ने उसके रसत्व को स्वीकार कर लिया। भरत ने रस संख्या आठ ही मानी है। भरत के शान्त और वात्सल्य के उल्लेखों को प्रक्षिप्त माना जाता है। दन्डी, आनन्द वर्धन, मम्मट, जगन्नाथ, भानुदत्त ने वात्सल्य को रस सूची में स्थान नहीं दिया।

दामपत्य-रति के अन्तर्गत वात्सल्य, मैत्री, सौहार्द भक्ति आदि का समावेश नहीं हो सकता। इनके लिए कुछ आचार्यों ने 'प्रेयस' की कल्पना की। रूप्रत ने

प्रेयस नामक एक दसवां रस माना। (१) प्रेयस को वात्सल्य के पर्याय के रूप में माना गया है। 'प्रेयस' शब्द का उसी अर्थ में हरिभक्ति रसामृत सिंधु के भी प्रयोग मिलता है। उद्‌भट ने रसवद् अलङ्कार के साथ प्रेयस का कथन किया है। कोई भी भाव उसमें समाविष्ट हो सकता है। (२) भामह के अनुसार प्रेयस' का स्थायी भाव प्रीति है। इसकी अनुभूति दम्पत्य—प्रेम से पृथक हैं दन्डी ने भी इसको स्थायी प्रीति मानते हुए इसे रत्याजित

---

(७) उत्तर रामचरित ६।१३;६।२२

(८) पृथ्वीराज रासो, पहला समय

(१) वी० राघवन, दि नवम्बर आफ रसाज, पृ० १०७

(२) वही, पृ० १०७

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

शृंगार से भिन्न माना है। (३) दाम्पत्य प्रेम से पृथक माने जाने वाले प्रेयस, वात्सल्य, प्रीति और भक्ति (४) को भोज ने प्रेयस के अन्तर्गत ही रखा है। (५) दशरूपककार ने प्रीति और भक्ति का अन्तर्भाव क्रमशः हर्ष और उत्साह में माना है। (६) हेमचन्द्र के अनुसार वात्सल्य, स्नेह और भक्ति 'रति में ही अन्तर्भूत है। (७)उनके अनुसार वात्सल्य भाव मात्र है, स्वतन्त्र रस नहीं।

भोज ने वात्सल्य का किसी अन्य भाव या रस में अन्तर्भाव नहीं किया। वैसे उनकी दृष्टि में शृङ्गार ही बाल रस है। उन्होंने लिखा है कि शृङ्गार, वीर, करुण, अद्भुत, रौद्र, हास्य, वीभत्स, वत्सल, भयानक और शान्त नाम के दस रसों को विद्वान मानते हैं। पर हमारी दृष्टि से रस स्थिति के कारण शृंगार ही रस है। (८) वात्सल्य रस को पृथक मानने वाले आचार्यों की ओर इसी प्रकार का संकेत कृष्ण वर्मा ने भी किया है। (९) हरिपाल देव ने १३ स्वतन्त्र रस माने हैं, इनमें ११ वां रस वात्सल्य है। (११) कवि कर्ण पूर गोस्वामी ने वात्सल्य के रसत्व को स्वीकार है। (१२) विश्वनाथ ने स्पष्ट रूप से वात्सल्य को स्वतन्त्र रस कहा और इसके अङ्ग-उपांग की विस्तृत व्याख्या भी की। (१३) विश्वनाथ ने इस रस को मुनीन्द्र सम्मत बतलाया है। जिन्होंने उसे दसवाँ रस कहा है। भक्ति से सम्बधिन्त आचार्यों ने भक्ति के पाँच भाव माने हैं। कान्त, वत्सल, सख्य, दास्य, और शान्त। वत्सल भक्ति रस की स्वीकृति प्रायः सभी ने भक्ति के साथ की है। कहने की आवश्यकता नहीं की कि सूर के वात्सल्य की रूप रेखा भक्ति के आचार्यों के निरुपण से कुछ न कुछ प्रभावित है। वैसे उ की प्रेरणा का मुख्य श्रोत वल्लभाचार्य की बाल भावाकुल भक्ति पद्धति है।

---

(३) काव्यादर्श, २।२८

(४) दि नम्बर आफ रसीज, पृ० १०८-९

(५) सरस्वती कण्ठाभरण, ५।१६६

(६) दश रूपक ४।८४

(७) दि नम्बर आफ रसज, पृ० १११

(८) शृंगार प्रकाश १।६

(१०) १ मन्दारमरुद चम्पू, दि० नम्बर आफ रसज, पृ० १०९

(१२) वही, पृ० १०९

(१३) साहित्यदर्पण, ३।२५१-२५४

(१४) रूप गोस्वामी, हरि भक्ति रसामृत सिंधु ५।९५-९८; मधुसूदन सरस्वती, श्री भगवद् भक्ति रसायन, आदि।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

२. वात्सल्य तत्व निरूपण–

कवि कर्णपूर गोस्वामी के अनुसार इस रस का स्थायी भाव ममता है। मन्दार-चम्पूकारने करुणाको वात्सल्य का स्थायी भाव माना है। इसका स्थायी भाववात्सल्यता ही मानी जानी चाहिए। आश्रय दो हो सकते हैं। माता-पिता, गुरुजन, परिजन आदि। आलम्बन पुत्र, पुत्री, शिष्य, शिशु तथा अन्य अनुकम्पेय। उद्दीपन में शिशु के गुण चेष्टा तथा प्रसाधन आते है। प्राकृतिक उद्दीपनों में वे सभी वातावरण आ जाते हैं, जिसमें बच्चे के प्रति प्यार बढ़ता है। आलिंगन, स्पर्श, चुम्बन, सस्नेह देखना, पुलक, आनन्दाश्रु आदि अनुभव हैं। आठ सात्विक भावों के अतिरिक्त नवाँ सात्विक भ व स्तनस्राव भी माना गया है। आशङ्का, हर्ष, गर्व, आवेग, पुलक, स्मृति, विस्मय आदि संचारी है।

वात्सल्य के मुख्य रूप से दो भेद माने जा सकते हैं वात्सल्य भक्ति रस तथा सामान्य वात्सल्य रस। इसका सम्बन्ध रति से भी कुछ विद्वानों ने जोड़ा है। भक्ति रस से तो इसका सम्बन्ध है ही। प्रेम, कारुण्य,आकांक्षा वीर और हास्य का मेल भी इससे होता है।

मनो विज्ञान की दृष्टि से पुत्रैषणा या शिशु-रक्षा मनुष्य की मूल प्रवृत्तियों में आती है। इस मूल वृत्ति को मनो वैज्ञानिकों ने महत्व पूर्ण माना है। इसके मूल में किसी ने मानव मन का परोपकारी भाव माना है। कुछ ने शिशु के साहचर्य से आत्यंतिक आनन्द की पुनरावृत्ति को इसके महत्व का कारण माना है। वृद्धावस्था में अपत्य द्वारा की जाने वाली सेवा की कल्पना को ही कुछ मनः शास्त्री मुख्य स्थान देते हैं। वास्तव में अपत्य की अभिलाषा प्रत्येक दम्पति को होती है। आजीवन आविवाहित पुरुष स्त्रियों में भी यह भाव देखा जा सकता है। मानवेतर प्राणियों में भी इसकी स्थिति देखी जा सकती है।

वात्सल्य भाव हमको एक असामयिक आनन्द प्रदान करता है क्योंकि इसमें स्वार्थ या बदले की भावना की गन्ध नहीं होती। इससे आनन्द प्राप्त होने का एक और कारण है। अपनी सन्तान में मनुष्य अपनी आत्मा का नैरन्तर्य दीखता रहता है। अतः उसकी अमरैषणा भी कहा गया है। मनुष्य अपने अस्तित्व को अमर रखने की कामना करता है अपनी मृत्यु के अनंतर भी उसे अपनी सतान में अपने अस्तित्व का विस्तार देखता है। इसी से 'आत्मा वै जायते पुत्रः' तृप्त होती है। अपनी संततिके विकास में उसे अपना ही विकास दिखलाई देता है। पिता जिन महत्वाकांक्षाओं को अपने जीवन काल में पूर्ण नहीं कर सका था और अपूर्णता की पीड़ा का अनुभव कर रहा था उनकी पूर्ति अपने पुत्र में वह देखता है। वह स्वात्य प्रेम [नार-सिस्टिक लव] की स्थिति है। (२) इन कारणों के अतिरिक्त बच्चा अपने नैज गुणों के कारण भी वात्सल्य का पात्र है। उसकी अमायिकता, सरलता कोमलता आदि बरबस आकर्षित करने वाले गुण हैं। उसकी बोलचाल की मिठास में कौन नहीं रम जाता।

वात्सल्य भाव का आवेश स्त्री में अधिक माना जाता है। माता के रूप में उसका संसर्ग भी बालक के साथ अधिक होता है। मातृत्व नारी का सबसे अधिक गौरवमय

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अधिकार है। उससे वंचिता नारी एक कसक छुपाये रहती है। माता-पिता के वात्सल्य में प्रकृति का भी अभिप्राय सन्निहित है। इस भावके साथ सृष्टि और उसकी क्रमवद्धता सम्बद्ध है। इसीलिए सृष्टि के सूक्ष्मतम और आदि जीव अमीवा से ही इस भाव की उत्पत्ति है। अमीवा के स्वत: दा टुकड़े हो जाते हैं, एक नर दूसरा मादा फिर उनके संयोग से सृष्टि चलती है। वात्सल्य भावना का उन्नयन और विस्तार सामाजिक जीवन में भी महत्वपूर्ण हो जाता है। प्राणीमात्र तक सहृदयता प्रसृत हो जाती है। राजा में भी वात्सल्य के आदर्श की कल्पना की गई है। राजा संतितिवत प्रजा का पालन करे। संक्षेप में कहा जा सकता है कि वात्सल्य मानव मन की एक अत्यन्त बलवती आदि वृत्ति है। प्रकृति का सृष्टि अभिप्राय इसके साथ सम्बद्ध है। वैयक्तिक सीमाओं का अतिक्रमण करके एक व्यापक क्षेत्र में सक्रिय होने की शक्ति और सम्भावना से यह युक्त है।

३. हिन्दी भक्ति साहित्य और वात्सल्य रस

निर्गुण भक्त कवियों में वात्सल्य का महत्वपूर्ण स्थान नहीं है। वैसे कबीर ने अपने को भगवान का बालक माना है–

हरि जननी में बालक तेरा, काहे न औगुन बगसहु मेरा।
सुत अपराध करै दिने केते, जननी के चित रहै न तेते।
को करगहि केस करैं जो घाता, तऊ न हेत उतारै माता।
कहै कबीर एक बुद्ध विचारी, बालक दुखी-दुखी महतारी।

कबीर ने भगवान पर मात्र-सुलभ वात्सल्य के आश्रयत्व का आरोप किया है। स्वयं अपने को आलम्बन के रूप में रखा है। आगे चलकर यह सम्बन्ध भक्त-वात्सल्य

"This factor consists of the process whereby the Parent identifies himself with his child, as it were incorporates the child into his larger self and is thus able no take pleasure in the increasing powers of the child as if they were his own"

[Flugel. Psycho, A study of the family, p. 168]

2. "The parent who seeks in his child the achievement of his own frustrated ambitions is pressing inhis parental love a form of irresistible love."

(Danid Beres Psycho analysis and Soeial work, P. 71)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

में बदल जाता है। भक्त, शिशु रूप में नहीं, भक्त के रूप में भगवान की वत्सलता का अधिकारी बनता है।

सगुण भक्त कवियों में क्रम उलट गया। भगवान को शिशु रूप से भी आराधना की जा सकती है भक्त स्वयं वात्सल्य का आश्रय बन जाता है।

यद्यपि बंगाली वैष्णव आचार्यों ने वात्सल्य रस परक भक्ति का निरूपण किया (१) पर बंगाली वैष्णव कवियों में माधुर्य का प्राधान्य रहने से, वात्सल्य की कलात्मक परिणति न हो सकी। विद्यापति के काव्य में भी माधुर्य-गत संवेगों का ही आकलन मिलता है। प्रेम गाथाकारों ने प्रबन्ध की आवश्यकता से प्रेरित होकर वात्सल्य का चित्रण किया है। वस्तुत: उनका मुख्य रस शृंगार ही है। अष्टछाप के कवियों में सूर के पश्चात् परमानन्ददास का स्थान है। इन्होंने भी वात्सल्य रस से अपनी वाणी का शृंगार किया है। तुलसी ने राम और कृष्ण दोनों के वात्सल्य पर लिखा है। पर उनका मुख्य रस दास्य-भक्ति है। अत: वात्सल्य मुख्यत: प्रबन्ध की आवश्यकता के अनुसार ही हैं। इसमें रूप वर्णन का प्राधान्य है। हिन्दी के भक्ति साहित्य में सूर का स्थान इस दृष्टि से अन्यतम है।

४. सूर का वात्सल्य

४. (१) परिमाण—सूर ने वात्सल्य रस से आप्लावित ५८० पदों की रचना की है। परिमाण की दृष्टि से भी कोई कवि सूर से तुलनीय नहीं है। डा० श्री निवास शर्मा ने इन पदों का प्रसगों के अनुसार विभाजन इस प्रकार किया है —(२)

पुत्र जन्म उत्सव आनन्दोल्लास	१४४	पद
विभिन्न संस्कारों के अवसर पर सुखानुभूति	१०	पद
बाल छवि वर्णन	३५	पद
बाल स्वाभाव चित्रण	४९	पद
बाल क्रीड़ा चेष्टायें	७६	पद
उलाहने	८२	पद
मातृ हृदय	१९५	पद
वियोग वात्सल्य	८९	पद
	५८०	

इस तालिका के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि सूर के वात्सल्य का केन्द्र मातृ-हृदय है। वस्तुतः वात्सल्य में आश्रय का महत्वपूर्ण स्थान होता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मुस्लिमकाल में हिन्दुओं की स्थिति । एक अध्ययन

(लेखक श्री वृन्दावनदास, बी० ए० एल-एल० बी० मथुरा)

भारतवर्ष के इतिहास को दसवीं शताब्दी के आगे इतिहासकारों ने कालों में विभाजित कर दिया है। इन कालों के नाम जातियों के नामों पर रख दिये हैं। पठान काल, मुगलकाल तथा ब्रिटिश काल विशेषतया उल्लेखनीय है । संक्षित इतिहास की पुस्तकों में ऐसा प्रतीत होता है कि विदेशी कालों में हिन्दुओं की तो कोई स्थिति ही नहीं थी, उनका कोई राज्य न था, उन्होंने अपनी जाति में वीरों को जन्म ही न दिया था। ऐतिहासिक कालों के उपरोक्त नाम करण से एक जिज्ञासु के हृदय में अनेक प्रश्न उठते हैं। क्या दसवीं शताब्दी के बाद हिन्दू निर्बल हो गये थे अथवा दासत्व की बेड़ियों में जकड़े हुए थे ? क्या उनमें कोई स्वाभिमान अथवा जात्यभिमान शेष न रह गया था ? वे हिन्दू जो प्राचीन काल में अपनी मानसिक निधियों, दर्शन-शास्त्र एवं अपूर्व सस्कृति के लिये जगत्गुरू होने और विश्व का नेतृत्व करने का गौरव प्राप्त किये हुए थे इन कालों में क्या उनके वे मूल्य बिल्कुल लोप हो गये थे ? वे हिन्दू जिनके पूर्वज आर्य लोग थे और जिन्होंने मध्य एशिया से विशाल निष्क्रमण कर सम्पूर्ण भारत तथा सुदूरपूर्व और पश्चिम में अपनी विजय वैजयन्ती फहरा दी थी और अपने आर्ष ग्रन्थों से आज भी अपनी प्राचीन एवं अभूतपूर्व सभ्यता की समस्त विश्व पर धाक जमा रक्खी है क्या इन कालों में वे धराशायी हो गये थे ?

आज-कल के विद्यार्थी जिनका ज्ञान संक्षिप्त इतिहासों को पढ़ कर स्वभावतः सीमित होता है और जो इन विभाजित कालों में विदेशी प्रभुत्व ही देखते हैं हिन्दू उत्कर्ष अथवा हिन्दुओं की वास्तविक स्थिति से अनभिज्ञ रह जाते हैं। उनकी धारणा है कि हिन्दुस्तान करीब एक हजार वर्ष तक परतन्त्र रहा और वह काल हिन्दुओं की हीनता का बोधक है।

वास्तव में मुसलमानी काल में घटनाओं के क्रम ने हिन्दुओं की स्थिति को तिमिराच्छन्न कर दिया है। तथ्य तो यह है कि इस काल में भी उनकी स्थिति थी, वे अपना सामर्थ्य रखते थे. उनमें भी प्रतापी राजा हुए, उनमें अनेकों सन्त महात्मा हुए, हिन्दू धर्म का इस काल में अभ्युदय और पुनरुत्थान भी हुआ। स्थान स्थान पर अनेकों समय ऐसे भी आये जब हिन्दू ही स्थिति के नायक थे, उनके बिना मुस्लिम शासकों की गाड़ी न चलती थी। मुस्लिम शासकों ने हिन्दुओं से किसी प्रेम के वश नहीं अपनी जरूरत के लिए, अपने स्वार्थ के वश और अपनी सुरक्षा के लिए उनका सहयोग प्राप्त किया, उनको अपना परामर्शदाता, सेनापति और नेता चुना और अपनी स्थिति मजबूत की। जब जब मुस्लिम शासकों ने यह नीति बरती उनके राज्यों का विस्तार हुआ, हिन्दुओं का सम्मान और सहयोग प्राप्त करके ही वे निभ सके। कुछ कुशल शासकों ने उन्हे विशाल प्रदेशों पर शासन करने के अधिकार प्रदान कर शाही ओहदेदार बनाया और उनसे वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित किये। हिन्दुओं के सहयोग के आधार पर इस प्रकार के मुस्लिम शासक चक्रवर्ती हुए। ऐसे मुस्लिम शासकों के काल में वास्तविक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

शक्ति हिन्दुओं के हाथ में ही थी। उस काल में हिन्दू राजाओं ने मुस्लिम शासन के अन्तर्गत प्रदेशों में अनेकों धर्म स्थान और मन्दिरों का निर्माण करोड़ों रूपया व्यय करके कराया। अनेक सन्त महात्माओं ने मुस्लिम शासकों का सम्मान प्राप्त कर कला, साहित्य, और संगीत की अभूत पूर्व उन्नति की।

इसके विपरीत कुछ धर्मान्ध, मूर्ख, बर्बर और नृशंस मुस्लिम शासक ऐसे भी हुए जिन्होंने धार्मिक आधार पर हिन्दुओं पर अत्याचार किये, जज्रिया कर लगाया, मन्दिरों को ध्वस्त किया, उनकी सभ्यता और संस्कृति को नष्ट करने की चेष्टा की। इतिहास इस बात का साक्षी है कि ऐसे शासकों को अनेक विप्लवों और विद्रोहों का सामना करना पड़ा, उनका जीवन कभी निश्चिन्त और सुखमय नहीं रहा। उन्होंने अपने प्रमादवश ऐसी भयङ्कर स्थिति उत्पन्न करदी जिससे वे कभी न निकल पाये। अपनी मूर्खतावश उन्होंने न केवल अपनी वरन् अपने वंश की भी जड़ खोदली।

इसके अतिरिक्त भारत की पवित्र भूमि पर धर्मान्ध विधर्मियों के भी भीषण आक्रमण हुए। उन्होंने निरीह जनता पर बड़े भयङ्कर अत्याचार किये। सहस्त्रों मन्दिरों को तुड़वाया, हजारों हिन्दुओं का बध किया तथा अनेक हिन्दुओं को धर्म परिवर्तन करने पर बाध्य किया, असंख्यों की धन सम्पत्ति लूट कर लुटेरे भारत से चले गये। हिन्दू जाति ने ये सब प्रहार अपने विशाल वक्षस्थल पर सहन किये। उपरोक्तजघन्य कृत्योंसेआततायी आक्रामक उसकी संस्कृति और सभ्यता को नष्ट करने में विफल रहे। वीर हिन्दू जाति ने इन प्रहारों को सहन कर बार बार अपने आप को सम्हाला और यह सिद्ध कर दिया कि हिन्दूजाति एक प्राणवान् जीवित कौम हैं औरइस पृथ्वी पर सुरक्षित रहनेकी क्षमता रखती है।

वास्तव में हिन्दू जाति एक जीती जागती शक्ति प्रत्येक काल में थी, उसमें प्रतापी राजा हुए थे, उनकी विशाल सेनाएँ थीं और उनकी एक विशेष स्थिति सदैव रही थी। प्रत्येक काल में हिन्दू धर्म, सभ्यता और कला का विकास भी हुआ। हिन्दू जाति प्रत्येक काल में ऐसे सन्त, महात्मा, मनीषि, और कलाकरों को जन्म देती रही जिन्होंने न केवल अपनी जाति को वरन सारे देश को ऊँचा उठाया।

अब हम मुस्लिम काल में हिन्दुओं की ऐतिहासिक स्थिति का वर्णन घटना क्रम के अनुसार करेंगे। यद्यपि तथ्यों का घटाया बढ़ाया जाना सम्भव नहीं है तथापि उनको उस तिमिर से बाहर निकाल कर रखने की आश्यकता है जिसमें कि वे आवृत हैं।

भारत में मुसलमानों का सबसे पहिला आक्रमण सन् ७१२ ई० में सिन्ध प्रदेश पर मुहम्मद बिन कासिम के नेतृत्व में हुआ। ये लोग अरब के मुसलमान थे। उस समय सिन्ध में दाहिर नाम का ब्राह्मण राजा राज्य करता था। यद्यपि राजा ने बड़ी वीरता से मुसलमानी सेना का सामना किया परन्तु किसी अन्य भारतीय शक्ति की सहायता के बिना उसकी पराजय हो गई और रणक्षेत्र में ही मृत्यु भी। इसके कुछ काल बाद उसकी रानी ने १५००० सैनिकों को लेकर विदेशी आक्रमणकारियों से युद्ध किया परन्तु उसको भी अन्त में अन्य राजकीय वंश की स्त्रियों सहित अग्नि में प्रवेश करना पड़ा। राजा दाहिर के राज्य पर मुसलमानों का कब्जा हो गया। इस विजय के बाद मुसलमानों

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ने ब्राह्मणाबाद तथा अन्य इलाकों को भी जीतकर सम्पूर्ण सिन्ध प्रदेश पर आधिपत्य स्थापित कर लिया।

मुहम्मद बिन कासिम का शासन-काल हिन्दुओं के प्रति उदार था। उन्हें धार्मिक स्वतन्त्रता तो दी गई परन्तु जजिया कर देना पड़ा। मन्दिरों को कोई क्षति नहीं पहुंचाई गई और लोग धार्मिक अनुष्ठान आदि करने में किसी बन्धन का अनुभव नहीं करते थे।

मुसलमानों द्वारा सिंध की इस विजय को इतिहासकारों ने 'परिणाम-शून्य' की संज्ञा दी है। इसका प्रधान कारण यह था कि उत्तर तथा पूर्व में राजपूतों के बड़े-बड़े राज्य थे और दक्षिण में राष्ट्रकूटों का आधिपत्य था। जिस समय अर्थात् सन् ७१२ ई० सिन्ध को मुसलमानों ने जीता था उस समय प्रतिहार वंश के राजा बड़े शक्तिशाली थे। ये सब हिन्दू राजा सम्मिलित और पृथक् रूप से आक्रामक मुसलमानों से युद्ध करने को तत्पर थे और उनको खदेड़ देने की क्षमता रखते थे। ऐसी परिस्थति में अरब मुसलमान सिन्ध में स्थायी राज्य कायम न कर सके।

सिन्ध में मुसलमानी राज्य का एक महत्वपूर्ण प्रभाव हुआ। अरब के लोगों ने हिन्दू सभ्यता और संस्कृति के प्रति अत्यन्त रुचि प्रदर्शित की। मुसलमान आलिमों ने ब्राह्मण विद्वानों की सहायता से दर्शन, ज्योतिष, गणित और आयुर्वेद आदि प्राचीन ग्रन्थों का अध्ययन किया। संस्कृत भाषा के इन ग्रन्थों का अनुवाद अरबी भाषा में किया गया। मुसलमानोंने संस्कृत भाषा का ज्ञान प्राप्त किया और अरबी के ग्रन्थों का अनुवाद किया। हिन्दू वैद्यों को बगदाद भेजा गया और उन्होंने वहां के औषधालयों की देख-भाल की। अरब के मुसलमानों ने हिन्दुओं से शतरंज का खेल और एक से नौ तक के अङ्क सीखे। पीछे योरपवालों ने इन्हीं अङ्कों को अरब के लोगों से सीखा। किसी एक खलीफा ने एक हिन्दू वैद्य से अपनी चिकित्सा करा कर आरोग्य लाभ किया।

अरबों का प्रयत्न सिन्ध में एक प्रकार से असफल रहा और लगभग ३०० वर्ष तक वे न तो अपना विस्तार कर सके और न इतिहास में उनके किसी आक्रमण आदि का उल्लेख है। इस काल में सिंधु के बाहर सम्पूर्ण भारत में सुदृढ़ और शक्तिशाली कई हिन्दू राज्य थे जिनकी शक्ति और सत्ता के आगे विदेशियों का भारत पर आक्रमण करने का साहस न हुआ।

सन् ७०० ई० से १००० ई० तक भारतवर्ष में हिन्दू राजाओं का एक छत्र राज्य था। उनमें कई शक्तिशाली हिन्दू राज्य वंश हुए हैं।

प्रतिहार साम्राज्य :—आठवीं शताब्दी के मध्यकाल में वत्सराज (१८१५—३४) नामक प्रतिहार सम्राट ने समस्त उत्तरी भारत को तथा कन्नौज और बङ्गाल आदि राज्यों को जीत लिया। इस वंश में राजा भोज (८४०—९० ई०) बड़ा प्रतापी राजा हुआ है। इसने कन्नौज

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

को पुन: जीता और अपना साम्राज्य स्थापित किया जिसमें पंजाब, राजपूताना, मध्यभारत, गुजरात और संयुक्त प्रांत सम्मिलित थे। राजा भोज का नाम भारतीय जनश्रुति में अद्यावधि प्रसिद्ध है। उसके राज्य में ज्योतिष तथा साहित्य को प्रोत्साहन मिला और विद्वानों का समादर हुआ। उसने शिलापट्टों पर काव्य, अलङ्कार तथा ज्योतिष के ग्रन्थ खुदवाए और उनको विद्यालयों में रख दिया। करीब दो शताब्दियों तक प्रतिहार साम्राज्य अपने उत्कर्ष पर रहा, इसके बाद इसका पतन आरम्भ हुआ। जब इसका पतन हुआ तो इसके राज्य के टुकड़े-टुकड़े हो गए और उसके अनेक छोटे-छोटे राज्य बन गये। उनमें जैजाक भुक्ति के चन्देले, मालवा के परमार, दहल के कलचुरी, गुजरात के चालुक्य, शाकम्भरी के चौहान, कन्नौज के गरहवार तथा ग्वालियर के कच्छपघट बहुत प्रख्यात थे।

मुसलमानों के आक्रमण के पूर्व समस्त उत्तरी और दक्षिण भारत में हिन्दू राजाओं का राज्य था। ये राजा बड़े प्रतापी और शक्तिशाली थे। विस्तारभय से प्रस्तुत लेख में समस्त राज्य वंशों का वर्णन असम्भव है। वास्तव में यह वर्णन बहुत ही मनोहर है तथा इससे तत्कालीन हिन्दू गौरव का ज्ञान प्राप्त हो सकता है। कुछ इतिहासकारों ने उस काल के समस्त भारतीय राजाओं को 'राजपूत' के नाम से सम्बोधित किया है। वास्तव में कुछ राजा क्षत्रिय थे और कुछ राजपूत। राजपूत बड़े ही वीर होते थे।

राजपूतों ने हिन्दू शासन के आदर्श को अपने सामने रक्खा। शत्रु के सामने वे कभी पीछे नहीं हटते थे। अपने सम्मान तथा प्रतिष्ठा के लिए वे प्राणोत्सर्ग करने को तैयार रहते थे। राजपूतों के आदर्श उच्चकोटि के होते थे। विश्वासघात करना वे महान् पाप समझते थे। शरणागत की रक्षा अपनी जान पर खेल कर भी वे करते थे। मिथ्या भाषण, धोखाधड़ी, नीचतापूर्ण कार्य आदि उनकी प्रकृति के ही प्रतिकूल थे। कभी-कभी इन गुणों के कारण उनको घोर विपत्तियों का सामना करना पड़ता था। राजपूतों के हृदय में स्त्रियों का सम्मान होता था। स्त्रियां भी पुरुषों की तरह वीर होती थीं। कुल कान के लिए और भारतीय मर्यादा की रक्षार्थ वे जौहर किया करती थीं। शत्रु द्वारा अपमानित होने के पूर्व ही वे प्राणोत्सर्ग कर देती थीं। जौहर उस समय किया जाता था जब शत्रु से बचाव का कोई मार्ग न रह जाता था। राजपूतों को युद्ध द्वारा कीर्ति प्राप्त करने की बड़ी अभिलाषा रहती थी।

उस समय देश की आर्थिक दशा बहुत अच्छी थी। देश धनधान्य, सोने, चाँदी और बहुमूल्य रत्नों से भरा पूरा था। व्यवसाय विदेशों से भी होता था। व्यापार की खूब उन्नति थी। जनता समृद्धिशाली थी। इस देश में सोने, चाँदी का इतना बाहुल्य था कि महमूद गजनवी को धर्मोन्माद के साथ लूट-मार का भी एक विशेष आकर्षण भारत पर आक्रमण करने का था। उसका अनेकों बार अगणित ऊँटों आदि वाहनों पर यहाँ से अतुल राशि का ले

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

जाना इस बात का द्योतक है कि यह देश बहुत धनी था। महमूद ने सन् १००० ई० से १०२६ ई० तक २६ वर्षों में भारत पर १७ बार आक्रमण किया। उसने यहाँ अपना शासन स्थापित करने की कोशिश नहीं की वरन् उस अतुल धनराशि से जो वह यहां से लूट कर ले गया उसने गजनी मे अपने साम्राज्य को बढ़ाने की चेष्टा की।

सन् ६०० ई० से १००० ई० तक काल में बनवाये हुए राजपूतों के मन्दिर वास्तु कला के अच्छे नमूने हैं। उड़ीसा में भुवनेश्वर का मन्दिर, बुन्देलखण्ड में खजुराहो का मन्दिर और आबू पर्वत पर जैन मन्दिर प्रसिद्ध निर्माण है। मल्लपुरम् का रथ मन्दिर, कांची का पल्लव मन्दिर, ऐलोरा का कैलाश मन्दिर और राजराज चोल का निर्माण कराया हुआ तन्जोर का मन्दिर दर्शनीय हैं। चालुक्यों ने भी मन्दिर बनबाए। होयसल वन्श के राजा विष्णुवर्द्धन ने वेलूर का मन्दिर बनवाया। प्राचीन द्वारासमुद्र का मन्दिर चालुक्यों की वास्तु-कला का सर्वोत्कृष्ट उदाहरण है। उस काल में देश भर में असंख्य मन्दिर बने हुए थे और इसी से यह सिद्ध होता है कि देश में धार्मिक और सांस्कृतिक प्रवृत्तियां उस काल में अपने उत्कर्ष पर थीं।

भारतीय लोग जहाज बनाने की कला से भी परिचित थे। आदि काल से ही वेसमुद्री मार्ग से बाहर के देशों के साथ वाणिज्य व्यवसाय करते थे। हुआनच्यांग ने लिखा है कि गुजरात और दक्षिण पश्चिम के लोग तो जहाज का व्यापार करके अपनी जीविकोपार्जन करते थे। हिन्दुओं ने औपनिवेशिक साम्राज्य की प्रक्रिया का भी कभी स्थगन नहीं किया। भारत के चारों ओर अनेक द्वीपद्वीपान्तरों में उनका अधिकार था। इन उपनिवेशों में भी अनेक देव-मन्दिरों का निर्माण किया गया। बहुत से प्राचीन मन्दिर आजतक विद्यमान हैं।

राजपूत राजा लोग बड़े विद्या प्रेमी होते थे। वे विद्वानों को आश्रय देते थे। राज्यों में सब प्रकार की विद्याओं का अध्ययन होता था। काव्य, गीत, नाटक, उपन्यास, इतिहास, राजनीति, गणित, ज्योतिष, आयुर्वेद आदि अनेक विषयों पर ग्रन्थों की रचना हुई। काव्य ग्रन्थों में शिशुपाल वध, भट्टिकाव्य तथा नैषधचरित्र महत्वपूर्ण हैं, ये क्रमशः माघ, भर्तृहरि तथा श्रीहर्ष द्वारा रचित हैं। जयदेव गीत काव्य का सर्वोच्च कवि है जिसने 'गीत-गोविन्द' काव्यगीत लिखा है नाटककार भवभूति भी इसी काल में हुआ था। वह कन्नौज के राजा यशोवर्मन् के दरबार में रहता था। भवभूति ने उत्तर रामचरित, मालतीमाधव तथा महावीर चरित नाम के तीन नाटकों की रचना की। इस कवि ने प्रकृति का बड़ा सुन्दर वर्णन किया है। कवि राजशेखर जिसने कर्पूर मञ्जरी की रचना की यह कन्नौज के राजाओं के यहाँ रहता था। भारतीय साहित्य में इस सुखांत नाटक का स्थान बहुत उच्च है। प्रबोधचन्द्रोदय नाम का नाटक जो वैष्णव धर्म की स्तुति में है कृष्ण मिश्र द्वारा लिखा गया था।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पञ्चतन्त्र नाम का ग्रन्थ भी इसी काल में रचा गया। इसमें लौकिक ज्ञान उपार्जनार्थ अनेकों रोचक कथायें हैं इसी ग्रन्थ के आधार पर लोक प्रसिद्ध हितोपदेश की रचना हुई। कथा सरिसागर एक अन्य ग्रन्थ है। जिसमें अनेक कथायें लोकरंजनार्थ विद्यमान हैं। कल्हण द्वारा रचित तरङ्गिणी में कश्मीर के इतिहास का वर्णन है। धर्मशास्त्र का सबसे प्रसिद्ध भाष्यकार विज्ञानेश्वर इसी काल में हुआ। इसके द्वारा लिखे हुए भाष्य का नाम मिताक्षरा है। प्रख्यात ज्योतिषी भाष्यकराचार्य तथा चिकित्सक वाग्भट्ट भी इसी काल में हुए।

(क्रमशः)

राष्ट्र भाषा हिन्दी

नूपुर सी झनकारें मधुरालो मलयाली, पायलसी तामिल औ तेलूगू कमाल की।
कोंकनी की कोंधनी मराठी मालवी की मंजु, राजधानी राजत रंगीली गलमाल की।।
उरिया असामी औ बिहारी गुजराती वंद, वंगरी औ बाजुबन्द बंगला बंगाल की।
पंजाबी पाटिया औ कसमीरी करनफूल, हिन्दी सिरविन्दी सोहै भारती के भाल की।

\+ \+ \+ \+

सूरपद गाई तुलसी मानस बहाई जो, केशव कविताई तें कीरति विस्तारी है।
कविरा बुझाई रहिमा दोहन दुहाई जो, संतगुरू नानक ने बानी में उचारी है।।
नरसी सरसाई नागरि मीरा मनभाई जो, सेनापति सूदन औ बिहारी सिनगारी है।
गांधी राजेन्द्र भावे लाजपत सुभाष भाखी, भाषन में राष्ट्र भाषा हिन्दी हमारी है।।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तीर्थमयी पुण्यपुरी मथुरा

लेखक ज्यो० श्री राधेश्याम द्विवेदी

अहो मधुपुरी धन्या वैकुण्ठाग्रे गरीयसी ।
विना कृष्णप्रसादेन क्षण मेको न तिष्ठति ।।

भगवान श्री कृष्ण की जन्म भूमि व्रजराजधानी पुण्यपुरी मथुरा देश की मोक्षदा सप्त महापुरियों में गिनी गई है । पुराणों में मथुरा की बड़ी महिमा कही गई है । विष्णु पुराण में 'सर्व तीर्थ मयीम् पुण्याम् मथुरा देव निर्मिताम्' कहकर इसकी महिमा गाई गई है । वास्तव में कलिन्द कन्यिका तरणि तनूजा श्री यमुना नदी के तट पर बसी हुई यह नगरी आज भी भारत वासियों के आकर्षण का केन्द्र हैं । चातुर्मास में तो इसकी शोभा अनुपम हो जाती है । पुराणों में कहा गया है कि:—

काश्यादि पुर्यो यदि सन्ति लोके,
तासां तु मध्ये मथुरैव धन्या ।
या जन्म मौजी—व्रत मृत्यु दाहैं,
नृणां चतुर्धा विदधाति मुक्तिम् ।

इस प्रकार मथुरा 'चतुर्धा मुक्ति दायिनी' पुरी है और यहां भगवान श्री कृष्ण सदा निवास करते हैं । जैसा कि कहा है:--

राजधानी ततः सा भूत्सर्व यादव भूभुजाम्,
मथुरा भगवान यत्र, नित्यं सन्निहितो हरि ।
—श्री मद भागवत

भगवान पूर्ण पुरुषोत्तम के सान्निध्य के अटल विश्वास के कारण ही सतयुग से अब तक ब्रह्मर्षि और राजर्षियों ने, सिद्ध सन्त औरमहात्माओं के, धर्माचार्यों ने तथा चक्रवर्ती धर्मज्ञ राजाओं ने तथा भगवतभक्तों ने यह नगरी अपनी तपोभूमि बनाई है । स्वायम्भुव मनु अंगिरा गौतम आदि सप्त ऋषि व्यास, बलि, अम्बरीष, ध्रुव, आदि भक्त जिन्होंने कालिन्दी के कूल पर महान तपस्या कर मुक्ति प्राप्त की थी यहाँ उनकी स्मृति में यमुना के तट पर अनेक पुण्य पवित्र तीर्थ रूप घाटों का धर्मानुयायियों ने निर्माण कराया है । मथुरा के ये तीर्थ रूप घाटों की पुराणों में महिमा बखानी गई है । ये घाट युग-युग से पवित्रतम माने गए हैं जहां

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्थानीय एवं देश की जनता आकर श्रद्धा पूर्वक स्नान आचमनादि कर अपने को कृत कृत्य मानती है। प्रस्तुत लेख में मथुरा के इन पवित्र तीर्थमय घाटों का ही दिग्दर्शन कराना है।

विश्राम घाट

मथुरा में विश्राम घाट ही प्रधान घाट है या कहिए तीर्थ है। यहाँ समस्त तीर्थों का संगम है। विश्राम घाट से उत्तर की ओर प्रमुख १२ घाट हैं और दक्षिण की ओर १२ घाट हैं, जो उत्तर कोटि और दक्षिण कोटि के घाट कहे जाते हैं। पुराणों और जनश्रुति के अनुसार यहां भगवान श्री कृष्ण ने दैत्य राज कंस को मारकर विश्राम किया था। मृत्यु के पश्चात ध्रुव क्षेत्र पर ले जाने वाले शवों को यहां विश्राम दिया जाता है। आज विश्राम घाट तीर्थ की दृष्टि से तथा स्थापत्य कला की दृष्टि से तथा नगर के मध्य की स्थिति होने से यह मथुरा नगर की शोभा है और मुमुक्षु जनों के लिए तीर्थ है। देशी और विदेशों सभी इस पवित्र तम कला पूर्ण बने हुए घाट को देखते और अपनी श्रद्धांजली अर्पण करते हैं। यहां नित्य सायं प्रात: श्री यमुनाजी की शोभनीय अपूर्व आरती होती है। अनेक भारतीय भूपतियों ने यहां तुलादान किए हैं उनकी स्मृति में यहाँ संगमरमर और पाषाण की सुन्दर कलात्मक तुलायें बनी हुई हैं। प्रसिद्ध दानवीर ओरछानरेश वीरसिंहदेव यहां ८१ मन सोने से तुले थे और वह सुवर्ण वृज मण्डल के ब्राह्मणों को दान दे दिया था। काशी नरेश ने १९४९ वि० में ३ मन सोने से तुल कर यहाँ दान दिया था। इसी प्रकार जयपुर नरेश सवाई मानसिंह जी तथा महाराणा उदयपुर तथा रीवा नरेश ने भी तुल कर स्वर्ण दान दिया था और तुलायें बनवाई थी। उदयपुर नरेश वाली तुला टूट गई है। तुलाओं के बीच में संगमरमर का एक चबूतरा है जिस पर खड़े होकर यहाँ के माथुर चतुर्वेदी ब्राह्मण श्रीयमुनाजी की सायं: प्रात: आरती करते हैं जो बड़ी भावना पूर्ण और दर्शनीय होती है,घाट पर बीच में भगवानकृष्ण के मुकुट और चरणों का मन्दिर तथा कृष्ण बल्देव, राधा दामोदर, अन्नपूर्णा, विश्वनाथ, हनुमान, धर्मराज एवं गोवर्धननाथ के अन्य मन्दिर हैं। चैत सुदी ६ यमुना जी के जन्म दिवस पर यहाँ फूल डोल होते हैं और मथुरा के संगीतज्ञ अपना गायन सुना हैं।

कार्तिक शुक्ला २ को श्री यमुना स्नान का अपूर्व जमघट यहाँ होता है। जिसमें समस्त भारत के यात्री गण अपनी बहनों के साथ यहां आते हैं और साथ-साथ स्नान करते हैं। कार्तिक शुक्ला १० वीं को कंस वध कर श्री कृष्ण और बलराम सखाओं सहित विश्राम लेने आज भी यहां आते हैं। इस प्रकार से धार्मिक और पौराणिक दृष्टि से इसकी बड़ी महिमा है। जैसा कि कहा है:—

गंगाया दश गुणं पुन्यं, यत्र केशी निपा तत:।
केश्या दश गुणं पुन्यं, यत्र विश्रामितो हरि;॥

विश्राम घाट से उत्तर की ओर उत्तर कोटि के ये १२ घाट हैं:—

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

(१) अविमुक्त घाट—यहाँ श्रीमदवल्लभाचार्य जी ने श्री मद्भागवत की सप्ताह पारायण की तथा यमुनाष्टक गान किया और यहीं से अपनी व्रजवनयात्रा प्रारम्भ की।

(२) मणिकर्णिका--काशी के मणिकर्णिका तीर्थ के समान यहां भी श्री यमुनाजी में मणिकर्णिका सरोवर का संगम है और तट पर काशीविश्वनाथ का मंदिर है।

(३) असिकुण्डा—जिसे आजकल असकुन्डा घाट कहते हैं। पौराणिक महत्व का घाट है। यहां भगवान बाराह ने यहां के द्विजों की रक्षार्थ उनकी पुकार पर अपनी असित्र (तलवार) स्थापना की थी। समीप में ही आदि वाराह का मन्दिर है। आजकल यहां हनुमान जी तथा गणेश जी के दो बड़े मन्दिर हैं।

(४ नव मंजक—यहां निम्बार्क सम्प्रदाय का मन्दिर था। जिसे यवनकाल के उलग खाँ ने तोड़ा था।

५) संयमन—जिसे आजकल स्वामी घाट कहते हैं। यहाँ स्वायम्भुव मनु का आश्रम स्थान था।

(६) घंटा वर्ष कण किंवा धारापतन—जहाँ कथित कंस के किले से एक धारा श्री यमुना जी में गिरती थी।

(७) सोमतीर्थ--जिसे गऊगाट कहते हैं। यहाँ उपमन्यु ऋषि का आश्रम था।

(८) कृष्ण गंगा—यहां भगवान कृष्ण द्वैपायन वेद व्यास मुनि का आश्रम तथा तपोभूमि थी और यहीं महर्षि वेद व्यास ने अनेक पुराणों की रचना की। जैसा कि लिखा है।

> शृणु चान्यद्वरारोहे, कृष्ण गंगा समुदभवम्।
> यमुना स्रोतसि स्नात्वा, कृष्ण द्वैपायनो मुनिः॥
> सोम वैकुन्ठयोमध्ये कृष्ण गगेति कथ्यते।
> तत्रा तप्य त्रतो व्यासो मथुरायाँ स्थितोऽमलः॥

यहां कालिन्दी गगा और यमुना का संगम था तथा व्यास जी की इष्ट रूपा अष्टादश-भुजा देवी तथा कलिन्जेश्वर महादेव के मन्दिर भी है।

(९) वैकुण्ठ घाट —यहा बैकुण्ठ नाथ महादेव का मन्दिर है और यहां यमुना में स्नान करने से वैकुण्ठ प्राप्ति का फल कहा गया है।

(१०) चक्र तीर्थ घाट—यहां अम्बरीष राजा की रक्षा के लिए भगवान ने अपने चक्र को स्थापित किया था। पास में ही अम्बरीष टीला भी विद्यमान हैं। जहां राजा अम्बरीष ने तपस्या की थी।

(११ आंगीरम—यहां अगिरा ऋषि की तपस्थली और आश्रम था।

(१२) दशाश्वमेघ घाट—जहां स्नान करने से दशाश्वमेघ का फल होता था।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

(१३) गोकर्ण—इसे गोकर्ण घाट कहते हैं समीप में ही गोकर्णेश्वर महादेव का मन्दिर है और यहां महर्षि गौतम का आश्रम था और उन्होंने तपस्या की थी।

(१४) गणेशतीर्थ—यहां गणेश टीले पर प्राचीन गणपति का मन्दिर है। माघ कृष्ण चतुर्थी (सङ्कट चतुर्थी) को यहां गणेश जी का मेला होता है।

जिस प्रकार विश्राम घाट के उत्तर कोटि में ये १४ घाट हैं। उसी प्रकार दक्षिण कोटि में भी इतने भी तीर्थ मय घाट हैं। जिनके नाम निम्नलिखित हैं—

(१) गुह्यतीर्थ—यहाँ सती का बुर्ज ऐतिहासिक स्तम्भ है।

(२) योगमाया घाट—समीप में ही योगमाया [चर्चिका देवी] का मन्दिर है। यहां कंस ने योग मामा को पछाड़ने का प्रयत्न किया था।

(३) प्रयाग तीर्थ-जहां प्रयाग राज स्थित है, समीप में ही वेणीमाधव का मन्दिर हैं।

(४) श्याम घाट—अष्टछाप के प्रसिद्ध कवि छीतस्वामी के इष्टदेव श्यामा-श्याम का मन्दिर है व उन्हीं के नाम पर घाट है।

(५) राम घाट—यहां रामेश्वर मू तीर्थ है।

(६) कनखल तीर्थ—यहाँ कनखल तीर्थ का निवास स्थान है।

(७) डंडी घाट—डंडी जी का घाट बतलाया जाता है।

(८ तिंदुक तीर्थ—यह आजकल बङ्गाली घाट कहा जाता है।

(९) सूर्य घाट—यहाँ साम्ब ने तपस्या की थी।

(१०) ध्रुव तीर्थ—नामानुसार यह ध्रुव जी का तीर्थ है। यहाँ श्मशान भी है।

(११) बटु स्वामी तीर्थ—यह भगवान बामन के नाम पर बनवाया गया है।

(१२) मोक्ष तीर्थ—नामानुसार इसके द्वारा मोक्ष की प्राप्ति होती है।

(१३) सप्त ऋषि घाट—यहां पर सप्त ऋषियों की मुक्ति हुई थी।

(१४) रावण कोटि घाट—इस घाट पर रावण ने सिद्धि प्राप्त की थी।

इस प्रकार मथुरा पुरी 'तीर्थमयी पुन्याम्' के अनुसार पवित्र तीर्थ मयी नगरी है। ज्ञात हुआ है कि हमारी उत्तर प्रदेश सरकार मथुरा के इन घाटों को सुन्दर और आकर्षक बनाने के लिए १३ लाख रुपया खर्च करना चाहती है। इन घाटों में से १५-२० घाटों पर अर्थात् नये पुल से लेकर चक्रतीर्थ या गोकर्ण तक के घाटों पर १५-२० हजार रुपया न व्यय कर केवल ३ लाख भी व्यय कर दिया जाय और उनका प्राचीन महत्व प्रत्येक घाट पर पत्थर पर अङ्कित करा दिया जाय तो निश्चय ही मथुरा के विश्राम घाट सहित ये घाट सुन्दर, आकर्षक दर्शनीय एवं सुविधाजनक हो जायेंगे। इसके साथ ही मथुरा नगर की शोभा वृद्धि से नागरिक एवं सैलानी दृष्टि से भी इस नगरी का महत्व बढ़ जायगा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ब्रज लोक जीवन में हास्य

लेखक डा० बरसाने लाल चतुर्वेदी

ब्रज श्री कृष्ण का प्रदेश है। यहाँ सदा मस्ती छाई रहती है। ब्रज वासियों के जीवन में हास्य का प्रचुर रूप में समावेश है। कृष्ण के जीवन से सम्बन्धित झाँकियाँ रास के रूप में दिखाई जाती हैं। मनसुखा श्री कृष्ण के सखा के रूप में अभिनय करते हैं। उनका चरित्र ही हास्यमय है। ब्रज लोक जीवन के हास्य व्यंग का मनसुखा प्रतीक है। ब्रज के लोक गीतों में यहाँ के बिखरे हुए हास्य की झाँकियां बराबर मिलती हैं। सबसे पहले हम बालक के जन्म से प्रारम्भ करते हैं। बच्चे को जन्म देने वाली मां को ब्रज में 'जच्चा' कहते हैं। प्रसव उपरांत उसे नाना प्रकार के पौष्टिक पदार्थ खिलाये जाते हैं। उसकी सहेलियाँ जिन्हें उसे सब व्यंजन तैयार करके देने पड़ते हैं, उसके बारे में मजाक करती हुई गाती हैं।

जच्चा मेरी भोरी भारी रे।
स्यांपे मारि बगल में सोवे, बीछी धरि सिरहाने,
जच्चा मेरी मच्छर से डरपी रे।
चारि चरस पानी के पीवै, नौ बोतल सरबत की पी गई,
जच्चा मेरी पीनौं न जानैं रे।१।
चारि कनस्तर घी के खाइ गई, द्वै बोरी मेवारी,
जच्वा मेरी खानौं न जानैं रे। २।
सासु ननद के लेहगा फारे, बड़ी जिठानी की फरिया,
जच्चा मेरी लड़नौं न जानैं रे।
जच्चा मेरी कछु न जाने रे, जच्चा मेरी भोरी भारी रे।

देखा आपने, चार कनस्तर घी के और दो बोरी मेवा खाने के उपरान्त भी जच्चा यह कहती है कि उस पर तो खाना नहीं आता। बच्चे को जब जन्म लिए छै दिन व्यतीत हो जाते हैं तो उसकी 'छठी' की रस्म सम्पन्न की जाती है। इस गीत को कठुला कहते हैं। घर की स्त्रियां बच्चे की नानी, चाची आदि ननसाल वालों को आलम्बन बनाकर नाना प्रकार की प्रेममयी हास्योक्तियां कहती हैं——

लाला की नानी आवेगी, दरबज्जो बाँस गढ़ावेगी, जि थेई थेई नाचेगी।
जि कौड़ी कौड़ी जोरेगी, लाला को छोछक लावेगी ॥
लाला की मांई आवेगी, अजुध्याजी में सेज बिछावेगी ॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बूढ़े-बारेनु मोहैगी, जब रोक रुपैया लावैगी, लाला कूँ कठुला गढ़ावैगी।
लाला को मामा आवैगो।
भैना कूँ सौरि भरावैगो, लाला कूँ टोपा भरावैगो ।।

विवाह के अवसर पर दूल्हा को उसके ससुराल में भांवरों के समय दूध और चावल खिलाये जाते हैं। उस समय ससुराल की स्त्रियां गाती हैं। जिनमें दूल्हे को हास्य का आलम्बन बनाया जाता है और उसकी लड़की की प्रशंसा की जाती है। इस रस्म को 'दूधा बाती' कहते हैं। वे कहती हैं दूल्हा तो उनमें कपास बीनने वाला है। हमारी लड़की महलों में रहने वाली है और उसका रंग गोरा है। बहुत ही निर्मल हास्य की अवतारणा है--

खा मेरे दुलहा घीम्रा-बाती।
भूँखी कौ जायौरे लप-लप लै गयौ ।।
अघांनी की जाई रे, जोरति जांति रे ।।
बँन-बीनत जामौरे, कारो खेंकरो।
मेरी मरमैंन जाई रे, गोरी दमदमी ।।
बन-ओटतु जायौरी कि छीमत गिरि-परयौ ।।
महलँन, बेटी री जाई, री कि नच कूदनी ।।

ब्रज में देवी की बहुत मान्यता है। कितने ही स्थानों में देवियों की जात करने ब्रज के लोग जाते हैं। उस समय घर में स्त्रियां गीत गाती हैं। एक गीत का बहुत ही हास्यमय भाव है। एक क्वारी कन्या अपने होने वाले पति को सन्देश भिजवाती है कि वो उसके भरोसे न रहे, दूसरा विवाह करले क्योंकि उस पर घर का आटा पीसना और खाना बनाना बिल्कुल नहीं आता है। यही नहीं मगर खाना कोई भी और बना भी दे तो रानी जी परोस भी नहीं सकती।

करि दूसरो ब्याहु लँगुरिया, मेरे भरोसें मत रहिए।
मोइ लीपिन न आवै लीपनों और काढ़ि न आवै खूँट,
लंगुरिया मेरे भरोसें मति रहिए।
मोइ पीसि न आवे पीसनों और डारिन आवै कोरु।
मोइ रांधि न आवै रांधनों और मोइ परिसि न आवै थारु,
लँगुरियाँ मेरे भरोसें मति रहिए।

राधा कृष्ण के प्रेम सम्बन्धी गीतों में शृंगार के साथ हास्य का मधुर मिश्रण मिलता है। श्री कृष्ण को एक सखी राधिका का सन्देश देती है कि यदि तुम्हें राधिका से

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मिलना है तो इन सुगम मार्गों से आ जाना। बुलाने का निमन्त्रण भी है किन्तु साथ में शर्त यह है कि कृष्ण की गरज हो तो आवें। उन्हें स्वयं का कोई भी आग्रह नहीं है और नहीं बुला भी रही हैं। यही हास्य की उदभावना करता है।

कान्हा बरसाने में आइ जइयो''बुलाइ गई राधा प्यारी।
जो कान्हा, तोइ गैल न पावै, सिडयन-सिडयन चढ़ि अइयौ।
बुलाइ गई राधा प्यारी। बुलाइ गई राधा प्यारी।।
पतरी-पतरी पोइ यें फुलकियाँ, गरज परै तो जैं जइयौ।
बुलाइ गई राधा प्यारी।।
जो कान्हा तोइ गैल न पावै, खीर में है कें आइ जईयौ।
बुलाइ गई राधा प्यारी।
सोने कौ लोटा गंगा-जल-पानी, गरज परैं तौ पी जइयौ।
बुलाइ गई राधा प्यारी। बुलाइ गई राधा प्यारी।।

कृष्ण गोपियों से मिलना चाहते हैं। कैसे मिलें? वैद्यराज का रूप धारण करते हैं और गली गली में रोगियों को देखने के लिए चक्कर लगाते हैं। राधा अपनी नबज दिखाती है। तो कहते हैं। 'तुम्हें सर्दी-गर्मी दोनों ही हो गई हैं।' क्या बढ़िया निदान किया रोग का।

बनि गयो वैद आप बनवारी।
गली-गलीन में कान्हा डोले, निरखत डोले नारी, बनि गयौ।।
इत्तें आई कुँमरि राधिका, लै देखो नबज हमारी, बनि गयौ।।
सरद-गरम मौत भई तिहारैं भारी, बनि गयौ।।
एक जड़ी तोई ऐसी री दूँगौं, मिटि जाइ अजक तिहारी, बनि गयौ।
कानन कुण्डल सिर पै मुकुट हो, बन्सी की छवि न्यारी, बनि गयौ।।

फूहड़ स्त्रियां कहां नहीं होती? ब्रज में भी होती है। ऐसी स्त्रियों को अपना ही होश नहीं रहता। वे किसी भी काम को ढङ्ग से नहीं कर पातीं। जेठ भैंस दुहने गए हैं वो घर में आवाज दे रही है। ससुर कचहरी गये हैं और वो उन्हें घर में पुकार रही है। आटा गौंदने बैठी तो उसमें इतना पानी डाल दिया कि वह कीच के समान हो गया। एक फूहड़ स्त्री का चित्रण सुनिए—

फूहरि पीसी पीसनी, मेरी रावरिया, जैसो गिरारे कौ रेतु मेरी भली रावरिया।
फूहरि छानें छांननों मेरी रावरिया, जैसो गिरारे कौ रेतु, भली मेरी रावरिया।
फूहरि माड़ें माँडनों मेरी रावरिया, जैसी भादों की कीच, री मेरी भली रावरिया।
फूहरि पदौ पैंदनों मेरी रावलिया, जैसो कुम्हार कौ चाक, री मेरी भली रावरिया।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पँहली गगरी फाँसती मेरी रावरिया, सरकि परी वह चन्द, भली मेरी रावरिया।
ससुरई-ससुर पुकारतो मेरी रावरिया, ससुर कचैहरी बीच, भली मेरी रावरिया।
जेठुई जेठ पुकारती मेरी रावरिया, जेठ दुहत ऐं भैंसि, भली मेरी रावरिया।
दिवरुई दिवरु पुकारती मेरी रावरिया, देवरु से गेंद, भली मेरी रावरिया ।।

घर में बहू आती है तब उसके बराबर की सहेलियाँ और ननदें इत्यादि हँसी करती हैं। इस गीत में बहू की सास और ननद आपस की बात-चीत में उसका मजाक बनाती हैं। सुनिए—

माँ माँ मैया कहां ब्याहे परेबरिया, बेटा, दिल्ली आगरे ब्याहे, परेबरिया।
माँ भावी कैसी आई परेबरिया. बेटा का कउआ ऊ तें कारी आई, परेबरिया ।।
माँ भाभी कौ मोंहड़ौ कैसौ, परेबरिया।
नांक-चनाँ-सी, म्हों बटुआ-सौ, घूँघट में मन लाई रे परेबरिया।
थोरौ खांनी, बहुत कमाँनी, जे जगु जीती आई परेबरिया ।।

मुरलिया बोल उठी ?

कविरत्न बालमुकुन्द चतुर्वेदी, मथुरा

(१)

मंगल करन चित्त चिन्ता की हरन हारी,
आनन्द उदधि रस साधना बिहारी की।
योगिन की धारना समाधि तपसीजन की,
प्रेमिन की प्रेम धुजा छत्र गिरिधारी की ।।
मुदित मुकुन्द व्रज मण्डल की लीला नटी,
सूत्रधार रस की उछाह प्रान प्यारी की।
आगम निगम सब हीते कछु ऊँची,
एसी बंदौ विश्वमोहिनी मुरलिया मुरारीकी ।।

(२)

चेतन भयी है जो अचेतन कहात रही,
कानन पै आयि आयि भेद बतरावे है।
कहै है कहानी रससानी श्याम सुन्दर की,
गोपिन मरोर उपहास प्रगटावै है ।।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मुदित 'मुकुन्द' रही बहुत दिना लौं मौंन,
पिय के गुमान रोकी अब नां रुकावै है।
बाँसुरी के बचन सो सुनि काव्यमय कीन्हे,
मुरली आप बीती निज मुखते सुनावै है ।।

गोपी की चुनोती–

(३)

यह का पुकारैं याते चौगेने स्वरन गाऊँ
राग में उतारौं सेखी सकल गमारी की।
मैं हौं ऊँचे गाम की सुरीली सहचरी हेली,
नागरि नवेली रूप रसिक उजारी की।
मुदित 'मुकुन्द' अचरज होत मेरे मन,
क्यौं जू मुखलाई श्याम जूठिन गमारी की।
कूकि भरौं कोइल सी चूरौंगी न राग रंग,
हौं हू बनि जाऊँगी मुरलिया बिहारी की ।।

दूसरी गोपी–

(४)

एरी बाँस फांस की कनास कुल कोली,
चढ़ि श्याम के अधर तेहि बड़ी ऐंठ छाई है।
मुँह ते लगी है ताते गिनत न काहू कछू,
निपट निलाजी बकबाद प्रगटाई हैं ।
मुदित 'मुकुन्द' बंस बोरनी कुटिल तोहि,
डारौंगी झटकि कहा मन गरवाई है।
दूर हो निगोड़ी फटेसुर की फटैली,
तोहि बढ्यो अभिमान कांह अधर लगाई है ।।

तब बंसी बोली–

(५)

यह सुनि बोलि उठी बाँसुरी अचानक ही,
आजु इन गोपिन की बकिवो रुकाऊँगी।
बहुत सही हैं बातैं अब नां सहौंगी एक,
एक एक ताहने के सो सो ही सुनाऊँगी।

मुदित 'मुकुन्द' जीभ ह्यं हू मुख राखति हौं,
बड़े बापु बारिनु निरुत्तर बनाऊँगी।
वंसी कहै मोहि कोऊ दोस मनि दीजो,
इन गोपिनु कौं मरम जुवावन छकाऊँगी ॥

(६)

तुम ऊँचे कुल की तौ हौं हू ऊँचे बंस वारी,
तुम मथौ दही मैं मनोजमथ धारी की।
तुम कर माखन हौं राखन जगत नेह,
तुम हँमौ हास हौं प्रकास दिसिचारी ।
मुदित 'मुकुन्द' तुम बन बन खोजौ श्याम,
हौं बसौं अधर रस पान अधिकारी की।
नेरी पग एड़ी की न होड़ करिपाओ तुम,
गूजरी करौगी होड़ प्रभुना हमारी की ॥

(७)

मेरे बस श्याम मोहि धारत अधर धीर,
देत रस मंत्र तुम होठ चाटिवौ करौ।
सोवत हौं सुखते सनेह मयी सैया पै,
तुम फिरौ रोवती वियोग बांटिवौ करौ।
मुदित 'मुकुन्द' मानैं प्रान ते अधिक मोहि,
तुम गुन औगुन समैटि छांटिवौ करौ।
बांसुरी हँसत जो पै प्यारे कौं सनेह चाहौ,
तुम ब्रज-वाला मेरी एड़ी चाटिवौ करौ ॥

(८)

छाछ की बिलौनवारी गोबर थापन हारी,
दही वेचि खाती प्रीति रीति क्यौं अघावैंगी।
काहू कैंजु खेत क्यार काहू कैंजु पसु ढोर,
साधैं सुर साधना तौं रस रीत छावैंगी।
मुदित 'मुकुन्द' हौं अगम ब्रह्म नादिनी हौं,
मेरे पग तर आयि सेवा नहीं लावैंगी।
ब्रज की नवेली अलवेली फिरैं गोवर लियैं,
कहा खाय गोपी ये हमारो पद पावैंगी ॥

[अप्र० "मुरलिया की बानी" से उद्धृत]

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

महाकवि विहारीलाल का साहित्य तीर्थ

लेखक श्री बालमुकुन्द चतुर्वेदी

'यदि कहा जाय कि हिन्दी के सुविशाल मन्दिर के माथुर चतुर्वेदी स्तम्भ रूप हैं तो कुछ अत्युक्ति न होगी, परन्तु खेद का विषय है कि ऐसे धुरन्धर साहित्य सेवियों से संसार तो क्या स्वयं चतुर्वेदी [तथा मथुरा वासी] भी अपरिचित हैं।

स्व० सत्यनारायण कविरत्न
"चतुर्वेदी" पत्र चैत्र १९७२

इसमें कोई सन्देह नहीं कि मथुरा के चतुर्वेदी साहित्यकार ब्रज भाषा और वर्तमान हिन्दी के निर्माण में परम निष्ठावान् और अग्रगामी रहे हैं। मथुरा का यह सौभाग्य है कि उसकी रज में विश्व के दुर्लभ साहित्यकारों ने प्रेरणा के तत्वों को प्राप्त कर भारती के भण्डार को भरने का स्तुत्य प्रयास किया है। महा कवि बिहारी विश्व साहित्य की एक सन्मानित विभूति थे। उनकी रचना 'बिहारी सतसई' विश्व की एक अमूल्य रचना है। देश विदेश सर्वत्र इस महान रचना का सम्मान हुआ है और लगभग चार शताब्दियों से इस महा कवि की महान रचना ने शृङ्गार साहित्य में अदभुत प्रमुखता पायी है। ब्रिटिश साम्राज्य का Imperial Gazetteer of India' बिहारी के विषय में लिखता है।

Surdas had many successors, the most famous of whom was Biharilal of jaipur, whose 'Satsaiya' or a collection of seven hundred detached verses is one of the daintiest pieces of art in Indian Language. Bound by the rules of metre each verse had a limit of forty six Syllables and generally contained less. Nevertheless each was a complete picture itself, a miniature description of a mood or a phase of nature, in which every touch of the brush is exactly the needed one, and not one is Superfluour. The successiue compression necessitated renders the poems extremely difficult and he has beer aptly named. The Mine of the commentators' but no one who-reads them can resist adnnring the appropriateness and eleg-ance alike of his diction and his thoughts. He is particularly happy in his description of natural phenomena, such as the

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

scentladen breeze of an Indian glooming, the wayworn pilgrim from the sandal south, adust not from the weary road, but from his pollen quest, brow-headed with rose dew for sweat, and lingering,reath the trees, resting himseff and inuiting others to repose.

Imperial Gazetteer of India
Vol II P. P. 423

अर्थात्—महाकवि सूरदास के अनेक उत्तराधिकारी हुए हैं। उन सब में सब से अधिक यशस्वी बिहारीलाल जयपुर निवासी हुए हैं। इनकी 'सतसैया' या सात सौ पद्यों का चुना हुआ संग्रह भारतीय हिन्दी भाषा की कला कृतियों का सुन्दरतम नमूना है। इसमें छंद के नियमों में बंधा हुआ प्रत्येक पद्य छियालीस मात्राओं की सीमा से युक्त है, जो तुलनात्मक रूप से बहुत छोटा रूप है, फिर भी इनमें से प्रत्येक पद्य अपने में अपनी पूरी तसवीर लिए हुए है। वह एक ऐसा लघु चित्र है जो एक पूरे भाव का, या प्राकृतिक दृश्य का सर्जीव विवरण चित्र प्रस्तुत करता है, जिसमें तूलिका का प्रत्येक संस्पर्श यथार्थ आवश्यक प्रस्तुतीकरण का वर्तमान रूप है, और उसमें एक भी विन्दु अनावश्यक नहीं है। परम्परागत तुलनात्मक प्रवृत्तियों परपदार्पण ने यद्यपि पद्यों को नियमितता के साथ कुछ कठिन कार्य बना दिया है और उनमें के दृष्टिकोणों के अनुसार उनको टीकाकारों की व्याख्या की खान का नाम प्राप्त हुआ है, परन्तु कोई भी जो उन्हें पढ़ता है, वह उनकी सुडौलता और भाव प्रस्तुतीकरण की अद्‌भुत क्षमता पर आश्चर्य चकित हुए बिना नहीं रहता। कवि अपने प्रकृति चित्रण की निराली विस्तृति में असाधारण रूप से आनन्दमग्न है, मानो भारतीय निकुन्जों से सुगन्ध की धीमी-धीमी वायु तरंगें आ रही हैं। या दक्षिण के चन्दन बन से कोई सुरभि तृप्त पथिक आ रहा हो। वह थकाने वाली पथरीली सड़कों से नहीं अपितु अपने पाटल पराग विकरित मार्ग से, गुलाब पुष्पों की भीगी ओस कणों से अनुरन्जित सा मधुर, चिरस्थायीं, पादप पंक्ति की श्रेणियों के बीच से विश्रान्ति लेता हुआ सा। वह स्वयं तो मन्त्र मुग्ध है ही दूसरों को भी मानों उनके आनन्द की सुदुर्लभ संस्थापना के लिए दिव्य आवाहन कर रहा है।

इम्पीरियल गजेटियर आफ इन्डिया
जिल्द पृष्ठ ४२३

प्रसिद्ध विद्वान एफ० ई० कीथ बिहारी के विषय में लिखते हैं-

'The most celebrated Hindi writer in connection with art of poetry is Beharilal choubey. The work of Beharilal is a triumph of skill and felicity in expression.'

History of Hindi Literature P. P. 44

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अर्थात्-'पद्य रचना को कला में सब से अधिक प्रशंसा योग्य हिन्दी कवि बिहारी-लाल चौबे हैं। कविवर विहारी लाल की रचना काव्य कुशलता की महान विजय और भाव सौष्ठव की चरम समृद्धता का संस्थापन है।

हिन्दी साहित्य का इतिहास पृष्ठ ४४
[एफ० ई० कीथ द्वारा]

जार्ज ग्रियर्सन का मत है---

Beharilal has been called the thorapson of India but I do not think that either he or any of his brother poets of Hindustan can be usefully compared with any western poet I know nothing like his verses in any European language.'

George Greason

बिहारीलाल भारत के थामसन कहे जाते हैं, परन्तु मैं नहीं सोच सकता कि वे या इनके किसी दूसरे हिन्दुस्तानी कवि वन्धु की किसी पश्चिम के कवि से तुलना की जा सकती है। यूरोप की किसी भी भाषा में मैं उनकी तुलना की काव्य रचना नहीं पाता।

—जार्ज ग्रियर्सन

सतसई पर टीकायें

हिन्दी में अब तक २२ सतसई लिखी गई हैं, इनमें बिहारी सतसई सर्वोपरि है। विहारी सतसई पर अनेकों टीकायें हुई हैं। गोस्वामी तुलसीदास को छोड़कर हिन्दी के किसी भी अन्य ग्रन्थ पर इतनी टीकायें नहीं हुई हैं। कुछ टीकाओं का परिचय यहां दिया जाता है।

१. कृष्ण कवि की टीका(१७७२वि०)सतसई पर इनकी सर्व प्रथम टीका है। रत्नाकर ने इन्हें बिहारीलाल का पुत्र लिखा है किन्तु खोज करने पर पता लगा है कि ये बिहारी की बहिन के पौत्र थे। विहारी की मृत्यु १७२१ वि० के ५१ वर्ष बाद इनने टीका लिखी है। विहारी के कारण से इनका भी जयपुर के राज्य घराने में काफी सम्मान या। इन्होंने जयपुर के राजा सवाई जयसिंह के मन्त्री राजा आयामल्ल के लिए छन्द वद्ध 'विदुरप्रजागर' या 'भारत सार' ग्रन्थ लिखा है। यह ग्रन्थ १७९२ वि० में लिखा गया है।

कृष्ण कवि मथुरा के चतुर्वेदी ककोर शाखा के थे। विहारी के बाद वे ही इनकी मथुरा की सम्पत्ति के अधिकारी हुए। इनके वंशज गेंदा जी ककोर बड़े प्रतिष्ठित व्यक्ति थे। इनका निवास स्थान मथुरा के ककोरन घाटी स्थान पर है, जहां महाकवि बिहारी की सेवित

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

श्री श्याम जी की मूर्ति विराजमान है, जिसे अब बिहारी जी की सेवा कहा जाता है। इन्होंने अपना परिचय इस प्रकार दिया है---

> माथुर विप्र ककोर कुल कह्यौ कृष्ण कवि नाँउ।
> सेवक हौं सब कविनु कौ बसत मधुपुरी गाँउ।।

राजा आयामल्ल के ही लिए इनने बिहारी सतसई पर छंदवद्ध टीका भी लिखी थी। वे लिखते हैं--

> आया मल कवि कृष्ण पर ढरयौ कृपा के ढार।
> भांति-भाँति विपता हरी दीनी लच्छि अपार।।

२. मान कवि की टीका [१७३७ वि०] टीकाकार उदयपुर नरेश राणा राजसिंह के राज कवि 'मान' हैं।

३. अनवर चन्द्रिका(१७७१वि०)इसे कमल नयन और शुभ करण नामके दो कवियों ने अनवर खाँ नाम के किसी पठान के लिए लिखा है।

४. साहित्य चन्द्रिका (१७९४ वि०) यह पन्ना के राज कवि करण ने लिखी है।

५. अमर चन्द्रिका (१७९४ वि०) इसे जोधपुर राज्य के मन्त्री भन्डारी नाहूला अमरचन्द ने प्रसिद्ध कवि सूरत मिश्र से लिखवाया है।

६. काशीराम की टीका (१८०२ वि०) इसे काशीराम महाराज वीरचन्दसिंह के राज कवि रघुनाथ वन्दीजन ने लिखा है।

७. रस चन्द्रिका (१८०९ वि०) इसे ईसवीखाँ नामक मुसलमान ने लिखा है।

८. हरि प्रकाश टीका (१८३४ वि०) इसे हरि चरणदास नाम के किसी जैन कवि ने लिखा है।

९. प्रताप चन्द्रिका (१८५२ वि०) जयपुर के राजा प्रतापसिंह के कवि मनीराम रचित।

१०. सतसैया वर्णार्थ टीका (१८६१ वि०, अमनी के ठाकुर कवि ने बाबू देवकी-नन्दनसिंह के लिए रची।

११. गुजराती टीका (१८६० वि०) गुजरात के रणछोर जी दीवान की टीका।

१२. लाल चन्द्रिका (लल्लूलाल कृत टीका) ग्रीयर्सन की अंग्रेजी भूमिका युक्त है।

१३. सरदार कवि की टीका—अप्राप्य है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

(१४) गदाधरभट्ट की टीका--पद्माकर के पौत्र ने यह टीका की है।

(१५) प्रभुदयाल पाँडे की टीका-यह १८५३ वि० में बँगवासी प्रेस कलकत्ता से प्रकाशित हुई है।

(१६) ज्वाला प्रसाद मिश्र की टीका-यह १८५४ वि० में भावार्थ प्रकाशिका के नाम से की गई है। जो इसकी आलोचना में सं १९६७ वि० में पदमसिंहशर्मा ने 'सतसई संहार' नाम से की है।

(१७) संजीवन भाष्य-पद्मसिंह शर्मा द्वारा प्रस्तुत।

(१८) विहारी वोधिनी--लाला भगवान दीन कृत टीका।

(१९) विहारी रत्नाकर--बाबू जगन्नाथ दास 'रत्नाकर' की विहारी पर सर्वोपरि टीका।

पद्यमय टीकायें--

(२०) पठान सुलतान कृत १७६१ वि० की कुंडलियायुक्त टीका।

(२१) नवाव जुलिफकार अली की कुंडलियाओं में रची टीका।

(२२) कुंडलियाओं में श्री ईश्वरी प्रसाद कायस्थ की टीका।

[२३) विहारी विहार-अम्बिकादत्त व्यास की कुंडलिया मयी टीका।

(२४) पटना के सिख सँगत के महन्त साहब जादे बाबा सुमेर सिंह की टीका।

(२५) भारतेन्दु की टीका-कुछ दोहों पर कुंडलियों की रचना।

(२६) 'रस कौमुदी' जानकी प्रसाद 'रसिकेन्द्र' की कवित्त सवैया में टीका।

(२७) १६९१ वि० की ईश्वर कवि की काव्यमयी टीका।

(२८) १६९२ वि० चन्द्र कवि की काव्य टीका।

(२९) बन्दन बाबू की टीका।

(३०) १७८१ वि० को आजम खाँ की आजम शाही टीका।

(३१) युसुफ अली खाँ की टीका।

(३२) किसी अज्ञात कवि की संस्कृत पद्यों में टीका।

३३) रत्नाकर जी वर्णित एक और संस्कृत टीका।

(३४) १८३७ वि० की हरि प्रशाद खत्री द्वारा प्रस्तुत 'आर्यागुम्फ' नाम की संस्कृत टीका।

(३५) शृंगार सप्त शती-संस्कृत पद्यांतर।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

(३६) भावार्थ प्रकाशिका—सवितानारायण की गुजराती में रची टीका ।

(३७) सफरंगे सतसई--१८५२ वि० में जोशी आनंदी लाल रचित गुजराती टीका ।

(३८) गुलदस्तए विहारी--मुंशी देवीप्रसाद रचित उर्दू शेरों में सतसई का पद्यांतर ।

(३९) बँगला टीका--किसी बंगला कवि द्वारा प्रस्तुत

(४०) छोटू लाल की वैद्यक बोधनी टीका--इसमें दोहों का वैद्यक पक्ष में अर्थ किया गया है ।

(४१) खेतान टीका--बाबू काली प्रसाद खेतान द्वारा दोहों का धार्मिक आर्थिक और एतिहासिक अर्थ उदघाटन ।

इसके अतिरिक्त भी विहारी सतसई के अर्थों और पाठों की अनेक दुर्लभ प्रतियां बंगाल के मुर्शिदाबाद घरानों, पंजाब, काश्मीर, सिंध, गुजरात, राजस्थान, सुदूर दक्षिण के क्षेत्रों में भी लोगों के श्रद्धा का स्थान बनी हैं । बिहारी के काव्य सौष्ठव का यह एक अति उज्वल पक्ष है । ब्रिटिश इम्पीरियल गजेटियर ने भारत के तीन कवियों की श्रेष्ठता स्वीकार की है और वह है सूर; तुलसी और विहारी । हिन्दी नवरत्न, देव और विहारी आदि अनेक समालोचना ग्रंथों में भी विहारी के श्रृंगार साम्राज्य पर एक छत्र राज्य का चक्रवर्तित्व स्वीकार किया गया है।

जीवन परीचय

बहुत लंबे समय की उहापोहों के बाद अब यह तथ्य सर्वत्र स्वीकृत हो चुका है कि विहारी मथुरा के माथुर चतुर्वेद ब्राह्मण (चौबे) थे । उनका अधिकांश जीवन काल पवित्र मथुरा पुरी जो माथुर चतुर्वेदो ब्राह्मणों का एक मात्र केन्द्र है में व्यतीत हुआ था । एक दोहे में वे कहते हैं—

प्रगट भये द्विजराज कुल, सुबस बसे ब्रज आइ ।
मेरे हरो कलेस सब केसव केसव राय ।।

—बिहारी रत्नाकर दोहा १०१

इससे उनके जन्म स्थान का मथुरा से बाहर होना ज्ञात होता है। वे मथुरा में आनन्द से बसने को आये थे । उनने इस दोहा में केशव और केशवराय की बंदना भी की है । केशव विहारी के पिता थे और केशव राय मथुरा के सुप्रसिद्ध केशव पुरा में स्थित देवता थे । एक प्राचीन दोहा में कहा है—

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मथुरा में मंगता बसें दाता केशव देव ।
बामन बनियाँ बांदरा लूट खान की टेव ।।

यह ऐतिहासिक तथ्य की बात है कि मथुरा के विश्रान्त घाट पर ओरछा के उदार दानी वीर सिंह देव ने ८१ मन सोने से तुलादान किया था इस ऐतिहासिक महादान का समय भी संवत् १६७१ वि० है और लगभग इसी समय इस द्रव्य से मथुरा के पुरातन देवता, केशव के नवीन भव्य मन्दिर का सभारंभ हुआ । विहारी की सतसई के दोहा की रचना का भी यही समय है । इस समय उनकी अवस्था १९ वर्ष की थी अतः उनके द्वारा केशव भगवान से निर्विघ्नता की कामना यथार्थं ही है ओरछा नरेशों से सबंध होने के कारण सभवतः उनने केशव के उत्सव में भाग लिया था, महाकवि केशव उनके काव्य गुरू भी थे, अतः इस एक ही दोहे में विहारी ने देवता गुरू पिता तीनों की बंदना करली है । अपने जन्म के सम्बन्ध में उनका एक और भी दोहा है जिसमें वे कहते हैं—

जन्म ग्वालियर जानियै खंड बुंदेले बाल ।
तरुनाई आई सुघर मथुरा बसि सुठ्राल ।।

इस दोहा से स्पष्ट हो गया कि उनका जन्म गवालियर राज्य के वुंदेल—खंड से संबधित किसी गाँव में हुआ था । मिश्रबंधु आदि विद्वानों ने उनका जन्मस्थान बसुआ गोविन्द पुरा (ग्वालियर) के गांवों में होना लिखा है जो केवल भ्रान्ति मात्र है । वसुआ गोविन्द पुरा दो गांव हैं । इसमें बसुआ जयपुर में तथा गोविन्द पुरा अलवर जिले में है दोनों में ६ मील का अंतर है । विहारी को ये राजाजयसिंह से उनकी २५ वर्ष की अवस्था में १६७७वि० में मिले थे यहां उनके वंशज अब भी निवास करते हैं । विहारी के जन्मस्थान की इस गुत्थी को सुलझाने के लिये जरा आधिक सतर्क दृष्टि से विचार करना होगा । गवालियर जिले से लगा हुआ । बुन्देलखंड का दतिया जिला है । इस गवालियर और दतिया की सीमा पर सिंधनदी बहती है । इसी सिंध के कछारों में माथुर चतुर्वेदियों के कुछ गांव हैं । आंतरी, उचाढ, करहिया मगरौनी बिलौआ इन गांवों का समूह मथुरान्त कहा जाता है । यहाँ माथुरों के अनेक परिवार शताब्दियों से बसते हैं और उनका मथुरा में आने जाने का संबंध बना है । सिंधु के एक पार ग्वालियर तथा दूसरे पार पर बुन्देलखंड है प्रायः इन गाँवों के माथुर संकट में अपने उत्पत्ति स्थल को सहारा मान कर या गुरजनों की सेवाकर सुख से निवास हेतु मथुरा आते रहते हैं । बिहारी पर शोध पुस्तिक प्रस्तुत करते हुए 'विहारी परिचय' के लेखक ने लिखा है कि किसी कारण वश विहारी के पिता अपने पारिवारिक स्थान को छोड़ कर ओरछा चले गये । उस समय उनकी पत्नी का देहान्त हो चुका था और विहारी की अवस्था ७-८ वर्ष की थी ।

जन्म स्थान—तत्परता से खोज करने से जो तथ्य हमारे सामने आये हैं उसके

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आधार पर यह कहा जा सकता है कि बिहारी का जन्म स्थान उचाड़ ग्राम है। यह ग्राम दतिया (बुन्देलखंड) तथा ग्वालियर की सीमा पर है और इस में माथुरों की और आख्यत्रों अल्हों के साथ घरवारी कुल के माथुर भी रहते हैं। यहीं बिहारी ने जन्म लिया और ८ वर्ष की अवस्था में माता की मृत्यु हो जाने पर उनके पिता केशव उन्हें और उनके भाई बहिनों को लेकर मथुरा आ गये। इसमें पूर्व वे १६६० वि० के लगभग कुछ वर्ष ओरछा में भी रहे थे। यहां विहारी ने साहित्य के आचार्य केशव से विद्या अध्ययन किया। केशव १६६४ वि० के लगभग ओरछा के राजा इन्द्रजीत के दरवार की शोभा थे। इस समय विलासी वातावरण से बचाने को विहारी के पिता बालक विहारी को मथुरा ले आये' जहाँ वे रतन कुंड नामक मुहल्ले में श्री उद्धवजी महाराज के वंशज भगवान चतुर्वेदी के आश्रय में रहे। इस प्रकार १२ वर्ष आयु में विहारी के जीवन का साहित्यिक वीजारोपण मथुरा में हुआ। उनकी जीवन घटनाओं के कुछ प्रमुख वर्ष इस प्रकार हैं—

प्रमुख घटनायें

जन्म—१६५२ वि० कार्तिक वदी ८ उचाड़ ग्राम ओरछा गमन (केशव से शिक्षा ग्रहण) १६६० वि० से १६६४ वि०, मथुरा आगमन १६६४ वि०

राजा जयसिंह से मिलाप १६७० वि०—मथुरा में।

विवाह १६७३ वि०—मथुरा।

हवेली निर्माण १६७५ वि० मथुरा

दोहों की रचना आरम्भ १६६८ वि० से।

शाह जहाँ से मिलाप १६७५ वि०।

बसुआ गोविन्द पुरा जागीर में मिले १६७७ वि०

अन्य राज्यों में भ्रमण १६७७ वि० के बाद से मृत्यु १७२१ वि० फागुन सुदी ११

जन्म के वारे में उनका एक दोहा हैं—

सँवत जुग (२) सर (५) रस (६) सहित, भूमि (१) रीति गिन कीन्ह।
कार्तिक सुदी बुध अष्टमी जन्म हमहि विधि दीन्ह॥

—नागरी प्रचारिणी पत्रिका जनवरी १९१९

वंश परिचय

विहारी के पारिवारिक जनों के विषय में अनेक शोध हुए हैं अनेक विद्वानों ने इस सँबंध में गलत धारणायें बनाईं किन्तु समय ने उन सब का निराकरण कर दिया है। कुछ निश्चित तथ्य जो सामने आये हैं वे इस प्रकार हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अब यह सर्वसम्मत हो चुका है कि विहारी माथुर चतुर्वेद ब्राह्मण थे। वे धौम्य गोत्रीय घरवारी अल्ह के माथुर थे। कुछ विद्वानों ने उनके पिता केशव को महाकवि केशव मानकर उन्हें सनाढ्य माना, किन्तु गहरी खोजों ने इस भ्रान्ति को निर्मूल कर दिया है। महा महोपाध्याय पं गिरधर शर्मा ने 'चतुर्वेदी' पात्रिका १९३६ के अंकों में इस पर प्रकाश डालते हुए लिखा है कि विहारी लाल के वंशधर बूंदी के राज कवि अमर कृष्ण अभी हैं, उनके पास जयपुर नरेश की दी हुई ताम्र पत्र के रूप में सनद थी जो पारिवारिक कलह में लुप्त हो रही है। पं० अमर कृष्ण के पिता बाल कृष्ण ने सोरों तीर्थ के पँडा की बही में से खोज कर अपनी बंशावली निर्धारित की है जो इस प्रकार है—

प्रथम विहारीलाल प्रगट जिन्ह सप्तसती कृति।
तनय निरन्जन तासु भयौ विख्यात सुद्ध मति ॥
तिन्ह के गोकुलदास तनय तिहि खेमकरन भनि।
दयाराम सुत तासु भये तिन्ह के मानिकमनि ॥
पुनि भं गनेस तिन्ह के तनय बाल कृष्ण तिनके भयो।
गुन निपुन चतुरजन माल मनि कविता तिय नायक कह्यो ॥

—विहारी परिचय पृ० १५

सुप्रसिद्ध समीक्षक डा० श्याम सुन्दर दास ने विहारी की वंशावली इस प्रकार निश्चित की है—

बासुदेव के पुत्र 'केशव राय केशवराय के पुत्र विहारी लाल तथा एक अन्य, (विहारी के भाई का नाम मुरारी था) उनके पुत्र निरंजन विहारी की गोद आये, बाद की बंशावली पूर्वानुसार है। इस वंशावली से ओरछा निवासी केशव कविराय की वंशावली नहीं मिलती कवि प्रिया में वे स्वयं अपने पिता का नाम काशीनाथ तथा पिता मह का नाम कृष्णदत्त लिखते हैं। उनके दो भाई बल भद्र मिश्र और कल्योण दास मिश्र भी थे। वे सनाढ्यों के मिश्र उप नाम धारी थे जो रपवारी उपनाम वाले विहारी के वंश से बहुत दूर हैं। विहारी के दो बहिनें भी थीं उनके नाम सिद्धेश्वरी और तुरसी थे। सिद्धेसुरी हरिकृष्ण मिश्र के पुत्र पर-सुराम मिश्र के विवाही गयी जिससे हिन्दी के प्रसिद्ध विद्वान कवि कुल पति मिश्र का जन्म हुआ कुलपति मिश्र का जन्म काल १६८० वि० है। इन्होंने वीर रस का प्रसिद्ध काव्य संग्राम सार लिखा है। इससे पूर्व मथुरा में ही चतुर्भुज मिश्र ने दोहा चौपाइयों में "भगवत दशम" का अनुवाद १६२४ वि० में किया था जिसका सार ले लल्लू लालजी ने १८६० वि० में "यामनी भाषा छोड़ दिल्ली आगरे की खड़ी बोली में कह कर प्रेम सागर जिसका नाम धरा" यह अनुवाद जान गिल क्रिष्ट साहब के विलायत चले जाने के कारण अधूरा पड़ा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रहा जिसे बाद में १८६६ वि. में पूरा करा कर अंग्रेजों द्वारा कालेज के विद्यार्थियों के हित के लिए छपवाया गया। इस प्रकार चतुर्भुज मिश्र का यह दशम भागवत ग्रन्थ ही वर्तमान खड़ी बोली का मूल गर्भाधान है।

मथुरा के चतुर्वेदियों में मिश्रों का एक विस्तृत परिवार है। चतुर्भुज मिश्र का कुल पति मिश्र से क्या सम्बन्ध है यह अभी तक ज्ञात नहीं हो पाया है। विहारी परिचय के लेखक के विचार से कुलपति मैनपुरी निवासी थे।

विहारी की दूसरी बहिन का नाम तुलसी था। वे मथुरा के ही ककोर उपनाम धारी कुल में गोविन्दजी के पुत्र कल्याण को विवाही गयी जिनसे विहारी के सुप्रसिद्ध सर्व प्रथम काव्य टीकाकार कृष्ण कवि ककोर के पिता रामजी ककोर का जन्म हुआ। कृष्ण कवि इन्हीं के होनहार पुत्र थे।

राधा मथुरा के भक्ति सार्वभौम श्री उद्धव महाराज के वंशज भगवान विहारी की पुत्री की मथुरा के चतुर्वेदियों में श्री उद्धवदेवजी का परिवार अति प्रतिष्ठित माना जाता है।

प्राय: सभी शोधकर्ताओं ने अभी तक कृष्ण कवि ककोर का सम्बन्ध विहारीलाल से लगाया है। कुछ ने उन्हें विहारी का पुत्र कुछ ने भानजा लिखा है। हाल ही शोध में हमें कृष्ण कवि का 'विदुर प्रजागर भारत सार' काव्य ग्रन्थ मिला है। जिसमें वे विहारी की टीका वाला राजा आयामल्ल का प्रसङ्ग दुहराते हुए लिखते हैं —

राजा आया मल्ल की आज्ञा अति हितु जान।
विदुर प्रजागर कृष्ण कवि भाषा कह्यो बखान॥
सत्रह सौ अरु वाणवैं संवत कातिक मास।
सुक्ल पच्छ पांचैं गुरु कीन्हौं ग्रन्थ प्रकाश॥

इस प्रकार १७९२ वि० इस ग्रन्थ का रचना काल है। विहारी की मृत्यु के ७१ वर्ष बाद यह ग्रन्थ लिखा गया है, जबकि सतसई की टीका का समय १७३० वि० कहा जाता है। ६२ वर्ष के अन्तर से दूसरे ग्रन्थ की रचना शङ्कास्पद है। आयामल्ल के समय को देखते हुए १७९३ वि० ही अधिक सही है, अत: इस अन्तर से कृष्ण कवि विहारी के भानजे नहीं भानजे के पुत्र थे। उनकी टीका भी विहारी की मृत्यु के लगभग ५१ वर्ष बाद अवश्य लिखी गई। १७७२ वि० की कृष्ण कवि की टीका की प्रति मिलती हैं अत: यही इसका रचना काल भी माना जाना चाहिए।

विहारी की बहिन कृष्ण कवि की पिता मही तुलसी बहुत धर्म प्राण और भगवद्भक्त

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

महिला थी। हम आगे बतायेंगे कि उस समय के दो महान प्रतापी तेज मूर्ति महापुरुषों श्री उद्धवाचार्य जी और श्री उजागर की उत्पत्ति के कारण उस समय मथुरा उत्तर भारत का भक्ति केन्द्र बन गयी थी। इन ऐतिहासिक महापुरुषों के परिचय हम स्वतन्त्र लेखों में आगे कभी देंगे। ये दोनों ही बन्धु मौसेरे भाई थे। इनमें से उद्धव जी विहारी उप नाम धारी तथा उजागर जी ककोर उपनाम धारियों में से थे। समस्त धर्माचार्यों तथा ५२ रजवाड़ों के चरणवंदित तीर्थ पुरोहित होने के कारण इनके बन्शधरों का सारे भारत वर्ष में मान्य रूप में प्रभाव था। विहारी के पिता श्री उद्धवजी के बन्शधरों के यहां आश्रय लेकर रहे थे और उनकी ही स्नेह कृपा से विहारी का विवाह सम्बन्ध मिहारी कुल में उन्हीं के वन्श में हो गया। इसी सम्पर्क से उनकी बहिन तुलसी भी उजागर जी के कुल में कल्याण जो ककोर को विवाही गयी। तुलसी पर विहारी की अत्यन्त श्रद्धा थी। उनने मथुरा में उसके लिए एक विशाल हवेली ककोरन की घाटी पर बना कर भेंट की जिसके सामने एक बड़े चबूतरे पर उसकी धार्मिकता का प्रतीक 'तुलसी क्यारी' भी थी। ककोरन घाटी के समीप का यह स्थान तुलसी चबूतरा कहलाया जो आज भी इसी नाम से विख्यात है।

एक और आकर्षक तथ्य यह भी है कि विहारी की पत्नी का नाम राधा था। वे स्वयं एक विदुषी और कवयित्री नारी थी। विहारी की काव्य रचना और काव्य प्रेरणा में उनका बहुत बड़ा योग दान था।

"मथुरा बसि ससुगार" कहकर विहारी ने उनकी कृतज्ञता स्वीकार की है। कहते हैं राधा और विहारी ने मिलकर १४०० दोहाओं की रचना समय-समय पर की और उनमें से ७०० दोहों को चुनकर सतसई का कलेवर सजाया गया। माथुरी महिलायें अपने काव्य सङ्गीत सौष्ठव के कारण प्रसिद्ध हैं, आश्चर्य है कि कुछ लेखकों ने इस गहरे तथ्य को एक लतीफा कह कर हजम कर जाने की चेष्टा की है।

१८६१ वि॰ में असनी के ठाकुर कवि ने अपनी सतसैया वर्णार्थ टीका के साथ इस पर प्रकाश डाला है। वे लिखते हैं कि विहारी की पत्नी ने १४०० दोहे बना कर १४०० मुहरें इनाम में प्राप्त कीं। जोधपुर राजस्थान के पुरातन पुस्तक भण्डार में एक 'दूहा संग्रह' नाम की पुस्तक प्राप्त हुई है जिसमें विहारी के दोहों का संग्रह है। इसके दोहों की संख्या १५-१६ सो के लगभग बतायी जाती है। इस कथा के कुछ पृष्ठ अन्त: साक्ष्य भी हैं। विहारी अपनी वन्दना में कहते हैं—

मेरी भव बाधा हरो राधा नागरि सोय।
जा तन की झाँई परें श्याम हरित दुति होय॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इस दोहे में भव बाधा नागरि और सोय शब्दों में एक गहरा व्यंग है। झाँई और हरित दुति में आन्तरिक मर्म है।

उधर राधा की बन्दना देखिए—

मोर मुकट कटि काछिनी कर मुरली उरमाल।
यहि बानिक मो मनबसो सदाँ विहारी लाल ।।

कवि को स्वयं अपनी वन्दना करने में अवश्य संकोच का अनुभव हो सकता है। किन्तु राधा जिनके आराध्य विहारीलाल हैं निसंकोच भाव से विहारी के उस स्वरूप की कल्पना करती हुई बन्दना करती है जिसे सारा सन्सार आराधनीय मानता है। राधा ने विहारी के व्यंग का तत्काल ही उत्तर प्रस्तुत कर दिया है, यह नारी के सहज भावुक और काव्यात्मक गुण का ही परिचय है। सतसई में ऐसे सम्वादात्मक प्रसंगों की कमी नहीं है। कुछ दोहों में तो दो चरणों में ही कथोपकथन है। दोहा १२, १३, १४४ ३१, १४६, १५१, १७२, ५७७, ५८१, परस्पर सम्बोधन युक्त हैं तथा ३१३, ३१४ स्नेह के आदान-प्रदान बचनों को प्रगट करते हैं। अपनी प्राणाधिका राधिका को विहारी ने अनेक नामों से अनेक प्रसंगों में आवद्ध करके सतसई में याद किया है। आश्चर्य है कि ऐसी विदुषी भारतीय कवयित्री नारी के अस्तित्व को साहित्य संसार ने अभी तक नहीं पहचाना। निश्चय ही गवेषणा करके सतसई के दोहों में से ही राधा महा कवयित्री के दोहों को चयन किया जा सकता है।

मथुरा में निवास

विहारी परिचय के लेखक के अनुसार १६६४ वि० में विहारी अपने पिता के साथ मथुरा आ गए। १६७० वि० तक ६ वर्ष वह श्री उद्धव जी मिहारी के वन्शजों की हवेली रतन कुन्ड में रहे। इसी बीच में उनकी बहिनों के विवाह मिश्र और ककोर कुलों में हो गए। ककोर मिहारी सर्दारों की सहायतासे ६ ७२ वि० में उनकी मुलाकात जयपुर नरेश राजा जयसिंह से हुई। यह मुलाकात सम्भवत: मथुरा में हुई थी।

अकबर के समय से ही जयपुर के राजाओं का मथुरा प्रिय निवास स्थान बन चुका था। राजा भगवानदास के पिता विहारी लाल की पत्नी यहीं सती हुई। १६२७ वि० का उनका यमुना तट वर्ती सती का बुर्ज, समीप ही जयपुर का महल, १६२५ वि० का मानसिंह का किला, १६२७ वि० गोविन्ददेव मन्दिर, १६४० वि० गोविन्दघेरा बृन्दावन, इसके प्रमाण है कि उस काल मथुरा जयपुर के राजाओं का आकर्षण केन्द्र बन चुकी थी। जयसिंह प्रथमबार १६७२ वि० में मथुरा आये और विहारी लाल का सम्मान करने के साथ ही उन्होंने मथुरा में १६७३ वि० चौवे जी का बुर्ज, १६७४ वि० जयसिंहपुरा गांव तथा वहीं विशाल ज्योतिष यन्त्रों की वेधशाला, १६७४ वि० सीताराम बाड़ा जयपुर की कचहरी, आदि की स्थापना की।

विहारी के उच्च कुल में विवाह का हेतु उनका राजकीय सम्मान ही था। उनके

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

काव्य गुणों पर मुग्ध होकर महाराज जयसिंह ने उन्हें खिलअत और जागीर देकर अपना दरबारी बना लिया। इससे उनका समाज में मान बढ़ गया और १६७३ वि० में उनका विवाह राधा के साथ हो गया।

लेखक के बहुश्रुत विद्वान पिता श्री अनन्तराम जी इस सम्बन्ध की अनेक रोचक घटनायें सुनाया करते थे जो अब बहुत कुछ विस्मृत सी हो गयी है। वे कहते थे राधा के भाग्य पर उस समय की स्त्रियाँ ईर्षा किया करती थीं राधा की एक सहेली ने उसे एक दोहा रचकर सुनाया था—

राधा तू बड़ भागिनी कौन तपस्या कीन।
तीन लोक तारन तरन सो तेरे आधीन॥

यह दोहा लोगों को इतना रुचिकर हुआ कि सर्वत्र प्रसिद्ध हो गया और आज तो यह ईश्वर प्रार्थना के रूप में प्रयुक्त किया जाने लगा है।

"तीन लोक तारन तरन" में विहारी के दोहे "अनबूड़े-बूड़े तिरेजे, बूड़े सब अङ्ग" की व्यापक पार होने की शक्ति की अभिव्यंजना है।

विवाह के बाद विहारी के काव्य में नयी प्रगति आयी, दोनों दंपति साहित्य विहार के साथ रस साधना करने लगे। इस साधना से वे राज दरबार के प्रमुख आकर्षण बन गये। १६७७ वि० में उन्हें जयपुर दरवार से वसुआ गोविन्द पुरा ग्राम जागीर में मिला। बसुआ जयपुर राज्य की सीमा पर बसुआ तहसील में तथा गोविन्दपुरा अलवर की राजगढ़ तहसील में इस समय हैं, १६७५ वि० में विहारी की शाहजहां से मुलाकात हुई, तुजुके जहांगीरी के अनुसार शाहजहां इस समय अपने पिता जहांगीर के साथ मथुरा वृन्दावन देखने आया था, वह उस समय के एक महात्मा चिद्रूप से मिला था। स्वामी हरिदास जी के स्थान पर उस समय स्वामी नरहरिदास जी से भी मिलने गया था। नरहरिदास जी विहारी के पिता केशव के गुरु थे विहारी ने भी सतसई में दोहा संख्या ६४६ में उनकी श्रेष्ठता का वर्णन किया है।

इस समय बादशाह जहांगीर मथुरा के चतुर्वेदियों की विद्या और गुणों पर मुग्ध हुआ था उन्हें पीर पैगम्बर और औलिया लिखते हुए बन्दगी की थी। उसके दिए हुए भूमिदानों के शाही परवाने अब भी श्री उजागर जी महाराज के बन्श फरों के पास हैं।

श्री प्रताप चन्द्र जी बड़े चौबेजी के पास इनमें से कुछ परमाने लेखक ने देखे हैं। इस समय तक बिहारी ससुराल में ही रहते थे। इस मुलाकात के बाद वे शाहजहाँ के उस दरबार में पहुँच गये जिसमें पंडितराज जगन्नाथ त्रिशूली, महाकविराय सुन्दर, कविराज दूलह आदि मौजूद थे। जयसिंह ने स्वयं दरबार में उपस्थित हो विहारी का हाथ बादशाह शाहजहां के हाथ में पकड़ाया था। इस सांस्कृतिक सम्बन्ध स्थापना का वर्णन एक दोहे में बिहारी ने किया है—

श्री नरपति नरनाह कौं दीनी बांह गहाय।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सुगुन आगरें आगरें रहत आइ सुख पाय ।।

शाही दरबार प्रवेश के बाद विहारी को आगरे में कुछ समय रहना पड़ा। इसी वर्ष १६७५ वि० में राजा जयसिंह ने अपने मथुरा के निर्माण कार्यों में विहारी के लिए भी एक हवेली निर्माण का कार्य आरम्भ कर दिया। विहारी की हवेली २ वर्ष में बन कर तैयार हो गई और १६७७ वि० में विहारी के निवास के लिये यह सुन्दर भवन समर्पण कर दिया गया।

विहारी पुरा

विहारीलाल अब राज्यों के मान्यता प्राप्त शाही कवि महाराज हो चुके थे। बड़े-बड़े राजा महाराजा उनके शब्द सुनने को आतुर और उत्कंठित रहते थे। उनकी वाणी में रस और भावों का अद्वितीय जादू था जो श्रोता को मन्त्र मुग्ध कर लेता था। उनके निवास से मथुरा का यह मुहल्ला गुलजार हो उठा। उसी समय मथुरा के छत्ता बाजार के समीप माता गली के अन्दर चलकर यमुना तट के एक उच्च टीकरे पर बसा हुआ महाकवि का साहित्यतीर्थ 'विहारीपुरा' कहा जाने लगा। मथुरा में अपना पुरा बसाने की प्रथा बहुत प्राचीन है। केशवपुरा मल्लपुरा, गोपालपुरा, सरवनपुरा, मिहारपुरा, अर्जुनपुरा, वैरागपुरा जाने कितने पुरा इस भूमि के अन्चल में बसे हुए अपने बसाने वालों की कीर्ति ध्वजा ऊँची किये हैं विहारीपुरा ने भी किसी समय भारतीय साहित्य गगन के इस विश्ववंदनीय महाकवि को अपने वक्ष स्थल पर धारण कर महा सौभाग्य का गौरव उपलब्ध किया था।

विहारी की पुरातन हवेली के कुछ अवशेष अभी इस पुरातन साहित्य तीर्थ में देखे जा सकते हैं। मथुरा के लोग तो रबड़ी मलाई और भवन कोठियों में मस्त हैं ही, दूसरे साहित्यिकों ने भी इस विश्व ख्याति के कवि के स्थान और उसकी स्थिति के महत्व को नहीं खोजा पहिचाना है। विहारी आजीवन उसी स्थान में रहे और यहीं आपने इह लीला संवरण की।

कुछ घटनायें

१६७७ वि० में आगरा में शाहजहाँ के एक दरबारी उत्सव में भारत के अनेक राजा महाराजा आमंत्रित हुऐ। विहारी की काव्य प्रतिभा से परिचय हो वे सभी बड़े श्रद्धावनत हुए और उन सभी ने अपने राज्यों में विहारी के लिए वर्षासन के रूप में वृत्तियां बांध दी। इसमें महाकवि का अनेक राज्य में पदार्पण करनेके हेतु से आना और प्रतिवर्ष उनके द्वारा नवीन रचना रसपान कराने का लक्ष्य ही निहित था। इसी समय महाराज जयसिंह से वसुआ गोविन्दपुरा ग्राम जागीर में मिले। इसी बीच विहारी की आगरे में ही अरबी, फारसी ब्रजभाषा प्रेमी सुप्रसिद्ध गुणग्राही अब्दुलरहीम खानखाना से भेंट हुई। विहारी के एक दोहे से वे इतने प्रभावित हुए कि उनने सारी सतसई सुनकर उन्हें प्रति दोहा पर १-१ स्वर्ण मुहर पुरस्कार में दीं तथा पाँच सौ मुहरें पधारने की अगवानी भेंट अर्पण की विहारी का दोहा था—

गंग गौंछ मौंछैं जमुन, अधरन सरसुति रागु।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रगट खान खाना न कैं, कामद बदन प्रयागु ।।

बिहारी ने सतसई में महाराज जयसिह की प्रसंशा में कितने ही दोहे लिखे हैं। वे जोधपुर भी कुछ समय रहे थे जहां उनके दोहों की १५-१६ सौ संख्या वाली प्रति अब भी सुरक्षित हैं। मथुरा में इस लेख के लेखक के पास भी बिहारी सतसई की एक प्रति प्राचीन प्रति है जो १७८५ वि० में लिखी गई है। इसे कृष्ण कवि के घराने की प्रति कहा जाता है। इसके साथ ही सुन्दर कविराय का सुन्दर श्रृंगार ग्रन्थ भी जुड़ा हुआ है जो दोनों कवियों की स्नेह मैत्री का प्रतीक मालूम होता है।

१६९१ वि० में एक बार वे जयपुर गए हुए थे। राजा जयसिह उस समय अपनी नव विवाहिता रानी के अनुराग में डूब राज काज भूले हुए थे। बड़ी महारानी अनन्तदेवी जो चौहानी रानी के नाम से प्रसिद्ध थीं उनके चिन्ता व्यक्त करने पर बिहारी ने एक दोहा लिखा और उसे महाराज तक पहुँचवा दिया—

नहीं पराग नहीं मधुर मधु, नहिं विकास इहिं काल ।
अली कली ही सौं विंध्यौ आगे कौन हवाल ।।

निशान सही बैठा। महाराज रनिवास से बाहर आ गए। बिहारी की कविता जादू कर गई। इस समय बड़ी महारानी तथा महाराज की तरफ से भी बिहारी का अपार सम्मान हुआ। इस घटना की ख्याति भी दूर-दूर फैल गई और बिहारी को मनोरंजन के साथ ही नीति उपदेष्टा तथा गूढ़ हित चिंतना का रहस्यमय देवता भी माना जाने लगा। उनकी धोक राज घरानों में जम गई। यह गहरा तथ्य था कि जयपुर के महाराज मान-सिह के वन्श में जब कोई नहीं रहा तब जहांगीर ने जोधाबाई के अनुरोध से आमेर की गद्दी और 'मिर्जा राजा' की उपाधि मानसिह के पौत्र जयसिह को दे दी थी। दोहे के 'आगे कौन हवाल' पद में इस सम्मान के लिए आने वाली किसी आपत्ति की ओर संकेत था। क्योंकि अनेक चुगल शत्रु बादशाह के कान भरने को लगे थे।

इस घटना के बाद जयसिह आजन्म उनके परामर्श वाहक बने रहे। बिहारी ने उन की सतसई इन्हीं की रुचि पूर्ति हेतु प्रस्तुत की—

हुकुम पाय जयसाहिको हरि राधिका प्रसाद।
करी बिहारी सतसई, भरी अनेक सवाद ।।

इस दोहा में उनने अपने काव्य रचना के प्रेरक तीन व्यक्ति ही स्वीकार किए हैं। हरि (नरहरिदास बावा), राधिका (राधापत्नी) जयसिह (राजा जयसिह)।

रामसिह के विद्या गुरू

कुछ काल में ही जयसिह की बड़ी महारानी चौहानी रानी को पुत्र हुआ। जिसका नाम रामसिह था। १७०० वि० के लगभग बिहारी उस होनहार राजकुमार के शिक्षक नियुक्त हुए। इस समय वे जयपुर रहकर राजकुमार को राजनीति पढ़ाने लगे। १७१२ वि० के लगभग

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तक उनका रहना जयपुर में रहा परन्तु अब उनकी अवस्था ६० वर्ष के करीब हो चुकी थी अत: राज वैभव से विरक्त हो वे वापिस मथुरा लौटकर आ गए। उस समय अधिकांश में वे यमुना का स्नान देवदर्शन सत्संग और ज्ञान भक्ति की चर्चा में अपना समय बिताते थे। सतसई में अन्तिम भाग के कुछ दोहे उनकी इसी समय की मनो दशा के परिचायक हैं। ६४५ से ६६८ तक के दोहे इसी ध्वनि के हैं।)

युगल विहारी के भक्त विहारी

अब वे ब्रजके तीर्थों बनों में घूमने लगे थे। प्राय वृन्दावन में श्री स्वामी हरिदास जी के टट्टी स्थान में जो उनके पिता का गुरुद्वार था यहीं वे स्वयं भी शिष्यत्व ग्रहण कर चुके थे श्री श्यामा कुंज बिहारी में उनकी अनन्य आसक्ति जगती जा रही थी। गुरुजी की कृपा से उन्हें श्री बिहारी की युगल सेवा भी प्राप्त हुई जो उनके भानजे के पुत्र कृष्ण कवि ककोर के वन्शजों के यहाँ अभी भी विराजमान हैं। यहां अभी भी इसे "बिहारी जी की सेवा" कहा जाता है। बिहारी के कारण ही उनका सारा परिवार भी उस समय उस गद्दी का शिष्य हो गया। उनकी बहिन तुलसी के पौत्र कृष्ण कवि के बन्शजों की अभी भी इस गद्दी के प्रति अगाध निष्ठा है। श्रीउजागरजी के वन्शजों के यहां भी इसी संप्रदाय के श्रीकुन्जबिहारी भगवान की ही उपासना रूप पूजा है। गुरु स्थान पर नए महंत जी की प्रतिष्ठा होने के समय इन्हीं कुलों के प्रमुख पुरुषों को तिलक करने का कार्य अधिकार के रूप में प्राप्त है। राधा के पितृ वन्श वाले मिहारियों में भी अधिकांश लोग इसी स्थान के सेवक हैं। स्थान के वर्तमान महंत जी तथा उनके पूर्वके श्री रणछोड़ दासजी महाराजजी बिहारी की पत्नी राधा के पिन्ट वन्श के ही समादरणीय रत्न रहे हैं।

अन्तिम दिन

अपने अन्तिम दिनों में बिहारीलाल की भावनायें श्री कृष्ण की भक्ति में अधिक तल्लीन हो गईं और इस प्रकार शृंगार रस के सरोवर से भक्ति की कालिन्दी में आकर गोते लगाते हुए उस विश्व के अमर साहित्य साधक ने १७२१ वि० के फालगुन मास की शुक्ला ११ को अपना भौतिक शरीर मथुरा की देववंदित भूमि में बिलय कर दिया।

विहारी का चरित्र पक्ष इतना ही है किन्तु उनके कीर्ति शरीर का भावपक्ष अभी बाकी है। मथुरा, यमुना, गिरिराज, ब्रज के वन उपवन ब्रज के लीला स्थल, ब्रज के उत्सवों, और मथुरा के जनजीवन में विहारी के शब्द और भावनायें कहां-कहां अमरत्व साधना लिए बैठी हैं, अभी यह देखना शेष है। मथुरा के चतुर्वेदियों के दैनिक जीवन में, वाणी शब्दों और रचना व्यवहारों में बिहारी के काव्य का कहाँ-कहां आधिपत्य है यह भी खोजने की चीज है। विहारी के काव्य पर उनके युग की स्थितियों का प्रभाव बिहारी युग का साहित्यिक वातावरण, भक्ति की धारायें, सामयिक घटना चक्रों का उनके काव्य पर प्रभाव आदि वस्तुओं पर हम अगले लेखों में प्रकाश डालने का प्रयास करेंगे।

—卐—

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

शुद्धि पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्धि	शुद्ध स्वरूप
१	(१) ५	भारती	भारवी
५	८	वरों	वरन्
५	२०	सहित्य	सहित
६	१५	तत्वाधान	तत्वावधान
६	२३	साहित्यक कवियों	साहित्यसेवियों
८	१४	किया गया।	किया। गया,
२३	१५	मुस्ति	मुक्ति
३३	२४	Superfluour	Superfluous
३३	२४	Successiue	Successive
३३	२५	Beer	Been
३३	२७	Adunring	Admring
३४	४	Himseff	Himself
३४	४	Inuiting	Inviting
३५	७	Thorapson	Thompson
३५	११	GreasOn	Grearson
३८	६	द्घाटन	उद्घाटन
३६	१	माहकवि	महाकवि
३६	१३	सुठुराल	सुसुराल
४१	१	ब्रज लोक जीवन में हास्य	महाकवि बिहारीलाल का साहित्य शीर्ष
४१	२		सर्व सम्मत
४२	१६	बंध करों	बंध धरों

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"अ. भा. ब्रज साहित्य मंडल मथुरा" के मंत्रिमंडल के

-- सदस्यों की नामावलि --

नाम	विभाग
१—श्री बाबू वृन्दावन दास	अध्यक्ष
२— ,, जगदीश नारायण चतुर्वेदी	प्रधान मंत्री
३— ,, किशन प्रसाद जैन	संयुक्त प्रधानमंत्री
४— ,, आचार्य जुगल किशोर चतुर्वेदी	साहित्य गोष्ठी
५— ,, राम प्रसाद कमल	कवि कीर्ति
६— ,, डा० नारायन दत्त शर्मा	विद्यापीठ एवं परीक्षा योजना
७— ,, पं० जवाहरलाल चतुर्वेदी	ब्रज भारती—व्यवस्था
८— ,, सुरेन्द्र प्रसाद श्रीवास्तव	प्रबंध
९— ,, डा० राम नारायण सेठ	प्रचार
१०- ,, ला० प्रभूलाल 'तेलमिल वाले'	उत्सव समारोह
११- ,, चिरंजी लाल जैन	अर्थ
१२- ,, चौवे केदारनाथ	भवन-व्यवस्था
१३- ,, डा० नरेन्द्र चौधरी	ग्रंथ संपादन
१४- ,, अशोक बाजपेई	प्रचार
१५- ,, रामेश्वर उपाध्याय	लोक—साहित्य-संकलन
१६- ,, नृत्येन्द्र बिहारी सक्सेना	सँग्रहालय
१७- ,, गोपाल शंकर नागर	शोध
१८- ,, श्याम सुन्दर अग्रवाल	ग्रंथ प्रकाशन
१९- ,, नंदकिशोर पाठक	केन्द्र

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ब्रज साहित्य मंडल के कुछ प्रकाशन

१- व्रज की लोक-कहानियाँ—(सम्पादक डा० सत्येन्द्र)

ब्रज में प्रचलित रोचक लोक-कहानियों का वैज्ञानिक बर्गीकरण-पद्धति पर सङ्कलन। भूमिका, आवश्यक टिप्पणियों तथा उपयोगी शब्दकोश सहित अपने विषय की सर्वप्रथम पुस्तक, रङ्गीन आवरण, डिमाई साइज, पृष्ठसं० १०×१८५। सजिल्द मू०३।)

२- व्रज लोक-संस्कृति [सचित्र]—(सम्पादक डा० सत्येन्द्र)

ब्रज साहित्य मंडल द्वारा आयोजित लोक-शिक्षण-शिविर में अधिकारी विद्वान द्वारा ब्रजभाषा साहित्य, काल, सङ्गीत; इतिहास और लोक-वार्ता पर दिए गएभाषणोंक सङ्कलन। आर्ट पेपर पर छपे ३० चित्रों सहित,डिमाई सा०,पृष्ठ सं० २२७। सजिल्द मू० ४)

३- पोद्दार अभिनंदन ग्रंथ–प्रधान सम्पादक डा० वासुदेवशरणअग्रवाल।

सेठ कन्हैयालाल पोद्दार के सम्मान में ब्रज जनपद के बहुमुखी अंगों पर ८०से अधिक विद्वानों के लेखों का संग्रह। यह संग्रह ब्रजभाषा साहित्य एवम् संस्कृति के विश्वकोश के रूप में कई वर्षों के परिश्रम से तयार किया गया है। सुपर राइल साइज चिकने कागज पर मुद्रित सैकड़ों चित्रों सहित, पृष्ठ सं० ११५४। मूल्य ३०)

४- ब्रज का इतिहास—(सम्पादक श्री कृष्णदत्त वाजपेयी)

यह व्रज का प्रथम प्रामाणिक विस्तृत इतिहास है, जिसमें व्रज का भौगोलिक एवम् प्राकृतिक विवरण, व्रज के इतिहास की सामग्री, शूरसेन प्रदेश तथा श्री कृष्ण के समय से लेकर आज तक का व्रज का क्रमबद्ध इतिहास अनेक मानचित्रों सहित दिया गया है। ब्रज का पूरा परिचय जानने वालों के लिए यह ग्रन्थ अत्यन्त उपयोगी है। डिमाई साइज, पृष्ट २९०। मूल्य ५)

५- श्रीकृष्ण जन्म स्थान का इतिहास-(श्री कृष्णदत्त वाजपेयी) मूल्य ≡)

६- व्रज का लोक साहित्य—(सं० डा० सत्येन्द्र)

ब्रज के लोकसाहित्य का प्रथम व्यवस्थित सङ्कलन, सुपर रायल साइज पृष्ठ १५२। मूल्य ५)

७- अष्टछाप के वाद्ययंत्र [सचित्र]—(श्री चुन्नीलाल 'शेष') मू० ३)

८- व्रजभारती —(सम्पादक श्री कृष्णदत्त वायपेयी)

व्रज साहित्य मंडल की त्रैमासिक शोध-पत्रिका। वार्षिक मू० ५), एक प्रति १।)

विशेष—केवल ११) वार्षिक देकर व्रज साहित्य मंडल के सक्रिय सदस्य बनने वालों को मण्डल द्वारा सभी प्रकाशित ग्रन्थ पौन मल्य में ही प्राप्त होते हैं तथा 'ब्रज-भारती' निःशुल्क मिलती है।

उक्त तथा ब्रजभाषा सम्बन्धी अन्य सभी प्रकार के साहित्य के लिए निम्न पते पर पत्र-व्यवहार करें—

प्रकाशन मन्त्री, अ० भा० व्रज साहित्य मण्डल, मथुरा।

मुद्रक—हीरालाल प्रिंटिंग प्रेस मथुरा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ब्रज भारती

मार्गशीर्ष सं० २०२२ वि०

वर्ष १९ अङ्क २

संपादक

वृन्दावनदास

बी. ए., एल-एल. बी

प्रकाशक

किशन प्रसाद जैन

संयुक्त प्रधान मन्त्री

ब्रज साहत्य मण्डल, मथुरा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अनुक्रमणिका

क्रम	लेख	लेखक	पृष्ठांक
१	गोपाल-कृष्ण (कविता)	श्री भगवानदत्त चतुर्वेदी	१
२	संपादकीय	श्री वृन्दावन दास	२
३	रसखान (कविता)	श्री राजेन्द्र रंजन	७
४	पाक करें खाक तोहि (कविता)	श्री महेन्द्रनाथ शास्त्री	८
५	श्री रामसखे जी	श्री प्रभुदयाल मीतल	९
६	काश्मीर के प्रति (कविता)	श्री शंकरलाल चतुर्वेदी एम० ए०	१४
७	श्री नारायणभट्ट गोस्वामी	श्री भवेश पचौरी एम० ए०	१५
८	सामयिक सुभाषित		२१
९	ब्रज के कुछ लोक गीत	डा० शालिग्राम गुप्त एम० ए० पी एच० डी	२२
१०	एक महा काव्य की रचना	श्रीमती सरलार्जन एम. ए. साहित्य रत्न	२४
११	मुगलयुग के शक्ति शाली हिन्दू राजा	श्री वृन्दावनदास बी० ए० एल-एल० बी	२८
१२	ब्रज भारती (कविता)	श्री राजेन्द्र रंजन	३२
१३	श्रीमद् भगवद्गीता (कविता)	श्री सतीशचन्द्र मिश्र एम. ए०	३३
१४	स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद का ब्रज साहित्य	डा० कैलाश चन्द्र भाटिया एम० ए० पी० एच० डी० डि० लिट्	३५
१५	कविवर सोमनाथ और उनका काव्य	आचार्य वासुदेव कृष्ण चतुर्वेदी एम० ए०	३९
१६	शरद रजनी (कविता)	श्री राजेन्द्र रंजन	४२
१७	पत्र व्यवहार	श्री मोहनलाल शर्मा	४३
१८	श्री राधारानी (कविता)	,, ,,	
१९	ब्रज साहित्य मन्डल की दो गोष्ठियां	श्री किशन प्रसाद जैन एम० ए०, एल-एल० बी०	४५

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ब्रज भारती

[अखिल भारतीय ब्रज-साहित्य-मंडल की मुख पत्रिका]

वर्ष १९] मथुरा मार्गशीर्ष सं० २०२२ [अंक २

गोपाल—कृष्ण

(रचयिता-श्री भगवान दत्त चतुर्वेदी)

गायन चरायवे चले है ब्रज चन्द आज,
नन्द के अनन्द उरमांहि भयौ भारी है।
सीस नांय ईस कौं असीस पाय विप्रन नें,
लालन के हेतु सुभ कामना विचारी है॥
दीनन कौं दान दियौ, संतन को मान कियौ,
पूजन विधान कियौ श्रुति अनुसारी है।
बाँकी झाँकी निरखि अनोंखी नन्द नन्दन की,
नन्द बाबा बार बार जाय बलिहारी है ॥१॥

काँधे पै कामरी लकुटि कर माँहि राजै,
साजै सिर मोर को मुकुट छबि न्यारी है।
भाल पै तिलक कटि काछनी कसी है फेंटि,
रस भरी बांसुरी की धुनि अति प्यारी है॥
उर वन माल चारु चलत अनोंखी चाल,
संग बलराम भीर ग्वालन की भारी हैं।
गायन के पीछें जात बनहिं गुपाल लखि,
मातु मन माँहि बार—बार बलिहारी है ॥२॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

संपादकीय

विगत भारत–पाकिस्तान युद्ध पर अनेकों हिन्दी पत्र पत्रिकाओं में अनेक विचार पूर्ण लेख प्रकाशित हो चुके हैं । भारत–पाकिस्तान सम्बन्धों का विषय आज कल की ज्वलन्त समस्या है, उस पर आज भी बहुत कुछ लिखा जारहा है और जब तक समस्या का हल दृष्टिगोचर नहीं होता भविष्य में भी लिखा जाता रहेगा ।

कोई भी दो पड़ौसी राष्ट्रों के सम्बन्धों का आधार तीन प्रकार का ही हो सकता है, (१) शान्ति पूर्ण सहअस्तित्व (२) तटस्थता (३) शत्रुता । पाकिस्तान ने भारत के प्रति शत्रुता का रुख अपनाया है । पाकिस्तान के अस्तित्व को १८ वर्ष हुए हैं। इस काल में एक दिन भी ऐसा व्यतीत नहीं हुआ जब पाकिस्तान ने भारत का भला चाहा हो । पाकिस्तान का निर्माण दो राष्ट्रों के सिद्धान्त पर आधारित है इसका अर्थ यह है कि हिन्दू और मुसलमान दो पृथक् राष्ट्र हैं । पाकिस्तानी मनोवृत्ति यह है कि हिन्दू और मुसलमान कभी एक साथ नहीं रह सकते । हिन्दुओं और भारत के प्रति द्वेष और घृणा पाकिस्तानी नीति के आधार भूत सिद्धान्त हैं । पाकिस्तानी शासक और उन्हीं की सी मनोवृत्ति वाले पाकिस्तानी नागरिक अपने को गजनवी, गोरी, नादिरशाह, अहमदशाह, हलाकू, तैमूर और चंगेज का वन्शज घोषित करते हैं । इन बर्बर, असभ्य, नृशंस एवं महान् हत्याकारी लुटेरों को नायक इसलिये माना जाता है कि उन्होंने तत्कालीन निरीह हिन्दू जनता पर पाशविक अत्याचार किये थे । पाकिस्तान में हत्यारों को याद करके और चंगेज़ी एवं बाबरी खून की दुहाई देकर नेता लोग जनता में वीर भाव का संचार करना चाहते हैं । प्रश्न यह उठता है कि ऐसे लोगों को आदर्श मान कर चलने वाले लोग सभ्य और बहादुर बनेंगे या वहशी ।

जिस समय इन आक्रान्ताओं के आक्रमण हुए उस समय परिस्थिति उनके अनुकूल थी । इसलिये लूटमार और हत्या आदि जघन्य कृत्यों में उनको दृष्टि से उन्हें सफलता मिल गई । परन्तु क्या उन विगत ऐतिहासिक घटनाओं से कोई उदीयमान राष्ट्र सदा के लिए गाफिल रह सकता है ? क्या कोई समुन्नत राष्ट्र जिसकी संस्कृति और सभ्यता सर्वमान्य एवं सर्वोच्च हो पुरानी भूलों से चेतना ग्रहण नहीं करेगा ? पाकिस्तानी उन्हीं पुरानी बातों को सोच कर मूर्खता के स्वर्ग में विचरण करते रहते हैं । वे समझते हैं कि आज भी हिन्दू असगठित और दुर्बल हैं । पुराने जमाने में तो नायक के पीछे सेना रहती थी । यदि नायक की मृत्यु तो क्या उसको कोई चोट भी लग जाती और उसे रणक्षेत्र मे हटाया जाना पड़ता तो सारी सेना में भगदड़ मच जाती थी । आज तो जनरल चौधरी दिल्ली में बैठे ही पाकिस्तान की लाहौर तक पिटाई करा सकते हैं । क्या आज पाकिस्तानी टैंकों की भी जो दुर्जय समझे जाते थे वह दशा नहीं हुई जो मध्य कालीन युद्धों में हिन्दू सेना के हाथियों की हुआ करती थी ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पाकिस्तान तो इस युग में भी भारत और हिन्दुओं के प्रति जिहाद के नारे लगाता हैं। काफिरों का बध करने के लिए मुजाहिदों को घुसपैठियों के रूप में भेजा जाता है। ये पुरानी बातें तो उन्हीं लुटेरों की थीं जो धर्म का नाम लेकर अपने दलों को गुमराह कर लूटपाट के अभिप्राय से भारत लाया करते थे। मध्य कालीन लुटेरों के आक्रमणों के समय भारत में बड़ी समृद्धि थी, यहाँ सोने चाँदी के भण्डार थे। यहां के देव मन्दिर तो धन धान्य से भरपूर थे। भारत की समृद्धि लुटेरों के आकर्षण का कारण थी।

मध्यकालीन आक्रान्ता जिन लोगों को सैनिक बना कर भारत लाते थे वे अशिक्षित, असभ्य और जंगली जातियों के लोग होते थे। उन लोगों से उनका देश छुड़ाना टेढी खीर थी। उनको धर्म के नाम पर गुमराह किया जाता था और लूट के माल का लोभ दिया जाता था। पाकिस्तान इस बीसवीं सदी में जिहाद आदि जहालती नारों में विश्वास करता है। आज शिक्षा के इस प्रगतिशील युग में ऐसे जाहिल पाकिस्तान में ही हो सकते हैं जो धर्म के नाम पर दूसरों को लूटना या हत्या करना सबाव समझें और अन्ध विश्वास से प्रेरित होकर बहकाने वाले लोगों के हाथ की कठपुतली बन जाँय। क्या शिक्षा के इस युग में इन हथकन्डों से काम चल सकता है और लोग धोखे में आसकते हैं कि पड़ोसी देश के राज्य भाग को हड़प करना राजनीतिक शत्रुता नहीं धार्मिक कार्य है ?

पाकिस्तान के विदेश मन्त्री मियाँ भुट्टो गर्व पूर्वक कहते हैं कि भारत पर ८०० वर्ष तक पाकिस्तानियों ने राज्य किया है और २०० वर्ष ब्रिटिश लोगों ने। पाकिस्तान को बने तो १८ वर्ष ही हुए हैं फिर उन्होंने ८०० वर्ष राज्य कैसे कर लिया ? मियाँ भुट्टो का आशय भारत में मुसलमान शासन काल से प्रतीत होता है। हमने सब प्रकार के मुस्लिम शासन–काल का हिसाब लगाया परन्तु भुट्टो मियाँ की संख्या तक न पहुंच पाये। हां, सन् १००० ई० से जब कि मुसलमान लुटेरों ने भारत पर आक्रमण करना आरम्भ किया था यदि हम गणना करें तो अवश्य ६००, ७०० वर्ष होते हैं, परन्तु लुटेरे तो आये और चले गये। बड़े संघर्ष के बाद जो लोग भारत मे ठहरे और अपना राज्य स्थापित करने की आकांक्षा की तो वे हिन्दुओं के सहयोग के आधार पर ही अपना राज्य क़ायम कर सके। हिन्दुओं मे तो सच्ची राष्ट्रीयता है। हिन्दुओं ने उन मुसलमानों को जो यहाँ ठहरे और उनके सहयोग की अपेक्षा की भारतीय समझा न कि गैर। इतिहास साक्षी है जिन मुसलमान शासकों ने सहयोगात्मक भावना रक्खी उनका राज्य चक्रवर्ती हो गया, वे भारतीय सम्राट कहलाये उनके शासन काल में हिन्दू धर्म, कला, साहित्य आदि की महती उन्नति हुई और एक संस्कृति का निर्माण हुआ जिसमें हिन्दुओं और मुसलमानों ने कन्धे से कन्धा भिड़ा कर योगदान दिया। निस्संदेह कुछ मुसलमान शासक दुर्बुद्धि और धमन्धि थे। यह एक ऐतिहासिक तथ्य है कि ऐसे शासकों का राज्य उनके जीवन काल में ही छिन्न भिन्न हो गया, उनको हिन्दुओं का तीव्र विरोध सहन करना पड़ा और वे निभ न सके। मियां भुट्टो ने यह भी कहा था कि हमने हिन्दुओं को तहज़ीब सिखलाई। क्या देवमन्दिरों को ध्वस्त करा,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मूर्तियों और देव विग्रहों को खण्डित करना, देव स्थानों से लूटे हुए स्वर्ण और रजत से ऊँट और खच्चरों को भर कर विदेश ले जाना, निरीह सन्त, महात्माओं, स्त्रियों और बालकों की हत्या करना आदि जघन्य कृत्य सभ्यता के चिह्न हैं। मियाँ भुट्टो जिन विजयों के गर्व में मत्त हैं वे तो इस प्रकार की थीं। क्या करोड़ों रुपयों की लागत से बने अभूत पूर्व कला कृतियों से सुसज्जित देव मन्दिरों को भूमिसात् करना सभ्यता थी या वहशीपन ? तथ्य तो यह है कि जो बाहर से आये वे जंगली, वहशी, लुटेरे, आततायी और मनुष्य के रूप में खूँख्वार जानवर थे, उनके वन्शज भारत में रहकर और भारतीय संस्कृति से प्रभावित होकर जानवर से इन्सान बने। परन्तु मियाँ भुट्टो तो उल्टी ही बात कहते हैं

मध्य काल में अनेक समय ऐसे आये जब हिन्दुओं को मुसलमानों से त्रस्त होना पड़ा परन्तु वह समय थोड़ा था। हिन्दुओं ने अपने बाहुबल से स्थिति को अनेकों बार अपने अनुकूल बनाया और आततायियों को मुँह की खानी पड़ी। आततायी कभी एक होकर यहां न रहे। उनमें धन और सत्ता के लिये आपस में भी बड़ी होड़ थी और इसके लिए वे अपनों पर भी निर्मम यातनाऐं ढाते थे। बहुधा उन्हें आपसी लड़ाईयों में हिन्दुओं से सहायता लेनी पड़ती थी।

मुसलमानों के आगमन से सैकड़ों वर्ष पूर्व भारत पर शकों और हूणों के भीषण आक्रमण हुए। भारत के धनैश्वर्य से लालायित होकर ही वे लोग भारत में आये। भारतीय वीरों ने उन आक्रान्ताओं का समूल उन्मूलन कर दिया। उनमें ऐसी मार पड़ी कि वे भाग गये और जो रह गये उन्होंने हिन्दू धर्म अङ्गीकार कर लिया। यह एक ऐतिहासिक तथ्य है कि शकों और हूणों ने लाखों की संख्या में भागवत धर्म अङ्गीकार किया, तलवार की धार पर नहीं वरन् हिन्दू धर्म की महत्ता और आभा के प्रति नतमस्तक होकर। ईसा से पहिले और बाद तक हजारों वर्ष पर्यन्त हिन्दू राजाओं और गणराज्यों ने भारत में राज्य किया मध्य काल में कुछ सदियों तक भारत को यदि परतन्त्र रहना पड़ा तो क्या इसका यह अर्थ है कि वह भविष्य में गुलाम रहेगा और मियाँ भुट्टो उसको सुरक्षा परिषद के प्रस्ताव से गुलाम बना लेंगे।

पाकिस्तान लातों का देव है, वह बातों से कदापि न मानेगा। पाकिस्तानियों का नशा अभी उतरा नहीं है कारण अभी उनमें यथेष्ट मार नहीं पड़ी है। पाकिस्तान के प्रति रियायती रुख रखना सर्प को दुग्ध पिलाना है। विगत अठारह वर्षों से पाकिस्तान एक न एक शत्रुता पूर्ण कार्य करता रहा है उसका उसे उचित दण्ड नहीं मिला। इस हठपूर्ण शत्रुता के रुख से उसे लाभ ही रहा है, अतः उस रुख को वह कठिनता से छोड़ेगा। यदि उसके प्रति आरम्भ से ही उसकी अनुचित बातों को न मानकर दृढ़ता पूर्वक उचित कार्यवाही की जाती तो उसका हौसला इतना न बढ़ता।

पाकिस्तानी शासक उसी मानसिक बीमारी के शिकार हैं जिसके कि हिटलर और

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मुसोलिनी थे। वे भारत के भूभाग को हड़प कर अपने देश के इतिहास में कीर्ति का अध्याय जोड़ना चाहते हैं। वे समझते हैं कि जिस प्रकार मध्यकालीन लुटेरे जिनको कि वे अपना पूर्वज मानते हैं लूटमार करने में सफल हुए वे भी सफल हो जायेंगे। परन्तु यह बीसवीं शताब्दी है, इसमें उनके देश के इतिहास में उनकी पिटाई का अध्याय जुड़ेगा, विजय का कदापि नहीं।

पाकिस्तानी शासक एक आंख लड़ने की ओर एक आंख मेल की रखते हैं। नित्य प्रति युद्ध विराम का उल्लंघन कर रहे हैं, भारतीय नजर बन्दों के साथ अत्याचार पूर्ण बर्बर व्यवहार कर रहे हैं भारतीय माल की कुर्की कर रहे है और ताशकन्द में बार्ता को भी तयार हैं। यह सब इसीलिये हैं कि हम प्रतिपल उनसे समझौते को ही उत्सुक रहते है। स्वयं शास्त्री जी कह रहे हैं कि पाकिस्तान का वर्तमान व्यवहार उनके राष्ट्रपति की ताशकन्द में वार्ता की इच्छा से मेल नहीं खाता है। क्या ऐसी दशा में यह उचित न था कि पाकिस्तान के राष्ट्रपति से उसी हालत में बात की जाती जब कि वह भारत की समूची शिकायतों को दूर करके वार्ता के लिए उपयुक्त वातावरण उत्पन्न कर देता ?

राष्ट्र भाषा सन्देश—

हिन्दी साहित्य सम्मेलन द्वारा प्रकाशित उपरोक्त साप्ताहिक हमारे पास नियमित रूप से आरहा है। पत्र के संपादक महोदय ने हमसे आशा प्रकट की है कि यदा कदा पत्र का कुछ अन्श जो हमें अधिक रुचिकर हो हम अपनी पत्रिका में उद्घृत कर दिया करें। हम ता० २३ अगस्त सन् १९६५ वाले अंक से 'हिन्दी की रक्षा का युद्ध' शीर्षक लेख का कुछ अंश उद्धृत करते है।

हिन्दी की रक्षा का युद्ध

भारत को अपने पड़ोसी पाकिस्तान से जो युद्ध करना पड़ रहा है, वह देश की भौगोलिक रक्षा का ही नहीं, उन सब सान्यताओं की रक्षा का युद्ध है, जो भारतीय संस्कृति में पुंजीभूत और संश्लिष्ट है। हिन्दू और मुसलमान दो पृथक् राष्ट्र हैं और उन्हें पृथक्-पृथक् रहना चाहिए, इसलिए कश्मीर पाकिस्तान से मिल जाना चाहिए, क्योंकि वहाँ के निवासियों में ९० प्रतिशत मुसलमान हैं—यह दावा करते हुए पाकिस्तान ने लुटेरों और डकैतों के ढंग पर लुक-छिप कर अत्याचारी अटीला और जंगली हलाकू की तरह भारत पर नृशंस हमला किया है। भारत को आत्मरक्षा में शस्त्र उठाना पड़ा है। भारत ने लुक-छिप कर घुस पैठ कर चोरों की तरह हमले नहीं किये। भारत हिन्दू मुसलमान का भेद नहीं करता। भारत किसी दूसरे की भूमि को हड़पने की आकांक्षा नहीं रखता। पाकिस्तान की ओर से मांग होने पर भी देश में रहने वाले अपने सब मुसलमान भाइयों को पाकिस्तान भेजने को भारत तैयार नहीं होगा। यदि भारत पाकिस्तान को

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इसी बिना पर परेशान करने पर तुल गया होता, तो उसने वहाँ से पीड़ित कर निकाल भगाये कई लाख हिन्दुओं को आबाद करने के लिए, पाकिस्तान की भूमि प्राप्त करने के लिए उस पर बरसों पहले हमला कर दिया होता, उसमें उसकी विजय हुई होती और संसार भारत के इस कार्य का समर्थन ही करता, क्योंकि ऐसा काम पाकिस्तान की अपनी घोषित नीति के अनुरूप ही होता और संसार के इतिहास में ऐसी घटना बेमिसाल नहीं मानी जाती। भारत की मान्यताएँ भारत की परम्परा, भारत की संस्कृति ऐसी सँकुचित दृष्टि से निर्मित नहीं हुई है और न इस सँकीर्ण विचार को भारत ने अपने जीवन में कभी स्थान दिया है। भारत के निवासी आपस में मिलजुल कर रहना चाहते हैं। जो भारत भूमि का पुजारी है, जो राष्ट्र के प्रति निष्ठा रखता है, जो इस भूमि की पवित्रता की रक्षा को अपना सर्वोपरि कर्तव्य समझता है, वह भारत पुत्र हैं, चाहे वह किसी भी धर्म का, किसी भी सम्प्रदाय का, किसी भी जाति का, क्यों न हो। आज पाकिस्तान के अतिक्रमण और आक्रमण का सामना करते हुए जो भारतीय प्राणोत्सर्ग कर रहे हैं, उन सब की यही भावना है। इस बात को दुनिया देख सकती है। जाति और धर्म का कोई भेद भारत की रक्षा की लड़ाई में जूझने वाले सैनिकों में नहीं है। भारत ने देश का शासन प्रजातन्त्रात्मक पद्धति से संचालित करने के लिए संविधान का निर्माण किया है, जिसमें हर एक को बिना भेदभाव के समान अधिकार प्राप्त है। एक करोड़ से अधिक ईसाई प्रायः छः करोड़ मुसलमान और न जाने कितने धर्मों और सम्प्रदायों के मानने वाले भारतीय उस वृहत् प्रजातन्त्र के बराबर की साझीदारी के सदस्य हैं, जो संसार का सब से बड़ा प्रजातन्त्र है। इसलिए, यह युद्ध उन सब मान्यताओं की रक्षा का युद्ध है, जिनकी युग—युगों से उसने रक्षा की है और जिसके बल पर वह आज सब से बड़ा प्रजातन्त्र राष्ट्र बना हुआ है।

भारत प्रजातन्त्र पद्धति की रक्षा के लिए लड़ता रहेगा, क्योंकि उसकी स्वाधीनता किसी एक अधिपति, एक राजा, अथवा एक अधिनायक के लिए नहीं है। किसी एक सम्प्रदाय या जाति के लिए तो नहीं ही हैं। यही पुंजित बल उसकी विजय सुनिश्चित करेगा। यह बल प्रजातन्त्र का बल हैं। यह प्रजातन्त्र केवल मुण्डों की गणना से नहीं, बल्कि उन सब परम्पराओं, थातियों और विरासतों से रक्षित है, जो अनादिकाल से भारतीयों की सम्पदा हैं। उन विरासतों और थातियों में ही राष्ट्रभाषा की भी गणना है। राष्ट्रभाषा हिन्दी का उद्भव और विकास समस्त भारतीयों के सम्मिलित प्रयास का फल है वह उत्तर में उत्पन्न हुई, दक्षिण में पनपी और पूरब पश्चिम में विकसित हो कर समस्त देश में प्रसारित हुई। युद्ध क्षेत्रों में सैकड़ों बरसों से सैनिकों ने हिन्दी भाषा का प्रयोग किया है, चाहे वे राजपूत सैनिक रहे हों, मुगल सैनिक रहे हो, चाहे मरहठे रहे हों, चाहे तेलगांन रहे हो, या बंगाल के रहे हो। आज भी हमारे सैनिक हिन्दी में आदेश पाते हैं, हिन्दी में आपस में बात करते है, हिन्दी ही उनकी राजभाषा राष्ट्र भाषा और विचार विनिमय की सर्वप्रधान माध्यम है। आज पाकिस्तान की भूमि पर विजय श्री प्राप्त करते हुए हमारे सैनिक जयजयकार की आवाज हिन्दी में बुलन्द कर रहे हैं, जिसकी प्रतिध्वनि से समस्त

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भारत गूँज रहा है। इसी राष्ट्र भाषा हिन्दी की रक्षा का युद्ध आज हम लड़ रहे हैं और इसी हिन्दी में हमारी सारी परम्परा, संस्कृति विरासत और थाती समाविष्ट है। हम इस युद्ध में विजयी होकर रहेंगे। यह विजय भारत की होगी, भारतीय जनता की होगी, भारतीय प्रजातन्त्र की होगी भारत की वाणी की होगी, जो हिन्दी है।

आभार स्वीकार

हिन्दी जगत के यशस्वी बयोवृद्ध साहित्य सेवी श्री महेन्द्र जी ने अपनी मासिक पत्रिका 'साहित्य सन्देश" में मन्डल के प्रति अपनी शुभाकांक्षा प्रगट की है। उन्होंने मण्डल के पुराने तथा नवीन कार्यकर्ताओं को पिछले विरोध और वैमनस्य को भुलाकर मण्डल के हित में कार्य करने की सलाह दी है। हमें विश्वास है कि अपने परम हितैषी श्री महेन्द्र जी की शुभ कामना एवं आशीर्वाद को ग्रहण कर मण्डल के समस्त कार्यकर्ता ब्रज क्षेत्र एवं ब्रज साहित्य की सेवा में रत होंगे।

सदा की भाँति मण्डल के संयुक्त प्रधान मन्त्री श्री लिशन प्रसाद जैन के अतिरिक्त सर्व श्री राम प्रसाद कमल सुरेन्द्र प्रसाद श्री वास्तव, और जुगल किशोर चतुर्वेदी आदि ने मण्डल की समस्त गति विधियो में अपूर्व योग दान दिया इसके लिए वे धन्यवाद के पात्र हैं।

वृन्दावनदास

--❀--

—रसखान—

(श्री राजेन्द्र रंजन)

(१)

रास रसेस ब्रजेस की कीरत चित्तहिं लाय सप्रेम बखानो।
साहकी संकन नैंकुकरी ब्रज धाम की पावनता अनुमानो।
रंजन, मान गुमान भरी इतरानी समानी सनेह सों सानी।
भाव प्रभाव भरी रस की मन मानी बड़ी रसखान की बानी।

(२)

व्रज कानन गाय चरामन हार गुपालहिं गाय रिझाय गयो।
नव नेह की नीत निभाय गयो अरु प्रीत की रीत बताय गयो।
मिठलोने अमोलन बोलन में व्रज की चरचा बतराय गयो।
कवि रंजन चित्तहिं भाय गयो रसिया रसखान कहाय गयो।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पाक करें खाक तोहि एक ही पटक्के में

(कवि महेन्द्र नाथ शास्त्री)

१

अरि बर दण्डन प्रचण्डल दण्ड दैन वारे,
प्यारे भारतीय वीर लरत लटक्के में ।
सुकवि "महेन्द्र भरे ब्रेन अरु टैंकन कों,
फेंकत फफेर फेर फारत फटक्के में ।
हार नाँहि. रन में मचावत है मार—मार,
झट झटकारें ताहि एक ही झटक्के में ।
जो पै कहूं भूल फसो इनके कटक्के में तो ।
पाक करें खाक तोहि एक ही पटक्के में ।

३

जो पै तेंनें धमकी दिखाई हमें चीन की तो
चीन गडकामें तिन्हें एक ही गड़थे में ।
भनत "महेन्द्र" तेरे गरब गरूर, क्रूर ?
चूर कर डारें आमें नेंकुना गड़थे में :
नाँहि अब हटि है रन भूमी सो पीछें रंच,
सट सटका में तोहि एक ही सड़थे में ।
छोड़ सब सान्ती, करि है क्रान्ती करारी भारी,
हिन्द हड़पैगो "पाक" एक ही हड़ थे में ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ब्रज भाषा साहित्य के एक विशिष्ट भक्त--कवि

श्री राम सखे जी

लेखक--श्री प्रभुदयाल मीतल

ब्रज-भाषा के जिन सैंकड़ों भक्त–कवियों ने अपनी असंख्य रचनाओं से हिंदी भक्ति साहित्य को समृद्ध किया है, उनमें राम सखे जी अपनी निराली उपासना–पद्धति और रचना शैली के कारण कुछ विशिष्टता के अधिकारी हैं। माध्व संप्रदाय में भगवान विष्णु की उपासना दास्य भाव से की जाती है, इसमें भगवान् की ऐश्वर्य प्रधान भक्ति की विशेषता स्वीकृत है, रामोपासक संप्रदायों में भी भगवान् राम की ऐश्वर्य प्रधान भक्ति और दास्य भाव की उपासना को अधिक महत्व दिया जाता हैं, इन संप्रदायों के ग्रन्थ विशेष रूप से संस्कृत भाषा में हैं, हिन्दी भाषा के रामोपासक कवियों की रचनाएँ प्राय: अवधी बोली और दोहा— चौपाई छन्दों में मिलती है। किन्तु रामसखे जी की यह विशेषता है कि उन्होंने माध्व संप्रदाय के अंतर्गत भगवान् राम की माधुर्य भक्ति और सख्य भाव की उपासना प्रचलित की थी, परंपरागत मर्यादामार्गीय रामोपासना में दास्य भाव की अवहेलना कर कृष्ण–भक्तों की तरह सख्य भक्ति का प्रचार और ब्रज भाषा में ललित गेय पदों की रचना करना राम सखे जी का निश्चय ही निरालापन है, इसीलिए हिंदी के सैकड़ों भक्त–कवियों की पंक्ति में वे सरलता पूर्वक पहिचाने जा सकते हैं।

राम सखे जी माध्व संप्रदाय के अंतर्गत एक विशिष्ट रामोपासक पंथ के प्रवर्तक थे, उनके पंथ की प्रमुख गद्दियाँ अयोध्या और मेहर में हैं, इनमें अयोध्या की 'नृत्य राघव कुंज' अधिक प्रसिद्ध है, वे सुप्रसिद्ध भक्त और संत होने के साथ ही साथ अच्छे कवि और संगीतज्ञ भी थे, उनके रचे हुए कई ग्रंथ उपलब्ध हैं, ''राम रसिकावली'' से ज्ञात होता है कि उनका जन्म जयपुर राज्य में हुआ था। उनमें आरंभ से ही भक्ति के अंकुर विद्यमान थे और वे बाल्यावस्था से ही भगवान रामचन्द्र की भक्ति करने लगे थे, (१) ऐसा जान पड़ता है, उनका मूल नाम कुछ और था, किंतु आरम्भ से ही राम की सखा भाव से उपासना करने के कारण वे 'राम सखे' के नाम से प्रसिद्ध हुए, उनकी रचनाओं में भी यही नाम मिलता है।

अयोध्या की 'नृत्यराघव कुंज' से उनके जीवन चरित्र की एक छोटी सी पुस्तिका ''श्री राम सखे चरिता मृत'' तथा उनकी प्रमुख रचना ''नृत्य राघव मिलन'' का प्रकाशन हुआ है, उनमें लिखा गया है कि राम सखे जी का जन्म जयपुर के गौड़ ब्राह्मण कुल में हुआ था और ''नृत्य राघव मिलन'' ग्रन्थ की रचना सं० १८०४ में हुई थी, (२) उनका ठीक--ठीक जन्म संवत् अज्ञात है, किंतु ऐसा अनुमान है कि वह सं० १७६० के लगभग होगा।

---

(१) जैपुर देश जन्म प्रभु लीना, बालहि तें रघु पति रस भीना [राम रसिकावली पृ० ९६२]

(२) संवत् अष्टादश चतुर, शुक्ल मधुर मधु तीज।
भयौ नत्य राघव मिलन, उद्भव सब रस बीज॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वे किशोरा वस्था में ही उपयुक्त गुरु की खोज में घर से निकल पड़े और घूमते हुए माध्व संप्रदाय की मूल गद्दी उड़पी जा पहुँचे थे। वहाँ उन्होंने तत्कालीन आचार्य श्री वशिष्ठ तीर्थ जी से माध्व संप्रदाय की दीक्षा ली थी, वशिष्ठ तीर्थ जी कृष्णोपासक होते हुए भी राम कृष्ण में अभेद बुद्धि रखते थे, उन्होंने राम सखे जी की रुचि के अनुसार उन्हें भगवान् रामचन्द्र की सखा भाव से ही उपासना करने का आदेश दिया था।

अपने गुरु जी से आज्ञा प्राप्त कर वे तीर्थाटन करते हुए अयोध्या पहुँचे, वहाँ पर वे सरयू नदी के वासुदेव घाट पर कुटी बनाकर भजन करने लगे, उनके पास नृत्य करते हुए भगवान् रामचन्द्र की एक प्रतिमा थी, उन्हीं 'नृत्य राघव' की वे सखा भाव से उपासना करते थे, अयोध्या में उनके अनेक शिष्य हुए और कालांतर में वहाँ पर 'नृत्य राघव कुंज' का निर्माण हुआ, उन्हें एकांत में भजनोपासना करना रुचिकर था, अत. वे अयोध्या से हटकर चित्रकूट चले गये, वहां पर पर्याप्त समय तक निवास करने के अनंतर सं० १८३१ में मेहर में जाकर रहने लगे थे, वहाँ पर ही उनका देहावसान हुआ था।

'मिश्रबंधु विनोद' में राम सखेजी का उल्लेख कवि सं० ८६० पर है, उनमें उनके कुछ ग्रन्थों का नामोल्लेख तो है, किंतु उनका जीवन—वृत्तांत नहीं है, उनका रचना काल सं० १८१५ बतलाते हुए उन्हें साधारण श्रेणी का कवि लिखा गया है, जो ठीक नहीं है, उनका काल सं० १७८० के लगभग जान पड़ता है, उनकी रचनाओं से वे अच्छे कवि और संगीतज्ञ ज्ञात होते हैं, उनके रचे हुए ग्रन्थ इस प्रकार है—

१—नृत्य राघव मिलन	२—कवितावली
३—पदावली	४—द्वैत भूषण
५—रूप रसामृत सिन्धु	६—दान लीला
७—बानी	८—मंगल शतक
९—राग माला	१०—रास पद्धति

उपर्युक्त ग्रंथों के अतिरिक्त मंगल लतिका, राघवेन्द्र रहस्य रत्नाकर, सीता रामचन्द्र रहस्य पदावली भी उनकी रचनाएं कही जाती हैं, उनके कई ग्रन्थों की हस्त लिखित प्रतियाँ छतरपुर पुस्तकालय में तथा अन्यत्र सुरक्षित है,

उनके भक्ति--ज्ञान तथा काव्य संगीत की बड़ी ख्याति थी। उनसे संबंधित कई चमत्कार पूर्ण अनुश्रुतियाँ प्रचलित हैं, जन साधारण के अतिरिक्त उस समय के कई राजा और नवाब भी उनसे प्रभावित हुए थे, पन्ना नरेश हिंद पति और मैहर नरेश दुर्जन सिंह उनका बड़ा सन्मान करते थे, मेहर राज्य की ओर से ही अयोध्या की सुप्रसिद्ध 'नृत्य राघव कुन्ज' का निर्माण हुआ। "राम रसिकावली" में उनकी गेय रचनाओं पर लखनऊ के नवाब के मुग्ध हो जाने का

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इस प्रकार उल्लेख हुआ है ।

जानहिं राग रागिनी भेदा । गान करहिं जस विधि कह वेदा ।।
ध्रुपद ख्याल टप्पा पद रूरे । रचहिं राम के प्रेमहिं पूरे ।।
एक समय यक पदहिं बनायौ । आयौ गायक ताहि सिखायौ ।।
गायक सो लखनऊ सिधारा । गायौ सो नवाब दरबारा ।।
सुनत नवाब रीझि अति गयऊ । पूछ्यौ केहिं मुख निर्मित भयऊ ।।

उक्त नवाब को जब ज्ञात हुआ कि उन पदों के रचियता राम सखे नामक एक संत हैं जो मैहर में निवास करते हैं, तो उसने बिपुल धन भेंट करने का प्रलोभन देते हुए उन्हें अपने पास बुलाना चाहा, किन्तु वे नहीं गये, उक्त नवाब का नाम नहीं लिखा गया है, किन्तु डा० भगवती प्रसाद सिंह का अनुमान है कि वह लखनऊ का प्रसिद्ध नवाब आसफ उद्दौला था, जिसकी उदारता और कला प्रियता के कारण यह उक्ति प्रसिद्ध है–"जिसको न दे मौला, उसे दिलाये आसफ उद्दौला" (१) ।

उनके संप्रदाय की चार गद्दियाँ अयोध्या में और दो विन्ध्य प्रदेश में है, अयोध्या की गद्दियां–१, नृत्य राघव कुंज, २, राम सखे जी की बगिया, ३, श्रावण कुंज और ४. सरयू मन्दिर के नाम से प्रसिद्ध हैं, श्रावण कुंज में ही गोस्वामी तुलसी दास जी की हस्तलिखित "बाल कांड" की प्रति सुरक्षित है, जो अपने ऐतिहासिक महत्व के कारण हिंदी जगत में प्रसिद्ध है, विन्ध्य प्रदेश की गद्दियाँ नेहर और रीवां में हैं, उनके संप्रदाय के अधिकांश अनुयायी अवध और विन्ध्य प्रदेश में निवास करते हैं ।

उनका रचा हुआ "नृत्य राघव मिलन" इस पंथ का सिद्धांत ग्रन्थ है, इसमें १८ प्रकरण हैं, इसकी रचना ब्रज भाषा के दोहा–चौपाई छन्दों में हुई है, इसके कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं––

रसिक अनन्य वहै सुख दानी । राम रूप बिनु लखहिं न आनी ।।
छबि आसक्त रहहिं मन माहीं । छन पल राघव विसरत नाहीं ।।
हेरि कोऊ सुन्दर नर-नारी । राम वियोग करहिं अति भारी ।।
वेष नृपति छैलन असबारी । आवत राम ध्यान छवि कारी ।।
सुनि कोकिल कर कूक मृदु, नटनि मयूर निहारि ।।
'राम सखे' मन करत झख, मिलन राम छवि वारि ।।
राम रास रस जो मतवारे । तिनकों लगत सकल मत खारे ।।

[१] राम भक्ति में रसिक संप्रदाय, पृ० १३२.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पिअहिं राम रस भोगहु करहीं । तउ जग कर्म---पास नहिं परहीं ।।
जोग भोग दोउ सम करि लेखहिं । राम रूप बिनु एक न पेखहिं ।।
पवन रहे सब में अरु न्यारी । तैसेहिं रसिकन गति जग भारी ।।
रसिकन की कोउ नकलहु पावहिं । तो वह कबहुं असल है जावहिं ।।
मिलहिं नृत्य राघव तिहिं लगि गल । तजहिं न वांहि रास महि छिन पल ।।
हनुमत शिव व्यासादि मुनि, तिन कर अति लखि चारू ।
भनेहुं 'नृत्य राघव मिलन' राम सखे रस सारु, ।।

उनके अन्य ग्रथों में अधिकतर ललित राग–रागनियों मे कथित पद हैं, जिनके कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं—

ये दोउ चन्दा वसी उर मेरे ।
दसरथ--सुत और जनक नंदिनी, अरुन कमल कर कमलन केरे ।।
बैठे सघन कुंज सरयू तट, आस--पास ललना गण घेरे ।
चन्द्रवती सिर चंवर ढुरावैं, चन्द्रकला तन हँसि--हँसि हेरे ।।
ललित भुजा द्वै संग परस्पर, झुकि रहे केस कपोलन नेरे ।
'राम सखे' छवि कहि न परत तब, पान पीक मुख झुकि–झुकि गेरे ।।१।।
देखो सखी दसरथ--राज--दुलारे ।।
गोरे वरन बदन अति सुन्दर, पीतांबर पटवारे ।
हीरा, लाल, जवाहर, मोती, मनिमाला उर डारे ।।
सिर चौतनियां टोपी सोहै, कुंचित केस सँवारे ।।
स्त्रवननि कुंडल अति छवि छाजै, मनहुँ गगन विच तारे ।।
कर में वाजूबन्द विराजैं, सारंग बान सुधारे ।
नवल सखा सब संग में खेलन, चले जात हैं सकनि सकारे ।।
चढ़े तुरंगनि, चले उमंगनि, पुर नर--नारि निहारे ।
'राम सखा' पुर बाहर ठाढ़े दरसन दें प्रभु प्यारे ।।२।।
संझा आवनि पिय की लावनि, देखो भावनि, अवध गली चलि ।।
मृगया वेष हरित चरना तन, अरु बन कुसुम सजैं, गुजैं अलि ।।
लिये कर कुही, तुरंग कुदावत, जुलफें छूटी पेंज हिये बलि ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

'राम सखे' यह छवि पीजे अब, नेह गेह कुल लाज आज दलि ।

रघुवर बोलत मधुरी वानी ।।
क्रीट मुकुट मकराकृत कुंडल, छवि नहिं जात बखानी ।
हम सरयू जल भरन जात रहि, बीच राम रस सानी ।।
बान कमान के लोचन भारत, तकि-तकि तीरन मानी ।
घूंघट नेंौ छूटि गयौ है, लाज छोड़ि मुसकानी ।।
अपर नारि-नर मिले अवध के, ए सब, फिरत हँसानी ।
लोक—कुटंब अब मोहि न भावे, दसरथ-सुत रस सानी ।।
रघुवर, लछमन, भरत, सत्रुधन, दसरथ की रजधानी ।
'राम सखे' कौसल पुर जीवन, रघुवर हाथ बिकानी ।।४।।
सोये अवध किशोर, चलौ सखि सोये, अवध किशोर ।
रतन जटित कौ पलंग मनोहर, ताकी छवि अति जोर ।।
जनक—नंदिनी चरन पलोटे, रस—भर भयौ घन घोर, ।
'राम सखे' प्रिय दरसन कारन, आइयँ उठि—उठि भोर ।।५।।

श्री रघुवर की आजु वनी छवि भारी ।
सहित जानकी रतन सिहासन, राजत अवध विहारी ।।
क्रीट मुकट मकराकृत कुंडल, तिलक पलट दुतिकारी ।
बदन मयंक ताप भय, मोचन, मंद हँसनि अति प्यारी ।।
चंदन चर्चित अँग मनोहर, उर बनमाल सुधारी ।
बाहु विसाल विभूषन सोहें, कर गहि सारँग धारी ।।
कटि पर पीत बसन की सोभा, मोहत मदन निहारी ।
सुर—नर—मुनिजन चरन सरोरुह, ध्यान धरत त्रिपुरारी ।।
चतुर सखी मिलि करत आरती, भरि कंचन की थारी ।
राम सखे' प्रभु की छवि निरखें, गावत सुरपुर नारी ।।६।।

घर मोकों लागे जंजाल. आँखें ललन लुभानी ।
बब—प्रमोद की कुंज गलिन में, देखत छवि सुखखानी ।।
कटि पर पीत क्रीट सिर सोहति, जुलफन मति उरझानी ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

'राम सखे' अब भई बावरी, नेह समुद्र समानी ।।७।।

नैनन में आन समानौ, मेरौ अवध पियारौ।
मृदु मुसकाय छोड़ि जुलफें मुख, चेटक सौ पढ़ि डारौ ।।
कहा करौं, कित जाउँ सखीरी, चित तें टरत न टारौ।
'राम सखे' पर लगत दुखद जब, मन भयौ छवि मतवारौ ।।८।।

(एरी आली) राजकुंवर बर जोरी, मोरी मग बहियां मरोरी।
हौं दधि वेचन जात अवधपुर, सिर धरि कमक कमोरी ।।
खेटक खेलत मिलौ अचानक, बन प्रमोद की खोरी।
'राम सखे' पिय रस बस करि गयौ, बांधि प्रेम गल डोरी ।।९।।

—❀—

काश्मीर के प्रति

लेखक श्री शंकर लाल चतुर्वेदी एम० ए०

काश्मीर, भारत-मुकुट, आज तिहारे काज
प्रमथ प्रहर्त्ता पाक तै, सजे युद्ध के साज ।।
सजे युद्ध के साज, चेत रण चण्डी उट्ठी।
छम्ब-यज्ञ--में जेट-विध्वंसक-ज्वाला उट्ठी ।।
गिरे सुधाकर यवन पशू आये वन वीर।
सस्य स्यामला भूमि भई पावक काश्मीर ।।

—दो—

नन्दन कानन अग्निमब, भयौ समर कौ खेत।
बलि बकरा से पाक-भट, खेत भये रन हेत ।।
खेत भये रन हेत, चेत-चित अब मुरझानौ।
संगर सग सुहात मीच मिलि मन मुसकानौ ।।
किये हस्त गत छम्ब, पीर हाजी अरि-बन्धन।
भुट्टो भट्टी मध्य गिरे भुट्टा सेनन्दन ।।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ब्रज—संस्कृति के महान उद्गाता

श्री नारायण भट्ट गोस्वामी—एक परिचय

ले० श्री भवेश पचौरी एम० ए०

ब्रज प्रदेश भारतीय संस्कृति व साहित्य का हृदय है। यह एक महान् चुम्बक है, जो देश के कोने कोने से लोक—लोकोत्तर जीवन के तत्वों की सतत खोज में रत साधवों, योगियों, भगवद् भक्तों एवं विद्वानों को सदैव ही आकृष्ट करता रहा है। साथ ही यह पावन भूखण्ड ऋषि जन्माओं की तपोभूमि और लोकनायको की कर्मभूमि भी रहा है। इस धरा में कुछ ऐसी विशेषता है कि काश्मीर से कन्या कुमारी और असम से गुजरात तक की प्रतिभाएँ पागल सी होकर ब्रज की ओर दौड़ती हैं ठीक उन नदियो की भाँति जो तीव्र गति से सागर की ओर दौड़ती हैं। ब्रज संस्कृति एक ऐसा कल्पवृक्ष है, जिसे महमूद गजनवी से लेकर आततायी औरंगजेब प्रभृति धर्मान्ध शासकों ने बार बार काटा, समूल छिन्न भिन्न किया। किन्तु यह आज भी जीवित है और अब तो इसकी सघन छाया अखिल भारत की धर्मालु कोटि कोटि जनता को शीतलता प्रदान कर रही है। इस संस्कृति की अक्षुण्णता के मूल में भारतीय सन्तों, विचारकों, दार्शनिकों, साधकों और महान् कलाकारों के बलिदान और त्याग हैं। इतिहास हमें साक्षी देता है कि मध्य काल में विभिन्न विपक्षी विध्वंसक तत्वों ने इस प्रदेश पर अनेक बार निर्मम आक्रमण कर हिन्दू धर्मावलम्बियो का रक्त पात किया। देवालयो की मूर्तियों को तोडा, धर्म ग्रन्थों को नष्ट भ्रष्ट किया और क्या नहीं किया। किन्तु ब्रज संस्कृति के आरक्षी इन पुजारियों, महन्तों, साधवों, दार्शनिकों, और भक्तों की शान देखिए, जीवट देखिए कि ये प्राणों से भी प्यारी प्रभु प्रतिमाओं, देव विग्रहों को ले भागते थे और अत्यन्त सुरक्षित वनों में, गुफाओं में, सरोबरों, और यहां तक कि कुओं में छिपा देते थे कि कहीं विधर्मी इन्हें अपवित्र न कर दें। इन साधकों की साधना भूमि ब्रज के शान्ति पूर्ण बनों, गाँवों और निर्जनों में रहती थी, जहाँ आक्रान्ता उनके इष्ट देव की सुगन्ध भी न पा सकते थे। सांस्कृतिक दृष्टि से यह युग घोर अशान्ति, अनिश्चितता, आशंका और उथल पुथल का काल था। अग्नि परीक्षा में तप तप कर ब्रज संस्कृति कुन्दन बनी। इस्लाम धर्म और हिन्दू धर्म के इस जीवन-मृत्यु--संघर्ष में भारतीय धर्म अपनी प्राचीन तम दम्भ-दर्प-दृप्त सार्वभौमिकता का बिगुल बजाती थी। उधर विधर्मी इस दम्भ की रीढ़ को तोड़ते थे। इन परिस्थितियों में ब्रज की धार्मिक श्रद्धा के केन्द्र मन्दिरों की कौन कहें, इसके वन, उपवन, सर सरोवर, कुंज नींकुज, कुण्ड और लीला स्थल भूगोल से लगभग लुप्त हो चुके थे। धार्मिक ग्रन्थों में वर्णित विभिन्न तीर्थ केवल नाम को शेष थे। संस्कृति शून्य में निःसहाय निरुणाय भटकती रही। इधर इसके उद्धार को चैतन्य महा प्रभु तथा इनके पार्षद रूप और सनातन अपने इष्ट देव पूर्णावतार भगवान कृष्ण की क्रीड़ा भूमि वृन्दाबन पधारे। अधः पतन को प्राप्त ब्रज के साक्षात्कार से उनका हृदय शतधा विदीर्ण हो गया। इस दुर्दशा पर वे रुदन करने लगे। रूप और सनातन

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

को ब्रज के उद्धार करने का आदेश देकर महाप्रभु नीलाचल को पधार गए। महाप्रभु की इसी शिष्य परम्परा में जीव गोस्वामी और श्री नारायण भट्ट गोस्वामी का प्रादुर्भाव हुआ। नारायण भट्ट गोस्वामी की साधना इनमें सर्वोपरि थी। ये ब्रज की रासलीला के प्रवर्त्तक, ब्रज चौरासी कोसी यात्रा के आदि प्रस्तोता, धर्म ग्रन्थों के उद्धारक--लेखक--मीमांसाकार और सबसे ऊपर ब्रज धर्म, ब्रज संस्कृति के महान् उद्गाता सिद्ध हुए। यही भट्ट जी हमारे चरित्र नायक हैं, जिनकी ओर कम विद्वानों का ध्यान गया है। इनका साहित्य सस्कृत और ब्रज भाषा में प्रचुर मात्रा में इतस्तत: उपलब्ध है, जिसके आधार पर इनका अध्ययन ब्रज के पंडितों को करना चाहिये. जिससे इस महा पुरुष के साथ न्याय हो सके। इन पंक्तियों के लेखक ने इस दिशा में अत्यल्प सा प्रयास किया है। स्यात् यह इस विषय के अधिकारी विद्वानों को उत्प्रेरणा प्रदान करे।

श्री नारायण भट्ट के सम्बन्ध में प्रचुर साक्ष्य हमारे सामने आता है। इसके आधार पर इनकी जीवनी, साहित्य, धर्म, दर्शन, मत और कृतित्व पर पूर्ण प्रकाश पड़ता है। यह साक्ष्य दो प्रकार का है--अन्तर्साक्ष्य और बहिर्साक्ष्य। प्रथम प्रकार के साक्ष्य के अन्तर्गत वे सब ग्रन्थ आते हैं, जो उनकी शिष्य परम्परा ने उनके सम्बन्ध में लिखे हैं। इनमें श्री जानकी प्रसादभट्ट कृत 'श्री नारायण भट्ट गोस्वामी चरितामृत' प्रमुख है। ये श्री नारायण भट्ट की सातवीं पीढ़ी में उत्पन्न हुए। संवत् १९२८ वि० में नीमराना (राजस्थान) में इस ग्रन्थ की अनुलिपि की गई। भट्ट जी के साहित्य, कृतित्व और महत्त्व के सम्बन्ध में अब तक अनेक विद्वानों ने लिखा है। इस प्रकार का प्रथम ग्रन्थ नाभा जी की भक्तमाल है जो सं० १६४२ वि० में लिखी गई और सँ० १७१९ वि० की इस पर प्रियादास की टीका है। भक्त कल्पद्रुम नाम्नी भक्तमाल की एक और टीका भी है, जिसमें भट्ट जी का महत्त्व विस्तार से लिखा गया है। खेमराज श्री कृष्णदास बैंकटेश्वर प्रेस, बम्बई से प्रकाशित सूर सागर की भूमिका, महात्मा ध्रुवदास की भक्त नामवाली, लाड़िलीदास कृत काव्य, नवरत्न भाष्य रास विलास, रासलीला नुकरण और नारायण भट्ट नामक निबन्ध, आपा जी पन्त कृत बालगण कवि सार्व राधाकृष्ण दास कृत भक्त नामावली, ज्वाला प्रसाद मिश्र रचित हरि भक्ति प्रकाशिका, वार्तिक तिलक, श्री कृष्णदत्त बाजपेयी कृत ब्रज लोक संस्कृति तथा ग्राउस महोदय द्वारा लिखित डिस्ट्रिक्ट मैमोइर, मथुरा आदि में श्री भट्ट जी के गुणानुवाद यत्र तत्र बिखरे पड़े हैं। प्रो० श्री चन्द्र प्रकाश सिंह एवं ब्रज के प्रसिद्ध विद्वान् श्री प्रभुदयाल मीतल आदि ने भी भट्ट जी पर पर्याप्त प्रकाश डाला है। इसके अतिरिक्त कुछ अन्तर्साक्ष्य भी है। स्वयं भट्ट जी ने अपने ग्रन्थों में यत्र तत्र अपना परिचय दिया है। ब्रज भक्ति विलास उनका प्रमुख ग्रन्थ है। इसमें उन्होंने अपने अन्य ग्रन्थों के विषय में इंगित किया है।

श्री नारायण भट्ट विषयक समस्त उपलब्ध साहित्य सामग्री का अवगाहन करने पर इनका जन्म मदूरा में संवत् १५८८ बि०[1] में निकलता है। बैशाख शुक्ला नृसिंह जयन्ती के दिन

---

१. ग्रियर्सन महोदय ने इनका जन्म काल सन् १५९३ माना है जो अशुद्ध प्रतीत होता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भविष्योत्तर पुराण में वर्णित परम वैष्णव रंगनाथाचार्य के पुत्र और महाकवि भैरव के पौत्र भास्कराचार्य के घर में इस दिव्य पुरुष ने जन्म धारण किया । इनकी शिक्षा दीक्षा घरपर ही इनके पितृव्य के चरणों में हुई । समस्त वेद वेदाङ्गों की पारंगति बालक नारायण को अत्यल्प आयु में ही प्राप्त हो गई थी । बारह वर्ष की अल्पावधि में भट्ट जी संस्कृत के विद्वान् बन गए थे । संस्कृत का पांडित्य तो इनको रक्त से ही मिला था । भट्ट जी अत्यन्त कुशाग्र बुद्धि, अत्युत्पन्न मति, और विलक्षण प्रतिभा के धनी थे । आरम्भ से ही इनकी रुचि अध्यात्म में थी । भक्ति की उमगें इनके हृदय में उठती थी । 'चरितामृत' कार के अनुसार ये साक्षात् नारद मुनि के अवतार थे । इनको स्वप्नादेश हुआ कि व्रज प्रदेश में समस्त तीर्थ, देवालय, सर, सरोवर कुण्ड, घाट, कुंज, निकुंज लुप्त प्राय हो चुके है । वहां भागवत महिमा अधोमुखी है । तू जाकर ब्रज का उद्धार कर । नारद के इस निर्देश को पाकर भट्ट जी पैदल ही व्रज की ओर चल पड़े । विभिन्न देशों का पर्यटन करते ये ढाई वर्ष में चलकर वृन्दावन धाम पहुँचे । महाप्रभु चैतन्य के पार्षद सनातन महात्मा वृन्दावन में ही थे । महात्मा कृष्ण दास मदन मोहन जी के मन्दिर में पुजारी थे । भट्ट जी कृष्ण दास के शिष्य हो गए । वृन्दावन से गोवर्द्धन, राधा कुंड, बरसाना, गोकुल, दाऊजी, नन्द गांव आदि प्रसिद्ध तीर्थों में भ्रमण करते हुए ये बरसाना के समीपस्थ ऊँचे गाँव में स्थायी रूप से रहने लगे थे । पिता जी की आज्ञा से इन्होंने विवाह भी किया था । दामोदर भट्ट नामक इनका पुत्र और इनके भाई गोपाल भट्ट भी यहीं रहने लगे थे । दामोदर भट्ट इनकी मृत्यु के उपरान्त इनके उत्तराधिकारी हुए । इनकी मृत्यु लगभग १७०० वि० में हुई बताई जाती है । ये शतायु थे । सूरदास, तुलसी दास, हरिदास, प्रभृति कवि और गायक इनके समकालीन थे । श्री जानकी प्रसाद भट्ट के अनुसार सूरदास जी और स्वामी हरिदास जी इनके भक्ति चमत्कार देखने बरसाने गए थे । जन्मान्ध सूर को भट्ट जी ने श्री कृष्ण के दर्शन कराये थे सूर ने अपने इस प्रसिद्ध दोहे की रचना इसी समय की थी जब बालक रूप कृष्ण इनको दर्शन देकर हाथ छुड़ाकर भागे थे ।

हाथ छुड़ाए जाते हो, निबल जानिकै मोहि
हिरदय ते जब जाहुगे, सबल बदौंगो तोहि ॥[1]

स्वामी हरिदास के आग्रह पर भट्ट जी ने उनको सप्तस्वर वीणा पर भागवत के पद गाकर सुनाए थे । [2] भट्ट जी महान भक्त थे और द्विभुजी श्री कृष्ण के उपासक थे । दक्षिण

---

१. नारायण भट्ट चरितामृत

२- उवाच प्रणयात्तं वै किंचित् कुपित मानसः ।
हस्तमाकृष्य यातोऽसि ज्ञात्वा मां निर्बलं प्रभो ॥
हृदयाद्यास्यते देव पौरुषं गणये तदा ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

में मदूरा में ये लाड़िलेय जी की मूर्ति की उपासना करते थे. जिसे ये साथ लाए थे। ऊँचे ग्राम में भट्ट जी ने लाड़िलेय जी की प्राण प्रतिष्ठा की थी। अब यह मूर्ति उनके वंशधरों के पास नीम राना में विराजमान है। भट्ट जी एक चमत्कारी महात्मा विद्वान थे। इनके पास देश के कोने कोने से भक्त आते रहते थे। अनेक धनी-मानी महापुरुष इनसे गुरु दीक्षा ले चुके थे। इनका एक बड़ा शिष्य समुदाय था। भट्ट जी के सम्बन्ध में ब्रज प्रदेश विशेष कर बरसाना के आस-पास बहुत सी चमत्कार पूर्ण जनश्रुतियां सुनने में आती हैं। ग्रन्थों में भी उनका वर्णन यत्र तत्र मिलता है। ये एक सिद्ध भक्त थे श्री कृष्ण राधा और बलदेव के लीला गुण गान में ये इतने विभोर हो जाते थे कि आत्म विस्मृति में सम्पूर्ण चराचर में इनको अपने इष्ट देव के दर्शन होते थे। आपने श्री कृष्ण लीला के अनेक रूपों के दर्शन किए। प्रसिद्ध है कि सिंह प्रभृति हिंसक जीव भी भट्ट जी के सामने नतमस्तक होते थे। श्री जी के प्राकट्य से सम्बन्धित कथा तो ब्रज प्रदेश से प्रसिद्ध ही है कि उन्होंने किस प्रकार घोर जगल में एक गाय के साथ जाकर श्री जी का प्राकट्य किया। यह कार्य सं० १६०४ में सम्पन्न हुआ। इस मन्दिर में भट्ट जी के शिष्य पूजा करते थे। आज कल भी वहां परम्परा सेवा परायण है। भट्ट जी अत्यन्त विनम्र. एकान्त सेवी, निरभिमान, नि: स्वार्थ साधु थे। परदुखकातरता इनके स्वभाव का अंग थी। अलौकिक दिव्यता के वे पुंज थे। भक्ति परक पैनी दृष्टि से वे भूगर्भ की बातों को जान लेते थे। अमुक तीर्थ कहाँ है, अमुक लीला कहां हुई थी, अमुक मूर्ति कहाँ दबी हुई अपने उद्धार की प्रतीक्षा में है इन सभी बातों को वे अपने अवधान ध्यान से ज्ञात कर लेते थे और उनका प्राकट्य करते थे। सं० १६०९ वि० तक उन्होंने अपने जीवन के उद्देश्य को प्राप्त कर लिया था। ब्रज के चप्पे चप्पे का भ्रमण करके स्थान स्थान पर आपने देवालयों की स्थापना की थी। लुप्तप्राय स्थलों का उद्घाटन करके ब्रज संस्कृति को महान देन दी। आपके द्वारा प्रकट किए और प्रतिष्ठापित किए मन्दिरों, तीर्थों, सर सरोबरों, कुण्ड तालों, बन उपबनो, कुंज समूहों लीला स्थलों आदि का यदि अध्ययन किया जाय तो एक बिशाल ग्रन्थ बन सकता है।

ब्रज चौरासी कोस की यात्रा ब्रज संस्कृति का मेरु दण्ड है। देश की कोटि कोटि जनता की श्रद्धा-आस्था का संबल भट्ट जी से पूर्व कुछ भी नही था। भट्ट जी ने प्रथम बार बाराह पुराणादि के आधार पर यात्रा मार्ग के तीर्थों और तीर्थ यात्रा के पड़ावों आदि की प्रामाणिक खोज की तथा स्वयं यात्रा का श्री गणेश किया। तब से यह महान यात्रा प्रति वर्ष चलती है। करोड़ों नीरस, खिन्न. दुःखदैन्य निपीड़ित मानसों को भक्ति रस से शीतलता प्रदान करने वाली यह यात्रा धर्मावलम्बियों का जीवन पाथेय है। यदि भट्ट जी न होते तो ब्रज संस्कृति का मेरुदण्ड ही टूट गया होता। फिर कैसा भागवत धर्म और क्या श्री मद्भागवत ग्रन्थ। फिर भगवान कृष्ण की लीलाएं ही शेष रह जाती। फिर राधा कृष्ण की पावन भक्ति का सन्देश देश देशान्तर में कैसे पहुँचता।

ब्रज की रासलीला पद्धति रंगमंच का विशिष्ट अंग है। यह भारतीय नाट्य परम्परा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

की अमर धरोहर है। लोक साहित्य के माध्यम से नाटकाभिनय का यह प्राचीन स्वरूप शताब्दियों से जनमनरंजन का एक मनोज्ञ माध्यम रहा है। यह महान् साहित्यिक आविष्कार भी भट्ट जी की ही प्रतिभा की देन है। भट्ट जी ने भागवत के आधार पर बहुत से रासों की रचना की. और उनका अभिनय भी किया। आपने जन्मादिक लीला, दान लीला, मान लीला मगरोकनी लीला परस्पार गाली देने की लीला, मटकी फोड़नी लीला, हास परिहास लीला, आदि कृष्ण लीलाओं का प्रणयन किया। प्रथम बार रास लीला का प्रचलन आपके ही द्वारा हुआ। रास के प्रारम्भ में समाजी वचन होता है, जिसे प्रत्येक रास मन्डली मंगलाचरण में गाती है। यह पंक्तियां भट्ट जी को रास लीला का प्रवर्त्तक घोषित करती हैं–

श्री नारायण अति सुभट जिनको ब्रज सों हेत।
ठौर ठौर लीला रची निकट जानि संकेत। [१]

विभिन्न विद्वानों ने आपको रासलीला का प्रवर्तक माना है। इस सम्बन्ध में अनेका नेक प्रमाण समूह विद्यमान है। इस विषय को पृथक् लिया जायगा।

ब्रज के उत्सव, पर्व, त्यौहार आदि को प्रामाणिकता के साथ पुष्टमत करके भट्ट जीने जनता का बड़ा उपकार किया। व्रजोत्सव चन्द्रिका प्रभृति ग्रन्थों में इनका वर्णन है। बरसाने की होली तो एक मात्र भट्ट जी की ही सूझ है। संक्षेप में निःसंकोच यह दावा किया जा सकता है कि आज जो कुछ ब्रज में कथ्य और तथ्य हैं, जो भी यहाँ दर्शनीय-वन्दनीय और स्पृहणीय है, सभी कुछ भट्ट जी की देन है।

भट्ट जी का ज्ञान अपार है। प्राचीन साहित्य सागर का कोई रत्न आपसे नहीं छूटा जिसको आपने पारंगत न किया हो। इस बात का प्रमाण उनके ग्रन्थों में मिलता है। पूज्य बाबा कृष्ण दास कृपा करके साधन दीपिका नामक भट्ट जी के ग्रन्थ को इन पंक्तियों के लेखक के पास भूमिका हेतु लाए थे। अध्ययन से ज्ञात हुआ कि अकेले इसी ग्रन्थ में कमसे कम ७५ संस्कृत ग्रन्थों के विभिन्न सन्दर्भ है। नाना पुराण निगमागम को मथकर आपने सार संचयन किया है। आप संस्कृत के रससिद्ध कवि तो थे ही साथ ही ब्रज भाषा के भी सिद्ध हस्त लेखक हुए हैं। राग सागरोद्भव में आपके ब्रज भाषा के रससिक्त पद है। यह ग्रन्थ सम्प्रति प्राप्त नहीं है। इसकी रचना सं० १६२० में हुई थी। वृहद् ब्रजगुणोत्सव में २६००० श्लोक हैं। आपने कुल मिलाकर ६० ग्रन्थों की रचना की है। इन ग्रन्थों के मीक्षासात्मक अध्ययन की आवश्यकता है। यहां नामोल्लेखमात्र किया जाता है। इनके ग्रन्थ हैं—ब्रज प्रदीपिका, वृहद् गुणोत्सव, ब्रज महोदधि, ब्रज प्रकाश, ब्रज भक्ति विलास, भक्ति भूषण सन्दर्भ, भक्ति विवेक, भक्ति रस तरंगिणी, साधन दीपिका, नाम श्रेष्ठ निर्णय, धाम श्रेष्ठ निर्णय, भक्त श्रेष्ठ निर्णय, रसिकाह्लादिनी भागवत

---

१ नवरत्न भाष्य रास विलास

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

की टीका, रास पञ्चाध्यायी की टीका, तथा प्रेमांकुर नामक नाटक आदि है। अन्तिम ग्रन्थ अनुपलब्ध है। इनमें से कुछ ग्रन्थ बरसाने में और कुछ नीमराने और वृन्दावन में प्राप्त है। इन ग्रन्थों की महत्ता इस बात से प्रकट है कि इनकी में से कई ग्रन्थों की कई २ प्रतिलिपियां मिलती है, जो उनके भक्तों ने नकल की प्रतीत होती है। खेद है कि आपके समस्त साहित्य की खोज नहीं हो रही। इनके समस्त ग्रन्थ उपलब्ध होने पर ब्रज समाज की बहुत बड़ी सेवा होगी। किन्तु अद्यावधि संग्रहीत ग्रन्थ समूह ही भट्ट जी की महानता सिद्ध करने को पर्याप्त है। हम आपके ब्रज भाषा के पदों को संग्रह करके शीघ्र ही विद्वानों के समक्ष रखेंगे।

भट्ट जी अध्यात्म के परम पंडित और कृष्ण के अनन्य भक्त थे। विविधा भक्ति के प्रयोगी थे। वे अद्वैत का खण्डन और द्वैतवाद का मण्डन करते थे। भगवान के तीनों रूपों में से द्विभुजी सगुण के अनन्य भक्त थे। उन्होंने आजन्म लाड़िलेय जी की पूजा की। वही उनके इष्ट देव थे। आपका दर्शन सच्चे भक्त का दर्शन है राधिका गोपी संवलित श्री कृष्ण सर्वदा ही सेव्य हैं। तीन तत्त्व है—जीव, जगत और ईश्वर। शरीर स्थूल, सूक्ष्म और कारण रूप से त्रिविधि है। अनादि काल से तीनों ही जीव चैतन्य को बोधते है। स्थूल देह का समय पाकर नाश होता है तथा सूक्ष्म देह का भी अन्त होता है परन्तु कारण शरीर का नाश नहीं होता। कृष्ण भक्ति से वह भी नष्ट हो जाता हैं। स्थूल शरीर का नाश होने पर भी छिन्न मूल अंकुर की भाँति देहान्तर सम्भव हैं। सूक्ष्म देह के उपरान्त भी पुनर्जन्म सम्भव है। जब तक कारण शरीर विद्यमान है तब तक सूक्ष्म शरीर सम्भव है। विवेकी को कारण शरीर के नाश के हेतु सतत् प्रयत्नशील रहना चाहिए। इसका एक मात्र ऊपाय है श्री कृष्ण भक्ति, जो महत्संग करने पर प्राप्तव्य है। श्रवण कीर्तन के अतिरिक्त महत्संग सम्भव नहीं है। हरिभक्ति का फल वैकुण्डलोक है। वैकुण्ठ ही मोक्ष है। गुरु का महत्त्व भक्ति के मार्ग में सर्वाधिक है। जीव अल्पज्ञ अणु रूप है, भगवान् सर्वज्ञ तथा परिपूर्ण हैं। सद्गुरु बिना कभी ज्ञान नहीं होता है। गुरु शिष्य सम्बन्ध नित्य है। देह देही सम्बन्ध भी नित्य है वेद विहित 'तत्त्वमसि' में द्वैत सिद्धान्त सुस्थिर है। श्री कृष्ण परम तत्व है। कृष्ण और राम में कौन बडा है। इस प्रश्न पर भट्ट जी के विचार हैं--श्री कृष्ण परिपूर्णतम तथा राम पूर्ण हैं। रामादिक अवतार श्री कृष्ण में विद्यमान हैं। श्री कृष्ण भक्ति दाता और राम मुक्ति दाता है। एक पारक स्वरूप दूसरा तारक स्वरूप है। भक्ति मुक्ति से श्रेष्ठ है। ठीक वैसे ही कृष्ण जी राम जी से श्रेष्ठ हैं।[१]

नारायण भट्ट की दार्शनिक सिद्धान्त मीमांसा सविस्तर करणीय है। यहां विस्तारभय से नहीं की जा रही। अवसर मिलने पर पुनः यह दुरुह कार्य सम्पन्न होगा। अधिकारी विद्वान् इस ओर दृष्टि पात करेंगे। यहाँ तो इतना ही कहना समीचीन है कि भट्ट जी एक महान् शोधक अनुसन्धाता, ब्रज उद्धारक महाकवि के रूप में हमारे सामने आते हैं। ब्रज और व्यापक रूप में

१-भक्ति विवेक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

समाज पर उनका महान् ऋण है। ब्रज के तीर्थो, स्थलों आदि को पुनः प्रामाणिकता देकर ही ब्रज आपके ऋण से उऋण हो सकता हैं। इस सम्बन्ध में कथनीय है कि–

"खोजि-खोजि वेद औ पुरान, भाष्य, संहितानु
स्मृति औ तन्त्र मन्त्र मथि कौन तोलतौ।
भक्ति कौ विलासु अभिलाषु भक्ति मुक्त हू की
रासि को विकास खास खोल को टटोलतौ॥
लाड़िलेय लाड़िली ललित लास्य लखतौ को
रास—रस—रहसि रहस्य कौन खोलतौ।
होतौ जौन नारायण भट्ट ऊँचे ग्राम वारौ
ब्रज रज महिमा की जय कौन बोलतौ॥
जीव माया ईस गांठ गरती न गहवर में
गिरि में, गुहा में भक्ति तान कौन तोरतौ
रिसतौ न रस रसना पै रासि रासिनु पै
हीतल में सीतल मिठास कौन घोरतौ॥
ताल औ तलैयनु में, महल मढ़ैयनु में
कौन झुकि झौर झौर झांझ झकझोरतौ॥
जौ पै तू न होतौ कौन तोरतौ तरनि तारे
भगति सुगति की जुगति को बहोरतौ॥[१]

—

सामयिक सुभाषित

१. अधिक अन्न उपजाइये,
२. अपने बगीचे में फुलवारी की जगह तरकारी लगाइये
३. आप भी सैनिक हैं
तन, मन, धन, से देश, की सहायता कीजिये
४. देश के आपत्ति काल में अपनी
आवश्यकताओं पर संयम रखिये।

१--साधन दीपिका की भूमिका

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ब्रज के कुछ लोक गीत

लेखक डा० शालिग्राम गुप्त एम० ए०, पी० एच० डी०

(१) सावन गीत

सावन रिमझिम मेहा बरसै, जोर हे झर लाइये ।
हरियल बन में मोर बोलें, कोइल सबद सुनाइये ।
गेंदा हजारी रौसन खिलि रह्यौ, चम्पा खिल्यौ है अपार ।
वेला चमेली फूल्यौ मोतिया, फूल्यौ हार सिंगार ।
अजब सुगन्धि आली उड़ि रही, झुकी है कदम की डार ।

[२] कार्तिक गीत

गंगा जी की उन रेतिन में रामा बन्सी बजागी घन घोर,
सखीरी मैं ने मोहन ली लए मोल ।
काहे के पलरा, का हे की डांडी रामा,
काहे में ली लए तोल । सखीर ०।
नेंनन के पलरा, मोहन की डांडी रामा,
हिरदै में ली लाए तोल । सखीरी० ।

[३] भजन

आजा आजा दरस दिखाजा, आजा प्यारे मोहना ।
कहां हरि ने जनम लयो है, कहां हरि झूले पलना ।
मथुरा हरि ने जनम लयो है, गोकुल झूले पलना ।
आजा आजा दरस दिखाजा० ।
कहां हरि ने कंस पछारो, कहां हरि मारी पूतना ।
मथुरा हरि ने कंस पछारो, गोकुल मारी पूतना
आजा आजा दरस दिखाजा० ।

(४) साखी

ऐसो काहे कूँ रोवै बाबा नन्द, कन्हैया नाहिं तेरो मरि गयो ।
वु तो बैठो है जमुना के तीर, सरप ते बाबी बदि रह्यो ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

[५] कार्तिक गीत

सूरज महराज कल धारी।
उठ्यो न सूरज किरन पसारो, असतुति करते सब नर नारी।
सूरज महराज योग धारी।
उठ्यो न गंगा लेउ लहरियाँ, तुमरे द्वार खड़ी कातिक वारी।
सूरज महराज कला धारी।
उठ्यो न तुलसा भोर भयो है, तुमरे द्वार खड़ी पूजन वारी।
सूरज महराज योग धारी।
सूरज जागो, किसन जी जागौ, तुमरे द्वार खड़ी देखो दधि वारी।
सूरज महराज कला धारी।

[६] कार्तिक गीत

श्याम मोपे रहो नहीं जाइ, मुरलिया की धुन सुन कें।
नारद ने छोड़ो बीणा बजाना, अब सम्भू ने छोड़ो केलास।
मुरलिया की धुन सुनके, श्याम०
गौश्रा ने छोड़ो घास का चरना, अब गंगा ने छोड़ी धारा।
मुरलिया की धुन सुन के।
ग्वालन ने छोड़ो गंऊए चराना, अब गोपिन ने छोड़ो घर द्वार।
मुरलिया की धुन सुन के।

(७) होली

ऊधो कहियो जाइ द्वारिका, स्याम सुन्दर सों हमारी अरजी।
दरसन आसा लागि रही है, दै जाउगे तौ तुम्हारी मरजी।
ऊधो कहियो जाइ द्वारिका०।
दिन नहिं चैन राति नहिं निंदिया, विरह विथा की पीर में,
ऊधो कहियो जाइ द्वारिका०।
यह जीउ जातु है, मोहि उडि उडि पलँगु खातु है,
विरह विथा की पीर में ऊधो०।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ब्रज भाषा में भगवान श्री कृष्ण पर

एक महाकाव्य की रचना

लेखक:– श्रीमती सरला जैन एम० ए० साहित्यरत्न

ब्रज क्षेत्र रसार्द्रता का अगाध महोदधि है और इस प्रदेश की सुधा सिंचित ब्रज भाषा आज भी उतनी ही जीवित और पुष्ट प्रवाहमयी है जैसी पहिले थी। लोग यह भ्रान्त धारणा बनाये बैठे हैं कि ब्रज भाषा मर गई किन्तु जिस भाषा ने विश्व साहित्य को मूर्धन्य श्रेणी का सूर जैसा कवि दिया, जिसने शृंगार साम्राज्य को बिहारी जैसा प्रदीप्त रत्न दिया तथा जो मीरा, रसखान आदि अनेकानेक रसमेघों की जननी है वह किसी युग में निष्प्राण हो जाय यह असंभव है। ब्रज भाषा आज भी कालिन्दी की धारा की तरह स्निग्ध और आत्म निष्ठा वान होकर बह रही है उसके सपूतों में श्री मुकुन्द श्री गोविन्द श्री राम लला आदि कविगण अपनी रचनाओं की अंजलियाँ लिए आज भी उसकी सगौरव अर्चना करते जा रहे हैं।

प्रस्तुत लेख में मुझे ब्रज क्षेत्र के यशस्वी रचयिता श्री बाल मुकुन्द चतुर्वेदी "मुकुन्द" के काव्य ग्रन्थ 'ब्रज भागवत' [श्री कृष्ण कौस्तुभ] का परिचय हिन्दी संसार को देना है। श्री मुकुन्द ब्रज भाषा के समादरणीय रत्न हैं जो अपनी रचनाएँ ब्रज भाषा में ही लिखते हैं। ब्रज भागवत उनका एक विशाल महाकाव्य है जो हिन्दी संसार में भगवान श्री कृष्ण चरित्र पर उच्चकोटि के श्री कृष्ण काव्य के अभाव की पूर्ति करता है। इस एक सहस्र पृष्ठों वाले महा काव्य में भगवान श्री कृष्ण का सम्पूर्ण चरित्र अवतरित है। कवि ने भगवान कृष्ण को मध्य युग की शृंगारिक भूमिकाओं से ऊपर उठाकर उनका बहु मुखी प्रतिभाओं वाला ब्रज स्नेही स्वरूप स्थापित किया है। वे वसुदेव के घर में ऐश्वर्य रूप में नन्दालय में माधुर्य रूप में ब्रजांगनाओं में लीलारूपों में, गिरिराज उपत्यकाओं में, पराक्रमरूप में तथा कंस सभा में महा-पराक्रम पुंज के रूप में प्रगट हुए हैं। उनके यह सभी रूप बड़े मनोहारी भावोन्मेष पूर्ण हैं। ब्रज भाषा के स्वाभाविक माधुर्य और भाव-सौष्ठव ने रचना को अपने युग का एक अद्वितीय महाकाव्य बना दिया है। इस रचना से जहाँ कृष्ण प्रेमियों को एक सुरभि का नन्दन कानन मिलेगा वहाँ राम लीला या कृष्ण लीला करने वाले को भी लीला स्तर में एक उच्च भूमिका स्थापित करने में सहायता मिलेगी। वास्तव में प्रत्येक ब्रज भाषा प्रेमी को इस रचना के लिए मुकुन्द जी को बधाई देना चाहिए।

हिन्दी--साहित्य में इस रचना के प्रकाशन से एक नवीन युग का समारम्भ होगा। हम आशा करते हैं कि मुकुन्द जी की यह रचना शीघ्र ही प्रकाशित होकर हिन्दी प्रेमियों के सम्मुख आये। उत्साही प्रकाशक इस संबंध में उनसे सम्पर्क स्थापित कर सकते हैं। इस के पुनीत प्रकाशन का श्रेय उपलब्ध करने वाली प्रकाशन संस्था भावीयुगों में समादरणीय मानी जायगी।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मुगल युग के शक्ति शाली हिन्दू राजा

लेखक श्री वृन्दावनदास, बी० ए० एल-एल० बी०

मुसलमानों के आगमन के पूर्व भारत वर्ष में अनेक हिन्दू राज्य थे। इनके कुछ राज्य
तो इतने छोटे थे जिनमें एक दो नगर और कुछ ग्राम ही मिलाकर राज्य बन जाता था। कुछ
बड़े बड़े प्रभुता सम्पन्न राज्य ऐसे थे जिनमें से प्रत्येक का क्षेत्रफल आज कल के पूरे प्रदेश से
भी बड़ा था। प्रभुसत्ता सम्पन्न ये राज्य सभी स्वतन्त्र और समृद्धिशाली थे। ये राज्य बहुधा
आपस में संघर्षरत रहते। इसके दो प्रधान कारण थे। (१) इन राज्यों के स्वामी राजपूत-
वंशीय राजा थे जो युद्ध में पराक्रम दिखाकर विजय प्राप्त करने में गौरव का अनुभव करते थे।
वे बात की आन पर रणक्षेत्र में जूझ कर आत्मोत्सर्ग कर देना क्षत्रिय धर्म मानते थे। रण में
रक्त-श्राव को क्षत्रियोचित और वीरता का सूचक समझते थे। (२) चूंकि उस काल में
विदेशियों की ओर से कोई खतरा न था इसलिए अपनी भावनाओं की तुष्टि के लिए वे आपस में
ही युद्ध करते रहते। भारतवर्ष ही उनकी दुनियाँ थी।

उपरोक्त वीरोचित भावों से प्रेरित इन राजाओं को यह दोष देना कि उनकी मूर्खता
के कारण या आपसी कलह के कारण भारत में विदेशी राज्य हुआ व्यर्थ है।

मुसलमान काल के हिन्दू राजा राष्ट्रीय भावना से ओत प्रोत थे। जिन मुसलमान
शासकों ने हिन्दूओं को काफिर या हीन नागरिक समझा, मुसलमानों की अपेक्षा उनका तिरस्कार
किया, उन पर जजिया कर लगाया, उनके साहित्य, संस्कृति और धर्म स्थानों को क्षति पहुंचाई
उन मुसलमान शासकों का हिन्दू राजाओं ने विरोध किया, उनसे निरन्तर युद्ध करते रहे और
उनको कभी चैन नहीं लेने दिया। इस प्रकार के मुसलमान शासक कभी भारत में अपना साम्राज्य
स्थापित न कर सके। इसके विपरीत ऐसे मुसलमान शासक भी हुए जैसे शेरशाह, अकबर, जहाँगीर
शाहजहां आदि जिन्होंने हिन्दुओं से सहयोग की कामना की, हिन्दुओं के प्रति धार्मिक भेद भाव
नहीं बरता वरन् धार्मिक सहिष्णुता और उदारता प्रदर्शित की, हिन्दू राजाओं को अपना सेनापति
बनाया, ऐसे शासकों के प्रति हिन्दुओं का पूर्ण सहयोग रहा और यह उनके सहयोग और
समर्थन का ही कारण था कि वे मुसलमान शासक भारत में एक सार्वभौम साम्राज्य स्थापित
कर सके। राजपूत सेनाओं ने उनकी सब मुश्किलें आसान कर दीं और सुदूर पूर्व, पश्चिम, उत्तर
और दक्षिण में राजाओं द्वारा संचालित हिन्दू सेनाओं ने इन मुस्लिम शासकों के लिए अनेक
दुर्लभ विजय प्राप्त की। हिन्दू राजाओं की यह सच्ची राष्ट्रीय भावना कही जासकती है।

अफगान युग में यद्यपि मुसलमान विजेता थे तथापि हिन्दुओं के बिना उनका काम नहीं
चलता था। अफगान शासकों ने उच्च राजकीय पदों पर मुसलमानों को और विशेष रूप से उन

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मुसलमानों को जो विदेश से आये थे नियुक्त किया परन्तु कर आदि वसूल करने के छोटे पदों पर हिन्दुओं को रखे बिना काम चलना असम्भव था अत: छोटे पदों पर बड़ी तादाद में हिन्दू कर्म चारी ही थे।

यद्यपि अफगानों ने शस्त्र शक्ति के बल पर राज्य स्थापित किया और धर्म के प्रचार में तलवार के बल का प्रयोग किया परन्तु भारत जैसे बड़े देश में इतनी बड़ी जनता को और विशेष रूप से उस जनता को जो सभ्यता और संस्कृति की दृष्टि से आक्रामकों से कहीं ऊँची हो और जिसमें वीरों की एक विशाल संख्या हो शस्त्रों के बल पर नियन्त्रण में रखना कठिन है। यही कारण है कि मुस्लिम प्रचारक, पीर, औलिया आदि प्रगट हुए और उन्होंने वह काम करना चाहा जो तलवार के बल पर असम्भव था। इनके प्रभाव से हिन्दू जनता मुस्लिम शासकों के कुछ निकट आई।

अफगान या पठान काल में मुसलमानों का जीवन हिन्दुओं की अपेक्षा अधिक सुखी था। उनको कोई कर न देना पड़ता था। मुसलमान सैनिक, नेता या शासकों को धन का अभाव कभी न खटकता था। बहुधा हिन्दू राज्यों में धन धान्य और सुवर्ण आदि प्रचुर मात्रा में थे, तथा उनके देव मन्दिर तो धन सम्पत्ति से परिपूर्ण होते। इन राज्यों और धर्म स्थानों की लूट का माल मुसलमान सैनिकों और शासकों में बँट जाता था। आम मुसलमानों के लिए "खानकाह" खुले हुए थे जिनमें वे भोजन वस्त्र व अन्य जीवनोपयोगी आवश्यक वस्तुऐं बिना मूल्य प्राप्त कर सकते थे। तात्पर्य यह कि योग्य मुसलमानों को तो राजकीय सेवा में ले लिया जाता था, योग्यतानुरूप उनको उच्च से उच्च पद प्राप्त हो जाते थे और सर्व साधारण मुसलमानों की गुजर "खानकाह" से हो जाती थी। मुसलमानों को कमाई के लिए परिश्रम करने की कोई आवश्यकता न थी। यही कारण है कि कृषि और शिल्प आदि श्रम के धन्धों में मुसलमानों का उस समय अस्तित्व ही न था।

प्रसिद्ध इतिहासकार इब्न बतूता के अनुसार जो हिन्दू मुसलमान बनने को तैयार हो जाता था उसे सुल्तान के सम्मुख उपस्थित किया जाता था। सुलतान उसे बहुमूल्य वस्त्र, भेंट खिलअत आदि देता और नागरिक जीवन के सुखमय द्वार उसके लिए खुल जाते। इस प्रकार के प्रलोभनों के होते हुए भी इस युग के हिन्दू अपने धर्म से विचलित न होते थे, यह हिन्दू धर्म की शालीनता का द्योतक है। इब्न बतूता ने लिखा है कि जब कोई हिन्दू सुलतान के दरबार में अर्जी लेकर हाज़िर होता तो उपस्थित मुस्लिम दरबारी चिल्ला कर कहते "हदाक अल्लाह" अर्थात् परमेश्वर तुम्हें सुबुद्धि प्रदान करे। जजिया कर के कारण न केवल हिन्दुओं की आर्थिक दशा अवनत थी वरन उनको एक भावना भी संतापित करती रहती कि शासन में उनकी स्थिति हीन है। परन्तु हिन्दूओं में स्वाभिमान और गौरव के भाव कभी नष्ट न हुए। वे संख्या की दृष्टि से मुसलमानों से बहुत अधिक थे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पठान वंश में अलाउद्दीन खिलजी सबसे अधिक शक्ति शाली शासक हुआ था। उसने हिन्दुओं की आर्थिक अवस्था को हीन बनाने में कोई कसर उठा न रक्खी। उसके मनोभाव यह थे कि जब तक हिन्दू धनी मानी रहेंगे उनमें नैराश्य का भाव उदय न होगा और उनकी वीरता उन्हें मुसलमान शासकों को ललकारने को सदा प्रोत्साहित करती रहेगी। इन्हीं भावों से प्रेरित होकर अलाउद्दीन ने हिन्दुओं की आर्थिक दशा को जर्जरित करने का संकल्प किया। जैसा कि उपर कहा जा चुका है उदर पूर्ति के लिए मुसलमानों को हल चलाने की जरूरत न थी, उनको शासन में उच्च पद प्राप्त थे। किसान इस समय प्रायः सभी हिन्दू थे। अलाउद्दीन ने व्यवस्था की किसान उपज का ५० प्रतिशत कर के रूप में दें जब कि हिन्दू राजाओं के समय में उन्हें केवल छठा भाग ही कर के रूप में देना पड़ता था। इस भयानक कर भार से किसानों की आर्थिक दशा इतनी पंगु होगई कि वे कभी सिर उठा कर चलने की स्थिति में न रहे। बरानी जैसे लेखक ने लिखा है कि हिन्दूओं की आर्थिक दशा इतनी हीन हो गई थी कि उनकी स्त्रियां मुसलमान अमीरों के यहां टहलनी के काम पर जाने लगीं थी और उनके घरों में सोने चांदी के सिक्के नाम मात्र को भी न थे। परन्तु यह बात स्मरण रखने योग्य है कि इस हीन दशा में भी वे अपने धर्म पर आरूढ़ रहे और भौतिक उन्नति के लोभ में अपने धर्म को न छोड़ा।

महाराणा संग्राम सिंह (राणा साँगा)

अफगान राज्य के अवसान और मुगल साम्राज्य के आरम्भ में भारत के राजनीति गगन पर एक जाज्वल्यमान नक्षत्र का उदय हुआ। हमारा आशय चित्तौड़ के महाराणा संग्राम सिंह से हैं जिनका लोक प्रिय नाम राणा सांगा था। राणा अद्वितीय शूरवीर, प्रतापी और महान राज नीतिज्ञ थे। उनमें हिन्दू साम्राज्य स्थापित करने की महत्वाकांक्षा थी। वे मुस्लिम शासन से संतुष्ट न थे और उन्होंने अद्भुत् मनस्विता से अनेक विजय प्राप्त कर अपना विशाल राज्य स्थापित किया। उनके उच्च विचार, देश प्रेम एवं कर्तव्य परायणता ने उन्हें भारत के सबसे अधिक शक्ति सम्पन्न राज्य की अध्यक्षता प्रदान की।

सुविख्यात् इतिहासकार श्री हरविलास शारदा का कथन है कि राणा सांगा भारत के अन्तिम सम्राट थे जिनकी अधीनता में समस्त राजपूत जातियां विदेशी आक्रमणकारियों को निकाल बाहर करने को एकत्रित हुई थीं। राणा साँगा का आविर्भाव भारत के दृश्य पटल पर ऐसे समय हुआ जब कि यह देश अनेक आपत्तियों से घिरा हुआ था। एक ओर तो राजपूत राजा लोग आपस में युद्ध कर रहे थे और एक दूसरे का घोर शत्रु हो रहा था और दूसरी ओर मुसलमानों के आक्रमणों का जोर था। पारस्परिक विद्वेष की अग्नि में साम्राज्य छिन्न भिन्न हो रहा था। ऐसे कठिन समय में राणा संग्रामसिंह ने सम्पूर्ण साम्राज्य को शृङ्खलाबद्ध किया। महाराणा के गौरव पूर्ण जीवन चरित्र का वर्णन आरम्भ करने के पूर्व उनके पूर्ववर्ती वंशजों का संक्षिप्त परिचय देना वांछनीय है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अलाउद्दीन खिलजी ने चित्तौड़ के किले का जालोर के सोनिगरा सरदार मालदेव को सूबेदार बनाया। अलाउद्दीन की मृत्यु के उपरान्त मालदेव के प्रभाव में कमी आगई। मालदेव के आधिपत्य में ही सीसौदिया वीर हम्मीर ने अपनी शक्ति में अपार वृद्धि की और चित्तौड़ के कुछ भागों पर अपना अधिकार कर लिया। मालदेव की मृत्यु के उपरान्त हम्मीर ने उसके पुत्र जंसी को युद्ध में परास्त किया और शनै: शनै: सम्पूर्ण मेवाड़ पर अपना राज्य स्थापित कर लिया। जनश्रुति के आधार पर हम्मीर देव को एक परम प्रतापी राजा मानना होगा। उसने एक बार दिल्ली की सेनाओं से सफलता पूर्वक युद्ध किया। इस युद्ध में या तो उसके मुकाबिले स्वयं दिल्ली का सुलतान था अथवा उसका कोई मुख्य सेनापति था। सन् १४३८ ई० के एक शिलालेख में जो महाराणा कुम्भा के समय का होसकता है रणक्षेत्र में हम्मीर द्वारा असख्य मुसलमानों के बध किये जाने का उल्लेख मिलता है। हम्मीर ने ईडर के राजाजीत कर्ण को भी युद्ध में पराजित किया और भीलों को पूरी तरह हरा कर भिलवाड़ा अपने वश में कर लिया। सन् १३६४ ई० में हम्मीर की मृत्यु के समय मेवाड़ एक विस्तृत एवं समृद्धिशाली देश हो गया था। हम्मीर के पुत्र क्षेत्रसिंह ने अपने पिता के संचित राज्य को स्थिर रक्खा। उसके पुत्र लाखा ने जो सन् १३८२ ई० में सिंहासनासीन हुआ युद्ध भूमि में अनेकों विजय प्राप्त कीं। उसने प्रजा के हित संवर्द्धन के लिए अनेकों कार्य किये जिससे उसका बहुत यश फैला।

राणा कुम्भा

सन् १४३३ ई० में लाखा का पौत्र राणा कुम्भा राज्याधिकारी हुआ। यह मेवाड़ के राज्य वंश में प्रसिद्ध राजाओं में से था। राणा कुम्भा के विषय में प्रसिद्ध इतिहासकार डाक्टर ईश्वरी प्रसाद अपनी पुस्तक "भारत वर्ष का इतिहास" में इस प्रकार लिखते हैं, "राना कुम्भा प्रतिभाशाली शासक था। वह रणप्रवीण योद्धा और राजनीतिज्ञ होने के अतिरिक्त एक अद्वितीय विद्वान और दार्शनिक भी था। कला और विज्ञान का स्वयँ ज्ञाता होने के कारण वह विद्वानों और गुणी जनों का समुचित आदर करता था। अनेक भिन्न भिन्न विषयों पर उसकी लिखी हुई पुस्तकें अब भी उपलब्ध हैं। वह काव्य की रचना कर लेता था और बाँसुरी बजाने में अत्यन्त दक्ष था। उसने अनेक मन्दिर, तालाब और कुँए बनवाये। उसकी बनवाई हुई इमारतों में चित्तौड़ का जयस्तम्भ सब से प्रसिद्ध है जो कितनी शताब्दियों बाद भी आज ज्यों का त्यों खड़ा उसकी विमल कीर्ति और महत्ता का मूक साक्ष्य दे रहा है।"

राणा कुम्भा के उत्कर्ष को मालवा और गुजरात की मुसलिम शक्तियाँ सहन न कर सकीं उन्होंने मेवाड़ के राज्य को ध्वस्त करने का बड़ा प्रयास किया परन्तु उनको राणा के मुकाबिले सफलता प्राप्त नहीं हुई। मुसलमान शासक राणा को युद्ध क्षेत्र में परास्त न कर सके।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सन् १४३७ ई० में राणा कुम्भा ने मलावा के सुलतान महमूद खिलजी को युद्ध में बुरी तरह हरा कर बन्दी बना लिया और उसे वह चित्तौड़ ले गया। राणा ने उसे ६ महीने तक चित्तौड के किले में बन्दी रख कर बिना किसी प्रकार की क्षति पूर्ति कराये मुक्त कर दिया। शत्रु के प्रति इस प्रकार की उदारता राणा की महत्ता और उदारता की द्योतक थी।

सन् १४६८ ई० में राणा के पुत्र ऊदा ने मेवाड़ का राणा बनने के लिए अपने पिता राणा कुम्भा की हत्या कर दी। मेवाड़ के सरदारों ने इस पितृघाती का विरोध किया और पांच वर्ष बाद सन् १४७३ ई० में ऊदा के भाई रायमल ने उसको अपदस्थ कर दिया। सन् १५०९ ई० में रायमल की मृत्यु हुई और उनके तृतीय पुत्र संग्राम सिंह मेवाड़ की गद्दी पर बैठे।

राणा साँगा के युद्ध

राणा सांगा के सिंहासन पर आसीन होने के समय पठानों की शक्ति क्षीण होने लगी थी और इस कारण राणा को दिल्ली के सम्राट सिन्कदर लोधी से कोई भय न था। परन्तु राणा को मालवा और गुजरात की मुस्लिम शक्तियों से कई बार लड़ना पड़ा। यद्यपि मालवा का शासक महमूद खिलजी द्वितीय (१५१०—३१) था तथापि राज्य शक्ति वस्तुत: उसके मन्त्री राजपूत सरदार मेदिनीराय के हाथों में थी। महमूद अपने ऊपर अपने मन्त्री के आधिपत्य से दु:खी था और उसने गुप्त रूप से गुजरात के सुलतान मुजफ्फर शाह से सहायता मांगी। सन् १५१८ ई० में गुजरात का सुलतान एक बड़ी सेना लेकर मालवे पर चढ़ दौड़ा और उसने माँडू के किले को जीत कर महमूद को उसकी गद्दी पर बैठा दिया। मेदिनीराय एक वीर राजपूत सरदार था। वास्तव में उसकी शक्ति को देख कर मुस्लिम अमीरों को उससे बड़ी ईर्ष्या थी। मेदिनीराय राणा साँगा के पास पहुँचा और उनसे सहायता के लिए अभ्यर्थना की। राणा ने ५०००० राजपूतों की विशाल सेना के साथ माँडू पर चढ़ाई कर दी। सुलतान महमूद बुरी तरह पराजित हुआ। वह युद्ध में घायल होकर बन्दी हो गया। राणा ने उसे तीन महीने तक चित्तौड़ में कैद रक्खा परन्तु विशाल हृदय राणा ने उससे युद्ध का व्यय और भविष्य में खुटाई न करे इसके लिए उसके पुत्र को बन्धक के रूप में रख कर उसकी रिहाई कर दी।

एक दफा ईडर के मुसलमान सूबेदार ने बड़े अपशब्दों का प्रयोग कर राणा को चुनौती दी। इस चुनौती का सम्वाद जब राणा के पास पहुँचा तो उन्होंने ४० हजार राजपूतों की एक विशाल सेना लेकर ईडर पर धावा बोल दिया। गुजरात की सेना इस युद्ध में बुरी तरह पराजित हो गई।

राणा सांगा और सरदार मेदिनी राय से बदला लेने के लिए मुसलमान शासक काफिरों के प्रति धर्म युद्ध का नारा लगाने लगे। गुजरात के सुलतान मुजफ्फर और मालवा के सुलतान ने परस्पर मन्त्रणा की। सोरठ के सूबेदार मलिक अयाज़ के सेनापतित्व में एक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

विशाल सेना जिसमें अयाज़ के भी २०,००० सवार अ तोपें थीं राणा से भिड़ने को भेजी गई। महाराणा एक विशाल सेना लेकर मलिक अयाज से लड़ने के लिए बढ़े। अयाज राणा के भय से बिना लड़े ही भाग खड़ा हुआ और यही दशा मांडू के सुलतान की हुई। यद्यपि मुसलमान इतिहास कार इस पराजय को दूसरी तरह कहते हैं परन्तु यथार्थ बात यह हैं कि इस युद्ध में मालवा और गुजरात की सम्मिलित सेनाएँ राणा द्वारा पूर्ण रूप से पराजित हुईं।

मालवा और गुजरात के मुसलमान शासकों से निपटते रहने के अतिरिक्त राणा कई वर्षों तक दिल्ली राज्य के कई छोटे छोटे भागों को भी जीत कर अपने अधिकार में करते रहे। जब इब्राहीम लोधी दिल्ली के राज्य सिंहासन पर बैठा तो उसने एक बड़ी सेना लेकर मेवाड़ पर चढ़ाई कर दी। राणा से उसकी जबर्दस्त मुठ भेड़ हुई जिसमें राजपूत पूर्ण रूप से विजयी हुए। इस विजय के फलस्व रूप लोधी को मालवा के वे इलाके जो पहिले दिल्ली राज्य में मिला लिये गये थे राणा को समर्पण करने पड़े।

इस प्रकार अनेकों युद्धों में राणा की विजय होती गई जिससे उनकी कीर्ति न केवल भारत के कौने कौने में फैल गई वरन् विदेशी लोग भी उनकी शक्ति का लोहा मानने लगे। बाबर ने अपनी रोजनामचे की किताब में लिखा है कि राणा सांगा ने अपनी वीरता और चरित्र के बल पर हिन्दुस्तान में उच्च स्थान प्राप्त किया था। उनकी सैनिक शक्ति उस समय भारत के अन्य शासकों से बहुत अधिक थी। जैसा कि ऊपर वर्णन किया जाचुका है वे युद्धों में दिल्ली, गुजरात और मालवा की सेनाओं को परास्त कर चुके थे और उनके अनेक प्रदेश अपने अधिकार में कर चुके थे। उन्होंने भिलसा, सारंगपुर, चन्देरी और रणथम्भोर को जीत कर अपने अधीनस्थ सामन्तों के सुपुर्द कर दिये थे। मारवाड़ और आमेर के राजाओं ने उनकी अधीनता स्वीकार कर ली थी और ग्वालियर, चन्देरी, बूँदी, अजमेर, कालपी, सीकरी रायसीन, गुड़गांव, आबू और रायपुरा के राव एक प्रकार से उनकी अधीनता में रहने वाले सामन्त थे। राणा भारत के समस्त राजपूत राजाओं में सर्व श्रेष्ठ थे तथा उनके शिरमौर समझे जाते थे।

राणा सांगा के काल में दिल्ली की राजधानी में इब्राहीम लोधी का राज्य था। इब्राहीम बड़ा क्रूर और निर्दयी शासक था। उससे अफगान सरदार बहुत रुष्ट थे और किसी प्रकार उससे छुटकारा पाना चाहते थे। उन्होंने आपस में मन्त्रणा कर दौलत खां लोधी को बाबर के पास हिन्दुस्तान पर आक्रमण करने का निमन्त्रण लेकर भेजा। बाबर तो भारत की तरफ आने और अपनी सलतनत स्थापित करने की सोच ही रहा था कारण वह मध्य एशिया में असफल रहा था। इन्हीं दिनों राणा सांगा ने भी बाबर के पास हिन्दुस्तान की राजधानी दिल्ली पर चढ़ाई करने के लिए सन्देश भेजा। इसके लिए राणा को दोष देना व्यर्थ है। हिन्दुओं के लिए तो इब्राहीम लोधी और बाबर दोनों एक से थे। अपनी पुस्तक बाबरनामा में बाबर ने लिखा है कि राणा ने यह खबर भेजी थी कि उत्तर से दिल्ली पर बाबर हमला करे और दक्षिण से

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आगरा की तरफ से वे स्वयं चढ़ाई करेंगे परन्तु उन्होंने अपनी प्रतिज्ञा को न निभाया। राणा साँगा का बाबर को मदद न करना उनकी राजनीतिक सूझ बूझ का परिचायक था । उन्होंने इब्राहीम और बाबर दो मुस्लिम शक्तियों को भिड़ा दिया और स्वयं अलग रहे । सन् १५२६ ई० में पानीपत के क्षेत्र में दोनों ओर की सेनाओं में बड़ा भयङ्कर युद्ध हुआ। बाबर की विजय हुई और इब्राहीम लड़ाई में मारा गया। इस युद्ध में लगभग ४०, ४५ हजार सैनिक खेत रहे जिनमें अधिकांश अफगान थे।

यद्यपि पानीपत की लड़ाई में बाबर की विजय हो गई थी और इब्राहीम लोधी के हारने और युद्ध में मारे जाने से दिल्ली का सिंहासन बाबर के आधीन हो गया था तथापि राणा सांगा अपने इस निश्चय पर दृढ़ थे कि युद्ध करके मुगलों को हिन्दुस्तान से बाहर निकाल दिया जाय। बाबर ने कालपी, धौलपुर और बयाना पर अपना अधिकार जमा लिया था। राणा इन इलाकों पर अपना दावा पेश कर रहे थे। फलतः राणा साँगा एक विशाल वाहिनी लेकर बयाना की ओर बढ़े। महाराणा की चतुरङ्गिनी सेना का वर्णन स्वयं बाबर ने अपनी पुस्तक बाबरनामा में किया है। बाबर लिखता है कि स्वयं राणा के पास एक लाख सवार थे और उनके साथ ७ राजा ९ राव और १०४ छोटे सरदार थे। भिलसा का सरदार सिलहद्दी ३०,००० सवार, हसन खां मेवाती और चन्देरी का मेदिनीराय बारह हजार, डूंगरपुर का रावल उदयसिंह दस हजार, महमूद लोधी जिसे राणा ने इब्राहीम लोधी के बाद उसका उत्तराधिकारी घोषित कर दिया था दस हजार और इनके अतिरिक्त अन्य बहुत से राजा तीन तीन और सात सात हजार सैनिक लेकर युद्ध भूमि में बाबर से लड़ने के लिए राणा के झंडे के नीचे इकट्ठे हुए। राणा की इस विशाल सम्मिलित सेना के योग को बाबर ने दो लाख दस हजार सैनिक लिखा हैं, परन्तु इसमें अतिशयोक्ति प्रतीत होती है। अर्सकिन ने इस संख्या को एक लाख बीस हजार बतलाया है और संख्या का ऐसा ही कुछ वर्णन तबकात अकबरी में मिलता है।

इस विशाल सेना के आगे कालपी धौल पुर और बयाना के सूबेदार क्या ठहर सकते थे। इन तीनों जिलों पर राणा ने अपना अधिकार कर लिया और आगरा की तरफ बढ़ने लगे। बाबर ने इनकी प्रगति को रोकने के लिए एक सेना आगे भेज दी। सीकरी के पास खनुआ में इस सेना की मुठभेड़ राणा से हो गई। राणा ने इस सेना को इस बुरी तरह परास्त किया कि मुगलों के छक्के छूट गये। वे भाग कर बाबर के पास पहुँचे और राजपूती सेना की बहादुरी का वर्णन करते हुए कहने लगे कि राणा की सेना अजेय है। इन समाचारों से बाबर के सिपाहियों में निराशा छा गई और वे बाबर को काबुल लौट चलने के लिए कहने लगे। परन्तु बाबर को तो अपना राज्य कायम करना था, उसने अपने सरदारों और सिपाहियों को समझा बुझा कर युद्ध करने के लिए राजी कर लिया। बाबर ने इस अवसर पर बड़ी प्रतिज्ञाएं ली। उसने अपने शराब पीने के सब सोने चाँदी के बर्तन तोड़ डाले और उनके सोने चांदी के टुकड़ों को गरीबों में बाँट दिया। उसने भविष्य में कभी मद्यपान न करने की प्रतिज्ञा की जिसे उसने अन्त तक निभाया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

राजपूतों से युद्ध को उसने जिहाद की संज्ञा दी और अपने सरदारों को सम्बोधित करते हुए कहा कि इस संसार में जो आया है उसकी मृत्यु अवश्य होगी। इसलिये बदनाम होकर मरने से सम्मान से मरना अच्छा है। 'खुदा का शुक्र है कि अगर हम लड़ाई में मरेंगे तो शहीद होंगे और अगर जीत गये तो गाजी कहलाऐंगे।" बाबर ने सरदारों और सैनिकों के हाथ में कुरान देकर प्रतिज्ञा कराई कि रणक्षेत्र से हरगिज न भागेंगे।

पहिले तो सन्धि आदि की बात शुरू करके बाबर ने राणा को सन्देह में रखने की चेष्टा की। परन्तु उसका कुछ परिणाम न निकला। केवल बाबर को अपनी तैयारी पूर्ण करने का अवसर मिल गया। ता०१६ मार्च सन् १५२७ ई० को खानवा के मैदान में दोनों ओर की सेनाओं में तुमुल युद्ध हुआ। राणा के नेतृत्व में राजपूत वीरों ने बड़ी बहादुरी दिखाई और एक बार तो यह प्रतीत होने लगा कि युद्ध में विजय राजपूतों की होगी परन्तु एक तो बाबर की तोपों ने राणा की सेना को बहुत क्षति पहुँचाई और दूसरा दुर्भाग्यपूर्ण कार्य यह हुआ कि राणा सांगा को एक तीर ऐसा लगा कि वे मूर्च्छित हो कर गिर पड़े। इस दशा में राणा को कुछ सरदार युद्ध स्थल से उठा कर ले गये। राणा की अनुपस्थिति में वही हुआ जो उस काल में इस प्रकार की परिस्थिति में हो जाया करता था। राजपूतों में भगदड़ मच गई और उनके बहुत से सरदार युद्ध में खेत रहे। राजपूतों की इस हार ने हिन्दुस्तान के साम्राज्य को तीन चार शताब्दियों के लिए विदेशियों को अर्पण कर दिया।

राणा सांगा एक ऐतिहासिक वीर सम्राट थे। उनके शरीर पर युद्ध क्षेत्रों में अर्जित ८० घाव थे। उनके एक आंख, एक टांग और एक हाथ लड़ाईयों में गायब हो गये थे। परन्तु वे असीम साहस के महान् पुरुष थे।

उन्होंने खानवा के युद्ध के बाद पुनः राजपूतों को जाग्रत करके उनमें चेतना भरने का प्रयास किया परन्तु अनेक राजपूत सरदार उनके इन प्रयत्नों से सहमत न हुए। इतनी जल्द वे लोग दूसरा युद्ध करने न तो इच्छा ही रखते थे और न सामर्थ्य।

यह निर्विवाद सत्य है कि राणा अपने समय में भारत के सर्वश्रेष्ठ वीर थे। (क्रमशः)

ब्रज-भारती

ले० राजेन्द्र रंजन, भारती भूषण, मथुरा

रसिक सिरोमनि के रुचिर चरित और
रूप रस माधुरी कों सतत निखारती।
नंद दास सूरदास सेनापति की सुसेव्य, केशव बिहारी नें उतारी नित आरती।
मागधी अवधि बंग अंग रच्छिका हैं तेरी,
देव बानी नागरी सिंगारती सुधारती।
'रंजन, के मन काम सारती सदैव आज, साज सज भारत में गूंजे ब्रज भारती।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

श्रीमद् भगवद्गीता

प्रथम अध्याय

रूपान्तरकार श्री सतीशचन्द्र मिश्र एडवोकेट

धृतराष्ट्र उवाच

धर्म क्षेत्र कुरुक्षेत्र भूमि में, युद्ध हेतु एकत्रित हो,
मेरे और पाण्डुपुत्रों ने हे संजय क्या किया ? कहो ।।

संजय उवाच

व्यूहयुक्त पाण्डव सेना, देखी राजा दुर्योधन ने,
आचार्य द्रोण के पास पहुंच, इस तरह लगा तब वह कहने ।।
इस महान पाण्डवी सैन्य को, देखो हे आचार्य सुजान,
व्यूहाकार किया जिसको, तब शिष्य द्रुपद सुत बुद्धिमान् ।।
इस सेना में वीर धनुर्धर, भीमार्जुन समकक्ष अनेक,
द्रुपद महारथी मत्स्यराज, सात्यकि समरजित यादव श्रेष्ठ ।।
धृष्टकेतु और चेकितान, काशी नरेश बलवान प्रवल ।
पुरुजित कुन्ति भोज नर पुंगव, शैव्य श्रेष्ठ रणविज्ञ अटल ।।
परम पराक्रमी युधामन्यु, बलवान उत्तमोजा निश्चल,
अभिमन्यु द्रोपदी पुत्र पंच, है महारथी, रण जयी सफल ।।
मेरे भी जो श्रेष्ठ वीर, समझ लीजिये हे द्विजवर,
जो नायक मेरी सेना के, मैं कहता सुनिये गुरुवर ।।
हैं स्वयं आप औं भीष्म वृद्ध, संग्राम जयी कृप मित्र कर्ण ।
अश्वत्थामा तव पुत्र श्रेष्ठ, शुभ सोमदत्त सुत प्रियविकर्ण ।।
इनके अतिरिक्त अनेक वीर, बहु अस्त्र-शस्त्र सज्जित सुजान,
ममहित जीवन की आश त्याग, आये हैं, इस रण में महान ।।
सब विधि अजेय सेना मेरी, रक्षक है जिसके सुभट भीष्म ।
अति सुगम विजय पाना उनपर, जिनका रक्षक रण अज्ञ भीम ।।
इसलिए सकल रण भूमि मध्य, अपनी स्थिति में दृढ़ रह कर।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बलवान भीष्म की रक्षा में, तत्पर हों आप सभी मिलकर ।।
कुरुवृद्ध पितामह भीष्म व्रती, हर्षित करने दुर्योधन को ।
कर सिंह नाद घन घोर विकट, फूँका निज शंख प्रतापी को ।।
तदोपरांत दुंदभी शंख, पंचानद गोमुख आदि सकल,
बज उठे यकायक एक, साथ, अति शब्द भयंकर हुआ प्रबल ।
तब श्वेत अश्व से युक्त सुभग, रथ में स्थिर आसीन हुए,
माधव औ पाण्डव श्रेष्ठ पार्थ, ने दिव्य शंख स्वर युक्त किये ।।
श्री हृषीकेश ने पाञ्चजन्य, शुभ देवदत्त धनंजय ने ।
पौण्ड्र नाम का महा शंख, अति भीषण भीम वृकोदर ने ।
नृपति युधिष्ठिर ने तब अपना, फूँका शंख अनंत विजय ।
मणि पुष्पक एवं सुघोष को, सहदेव नकुल करते स्वरमय ।।
अति श्रेष्ठ धनुर्धर काशिराज, अति रथी शिखण्डी सुभट प्रबल,
सात्यकी द्रुपद सुत मत्स्य राज, अपराजित रण में रहें अटल ।
पांचाल नृपति द्रोपदी पुत्र, आजानु बाहु अभिमन्यु अथक ।
उद्घोषित किये प्रसिद्ध शंख, हे राजन सबने पृथक—पृथक ।।
वह विकट भयंकर तुमुल घोष, अम्बर अवनि में व्याप्त हुआ ।
धृतराष्ट्र सुतों के हृदयों को, जिसने तत्काल विदीर्ण किया ।।
इस तरह व्यवस्थित कौरव सब, जब देखे पार्थ कपिध्वज ने ।
उस प्रबल युद्ध की बेला में, जब लगे शस्त्र उद्यत होने ।।
तब श्री कृष्ण से अर्जुन ने, गाण्डीव उठा ये वचन कहे,
"दोनों सेना के बीच तनिक, हे अच्युत रथ स्थित करिये"
लड़ने के लिए यहां आये, मैं देखूँ भली प्रकार उन्हें ।
इस विकट समर व्यापार बीच, हैं शोभित मुझ से युद्ध जिन्हें ।।
कल्याण कामना लेकर जो, दुर्बुद्ध सुयोधन की रण में ।
आये हैं नृपति अनेक यहाँ देखूँ उनको समरांगन में ।।
हे राजन, कंस निकंदन से, इस तरह कहा अर्जुन ने जब ।
दोनों सेना के ठीक मध्य स्थित करके उत्तम रथ तब ।।
कुरु वृद्ध भीष्म द्विज श्रेष्ठ द्रोण, सन्मुख सम्पूर्ण नृपति दल के ।
बोले श्री कृष्ण पृथा सुत से, 'देखो कौरव दल मन भर के' ।।

(अपूर्ण)

———

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद का ब्रज भाषा साहित्य

ले० डा० कैलाश चन्द्र भाटिया, एम० ए०, पी० एच० डी० डी० लिट०

हिन्दी साहित्य में 'ब्रजभाषा-साहित्य' की बहुत प्राचीन परम्परा रही है। आधुनिक
काल में भी जहां इस परम्परा का निर्वाह 'ब्रज—क्षेत्र' से बाहर अनेक गण्यमान कविगण तथा
साहित्यकार (राम चन्द्र शुक्ल, राम प्रसाद त्रिपाठी, वियोगी हरि, नवीन, डा० रसाल, सरस,
द्वारिका प्रसाद मिश्र, रीवाँ नरेश) करते रहे वहाँ आज स्थिति इतनी बदल गई है कि ब्रजभाषा
में निष्णात कवि भी खड़ी बोली को ही माध्यम के रूप में अपना रहे है। जहाँ ब्रजभाषा में
बुन्देल खण्ड (अखिलेश, ब्रजेश, लाल, देवेन्दु) अवध (हितैषी, प्रणयेश, श्याम, त्रिशूल)
और काशी (अवधेश, किंकर) तक के कवि लिखा करते थे वहां आज ब्रजक्षेत्र के केन्द्र मथुरा
वृन्दावन में भी खड़ी बोली का ही बोल—बाला है। काल के प्रवाह का प्रभाव है कि आज
'ब्रजभाषा' बोली मात्र रह गई है और 'खड़ी बोली' अपने विपुल वाङ्मय के कारण 'साहित्यिक
भाषा' के रूप में आसीन है। आलोच्य काल में साहित्यिक दृष्टि से चाहे कम प्रगति हुई हो पर
ब्रज का भाषा-वैज्ञानिक अध्ययन विशेष हुआ। जहाँ धीरेन्द्र वर्मा के पुराने शोध-कार्य का हिन्दी
अनुवाद सन् १९५४ ई० में प्रकाशित हुआ वहाँ चन्द्र भानरावत, (मथुरा की बोली), अम्बा
प्रसाद 'सुमन') अलीगढ़—बुलन्द शहर की बोली ,(रामस्वरूप चतुर्वेदी) आगरा की बोली)
आचार्य किशोरी दास वाजपेयी ने (हिन्दी शब्दानुशासन के परिशिष्ट में) ब्रज बोली पर मौलिक
कार्य प्रस्तुत किये हैं। लेखक ने स्वयं 'ब्रजभाषा और खड़ी बोली का तुलनात्मक अध्ययन'
प्रस्तुत किया है।

इस काल में भी प्राय: भक्ति काव्य की ही विशेष प्रधानता रही और उसमें भी रीतिका
लीन प्रवृत्तियों के परिवेश में कृष्ण काव्य का ही प्राधान्य रहा है। इस धारा में पुरानी पीढ़ी के
वयोवृद्ध साहित्यकार तो बहते ही रहे पर नयी पीढ़ी ने भी कम उत्साह प्रदर्शित नहीं किया।
यह उल्लेखनीय है कि आज की 'नयी कविता' के आचार्य जगदीश गुप्त द्वारा अपने प्रारम्भिक
काल में लिखी 'नैत्र-वर्णन' संबंधी कविताएँ रीतिका लीन उत्कृष्ट कविताओं से टक्कर ले सकती
हैं। इस दिशा में मुकुन्द चतुर्वेदी का सहस्त्रों पद्यों में रचा गया 'कृष्ण कौस्तुभ' महाकाव्य, रसिया
सागर राधा कुन्डलिया, यमुना लहरी आकार—प्रकार, वेश--भूषा, बोलचाल से
ब्रज--संस्कृति के मूर्तिमान स्वरूप रामलला की 'द्वारिकाधीश पच्चीसी, द्रौपदी--दुकूल
राधेश्याम की तर्ज पर लिखा गया भगवानदत्त चतुर्वेदी का 'कृष्ण चरित', गोविन्द कवि का
१६ सर्गों में रचित 'महारास' महाकाव्य, गोकुल वासी वयोवृद्ध देवी द्विज का 'गोपालाष्टक'
(प्र०), कैलाश चन्द्र 'कृष्ण' की श्यामा – श्याम पच्चीसी तथा जमुना--जामिनी, श्याम संगीत
श्याम शतक, वृन्दावन--शतक आदि के रचयिता बाबू राम शास्त्री की वन्शी , जीवन
लाल पाण्डे की, 'हलधर हिलोर' आनन्द गो० का रोला छन्द में रचित 'श्री मद्भागवत सार'

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

किशोरी शरण अलि का 'वृन्दावन हित हरिवन्श यश' अनेक चित्र काव्यों के रचयिता तथा मेघदूत के ब्रजभाषा में अनुवादक हुबी कश चतुर्वेदा का मयक श्लेष मय काव्य 'राम कृष्णायन' (प्र०) तथा सरस कवियों में अग्रगण्य एवं कमनीय कन्ठ से ब्रजभाषा काव्य धारा में स्नान कराने वाले अमृत लाल चतुर्वेदी का 'श्याम संदेशौ' उल्लेखनीय हैं। अन्य विषयों में विक्रमादित्य का चारत ब्रज के कावयों का आकर्षण रहा है जिसमें गोविन्द कवि का 'विक्रम--विलाक और रामलला का 'विक्रमादित्य' उल्लेखनीय है। सुमनेश का 'यक्षिणी' खण्डकाव्य भी महत्व पूर्ण हैं।

ब्रज भूमि की रज में भक्ति—रस के साथ सहज हास्य एवं चुटीले व्यंग्य के की टाणु भी पर्याप्त है। वयोवृद्ध साहित्यकार, घासपात पर 'देव पुरस्कार' विजेता महाकवि शंकर के पुत्र हरिशंकर शर्मा, छेड़ छाड़ के रचयिता हृषिकेश चतुर्वेदी, हास्यर साचार्य गोपाल प्रसाद व्यास, हास्यरस के शोध-कर्ता तथा कवि डा० बरसान लाल चतुर्वेदी, कवि-सम्मेलनों के सिर-मौर काका हाथरसी तथा तुकन्ड कार भारत भूषण अग्रवाल का सबंध ब्रज-क्षेत्र से ही है। समय की माँग के अनुसार आप सभी ने ब्रज के स्थान पर खड़ी बोली में ही अधिक लिखा है। शुद्ध ब्रज भाषा में बाल मुकुन्द चतुर्वेदी की हास्य सतसई, भगरंग छन्द, चाचा की चटनी, छेड़ छाड़ मूँछ महासम्मेलन तथा रामलाल की 'मोदक-महिमा' ली जा सकती है।

'ब्रज-महात्म्य' से सबन्धित रचनाओं में मुकुन्द कवि का 'मथुरा मकरन्द' 'ब्रज रज' रावनजा का 'गिरिराज अष्टक' 'वृन्दावन-विरुद' विष्णुदत्त शर्मा का 'गिरिराज' तथा कृष्ण चन्द्र शर्मा 'कृष्ण' का 'ब्रज वसुन्धरा' (प्र०) उल्लेखनीय है।

राष्ट्रीय धारा का भी जन पदीय भाषाओं पर विशेष प्रभाव पड़ा है। इस दिशा में सामयिक कविताओं के अतिरिक्त (भगवानदत्त जी के पद्य, गोविन्द जी के २५० छन्द तथा गीत, साहबसिंह मेहरा का सुराज गंगा, सुमनेश के छन्द, मुकुन्द जी का विप्लव गान (प्र०) आदि। स्थायी साहित्य भी प्रकाशित हुआ है जिसमें गांधी-साहित्य लिया जा सकता है। इस दृष्टि से गांधी-निधन (रामलला कृत), लोक-शैली में लिखा शर्मन लाल अग्रवाल द्वारा रचित गाँधी आल्हा मुकुन्द कवि का युगछन्दमाला (प्र०) उल्लेखनीय है। हृषीकेश चतुर्वेदी की वीर कुँवर सिंह पर लिखी कविता बहुत लोकप्रिय सिद्ध हुई है।

खेमसिंह नागर, नवाबसिंह चौहान, मूड़, खिचड़ी आटेवाला, अन्कुश जी, उलफतसिंह निर्भय, विश्वम्भरनाथ उपाध्याय सामयिक विषयों पर लिखते रहे। विष्णुदत्त शर्मा ने चीन की बर्बरता, चाऊ के प्रति, गोविन्द कवि की 'वीर पद' 'पंचशील' 'सह अस्तित्व' पर रचनाएँ महत्वपूर्ण है।

'किसान ही भारत राष्ट्र के स्तम्भ हैं' यह बात इस अन्न-संकट ने बिल्कुल स्पष्ट करदी है वस्तुतः किसान ही कल्पवृक्ष, देवमणि और कामधेनु है। दरिद्रता में पगे हुए इस जीव

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

की ओर भी कवियों का ध्यान गया । इस दिशा में उल्फत सिंह निर्भय ने अपनी 'किसान सतसई' 'किसानों की पुकार' 'किसानों का बिगुल' में उनकी तरफ से उद्घोष किया है। कविवर सुमनेश ने 'हलाष्टक' की रचना की । इस दिशा में सबसे उल्लेखनीय कृति है जन पदीय कवि जगनसिंह सेंगर द्वारा रचित 'किसान सतसई' (प्रकाशित १९४८ ई०) जिसकी भूमिका में कवि ने स्पष्ट किया है 'अपने ही बन्धुओं के घुँधले चित्र उन्हीं की अपनी ब्रजभाषा—ब्रज भारती में खींचने को तिलमिला उठा । वस्तुतः उन्होंने किसान की दरिद्रता का नग्नचित्र सुन्दर सरस तथा भावपूर्ण शैली में प्रस्तुत कर मां भारती की सेना की है जिस पर उ० प्र० सरकार ने ८०० रुपये का पुरस्कार भी प्रदान किया है।

पुरानी शैलियों की परिपाटी का निर्वाह, आलाच्य काल में, किया जाता रहा । वियोगी हरि जी की 'वीर' तथा रामचरित उपाध्याय की 'ब्रज' तथा 'दुलारे दोहावली' की परम्परा में गो० मदन मोहन की राष्ट्र सतसई, फलक की 'फलक सतसई' सयमी जी की संयमी सतसई' मुकुन्द की 'हास्य सतसई' रामेश्वर करुण की करुणसतसई तथा सेगर की किसान सतसई उल्लेखनीय है। उद्धवशतक की परम्परा में 'अभिमन्यु वध' नख-शिख तथा नायिका भेद की परम्परा में सुमनेश तथा रामलला का नायिका-भेद, नख — शिख, सत्यनारायण जी के सहपाठी वयोवृद्ध धनीराम प्रेम का नायिका के केशों का वर्णन, ऋतुवर्णन, में देवी द्विज, कृष्ण कवि, रामलला, भगवानदत्त. गोविन्द चतुर्वेदी, महेश प्रसाद, सुमनेश के कवित-सवैये, समस्या-पूर्ति में रामलला तथा गोविन्द के छन्द संग्रहणीय हैं। ब्रज भाषा-मर्मज्ञ प्रभुदयाल मीतल का ब्रज साहित्य में नायिका—भेद (१९४८ ई०) तथा 'ब्रज साहित्य में ऋतु सौन्दर्य' । १९५० ई०। महत्वपूर्ण कृतियां है। आलोच्य काल में पुराने ब्रज भाषा साहित्य पर कम-से-कम १०० शोध प्रबन्ध प्रस्तुत किये गये होंगे जिनका विवेचन तो एक शोध प्रबन्ध में ही किया जा सकता है।

अमृतध्वनि छन्द के आधुनिक प्रवर्तक रामलला जी हैं जिनकी इस क्षेत्र में कोई समता नहीं कर सकता । आपका 'अमृतध्वनि शतक' उल्लेखनीय है । अन्य कुछ कवियों ने भी प्रयोग किये है।

इधर पद—परम्परा का विशेष विकास न हो सका पर बाबा शीतलदास 'मौनी' ने वृन्दावन की गली-गली में दीवालों पर गेरू से कई हजार पद लिखे है।

काव्येतर अन्य विधाओं में मेहरा जी की चौपाल गीति नाटिका, रामनारायण अग्रवाल, शर्मनलाल अग्रवाल, डा० सुमन. डा० बरसाने लाल चतुर्वेदी, मोहन स्वरूप भाटिया ने रेडिओ से प्रसारित होने वाले ध्वनि-रूपक लिखे हैं। गोविन्द चतुर्वेदी ने ध्वन्यालोक का ब्रजभाषा में अनुवाद प्रस्तुत किया है । लोक कहानियों में डा० सत्येन्द्र का संकलन, रामनारायण अग्रवाल का संग्रह तथा आदर्श कुमारी यशपाल के संग्रह 'पुण्य की जड़ हरी, 'ब्रज की लोक कथाएँ' उल्लेखनीय हैं। 'ब्रज लोक साहित्य के अध्ययन का सूत्र पात कर्मठ साहित्यकार तथा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सुप्रसिद्ध आलोचक डा० सत्येन्द्र के शोध—प्रबन्ध 'ब्रज लोक साहित्य का अध्ययन।' १९४९ ई०। से होता है, आपके ही सतत प्रयत्नों, प्रयासों से ब्रज,–गीत. कहानियां, कहावतों, त्योहारों. व्रत--अनुष्ठानों आदि पर वैज्ञानिक शोध--कार्य हो चुका हैं। आजकल आप ब्रज साहित्य का इतिहास लिखने में संलग्न हैं।

ब्रज--साहित्य-मन्डल के भूतपूर्व प्रधान–मन्त्री श्री कृष्णदत्त वाजपेयी के सम्पादकत्व में 'ब्रज का इतिहास' दो खन्डों में प्रकाशित हुआ। अन्य दिशाओं में—शर्मनलाल अग्रवाल द्वारा लिखित 'रास लीला' तथा रामनारायण अग्रवाल द्वारा सम्पादित 'ब्रज यात्रा' तथा 'रास लीला' ग्रन्थ उल्लेखनीय है। 'ब्रज भारती' के भूतपूर्व यशस्वी सम्पादक, ब्रज साहित्य, कला और संगीत के विशेषज्ञ जवाहर लाल चतुर्वेदी के 'सूरदास: अध्ययन सामग्री' का प्रकाशन इस काल की उपलब्धि कही जा सकती है। आपके ही अथक परिश्रम के फल स्वरूप ब्रज साहित्य मण्डल के तत्वावधान में प्रकाशित तथा वासुदेव शरण अग्रवाल, गुलाबराय, सत्येन्द्र तथा गोपाल प्रसाद व्यास के संपादक–मन्डल द्वारा संपादित 'पोद्दार अभिनन्दन ग्रंथ' सन् १९५३ में वयोवृद्ध साहित्यकार सेठ कन्हैयालाल पोद्दार को समर्पित किया गया। अभिनन्दन ग्रंथ की परम्परा में प्रकाश स्तम्भ के तुल्य यह ग्रन्थ श्रद्धांजलि साहित्य श्री कृष्ण. इतिहास पुरातत्व–कला. ब्रज जनदपदीय–पांच खन्डों में प्रकाशित वस्तुत: ब्रज भाषा, साहित्य' संस्कृति का सन्दर्भ ग्रन्थ बन गया है।

अन्त में भाव भाषा अलंकारादि से ओत प्रोत 'लक्ष्मी स्वयंवर' के रचयिता. अनेक आलोचना ग्रन्थों के लेखक. 'ब्रज भाषा की' 'जीती जागती लायबैरी 'सैंयां' के सुपुत्र चुन्नी लाल शेष को स्मरण करना चाहता हूँ जो हमारे मध्य आज नहीं रहे। ब्रज साहित्य को उनसे बड़ी आशाएँ थीं।

सौभाग्य से 'ब्रज–साहित्य मन्डल ' अब फिर सक्रिय हो गया। सिद्धेश्वरनाथ श्रीवास्तव द्वारा संस्थापित 'सूर स्मारक मन्डल' तथा राम नारायण अग्रवाल एवं सेठ गोविन्द दास जी के सत्प्रयास' के फलस्वरूप स्थापित 'ब्रज--काल--केन्द्र' आदि संस्थाएँ ब्रज साहित्य--संस्कृति की सुरक्षा में विशेष प्रयत्न शील है।

[१ जिन साहित्य कारों की विशिष्ट रचनाओं का इसमें उल्लेख नहीं हो सका वे कृपया अपने ग्रन्थों की रचना लेखक को दे दें। इस प्रकार की सूचनाएँ ब्रज--भारती के आगामी अंकों में स्थान पर सकेंगी और भविष्य में ब्रज भाषा और हिन्दी के इतिहास लेखकों को सहायक सिद्ध होंगी।] (संपादक)

— —

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कविवर सोमनाथ और उनका काव्य

[लेखक: आचार्य वासुदेव कृष्ण चतुर्वेदी, एम० ए०]

कविवर सोमनाथ अपने समय के एक प्रख्यात रीतिकालीन कवि, सफल लेखक, श्रेष्ठ विद्वान, सरस भावुक, उच्च अलंङ्कार शास्त्रज्ञ, महान् साहित्यिक, प्रौढ एव विनीत उपासकों में मूर्धन्य थे। हिन्दी साहित्य के यशस्वी लेखक स्व० सत्यनारायण जी कवि रत्न की पंक्तियों को पढने से उक्त कवि की महत्ता के विषय में हम पर्याप्त संकेत पा सकते हैं।—

''यदि सूदन महाराज सूरज मल के दरवार के भूषण थे तो सोमनाथ जी अपने पाण्डित्य और विशद काव्य के कारण प्रताप सिंह के दर्बार के केशव कहे जा सकते हैं।

(सत्यना० क०)

इन पंक्तियों का लेखक कोई वैदेशिक पण्डित होता तो सम्भवतः उक्त कविराज का प्रकाश कतिपय वर्षो में ही समग्र वाङ्मय में प्रख्यात हो जाता। हमारी दिव्य चक्षुओं ने कविरत्न के अन्जन को लाभप्रद नहीं समझा जब कि उनके कथन को भी ५० वर्ष पूर्ण हो गये हैं।

सोमनाथ के परिचय प्राप्ति के लिये अधिक श्रम अपेक्षित नहीं। ये मथुरास्थ चतुर्वेदी परिवार में छिरोरा अल्ल (उपनाम में) उत्पन्न हुये थे। यद्यपि कुछ विद्वानों ने, सोमनाथ शशिनाथ—नाथ तथा शोभनाथ को भी पृथक्र २ माना है परन्तु यह स्पष्ट हो चुका है कि ये सोमनाथ के ही नामान्तर हैं। कवि 'सोमनाथ' घनाक्षरी में तथा 'शशिनाथ' नाम सवैया में रखा करते थे। कहीं नाथ भी रखा है।

महाराजा रामसिंह के मंत्रगुरु नरोत्तम इनके पूर्वज थे जैसा इन्होंने स्वयं लिखा है।

मिश्र नरोतम नरोत्तम भये छिरौरा वन्श।
राम सिंह के मन्त्र गुरु माथुर कुल अवतन्स ।।
(रस पीयूष निधि)

छिरौरा तथा मिश्रों का गोत्र एक ही है। बहुधा छिरौरा अपने लिये मिश्र भी लिखते रहे हैं। नरोत्तम के पुत्र देवकीनन्दन अनूप श्रीकन्ठ थे। देवकी नन्दन के चार पुत्र नीलकन्ठ—मोहन—महामनि—राजाराम। नीलकन्ठ के अनन्द निधि—उजागर—गंगाधर—सोमनाथ हुये।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

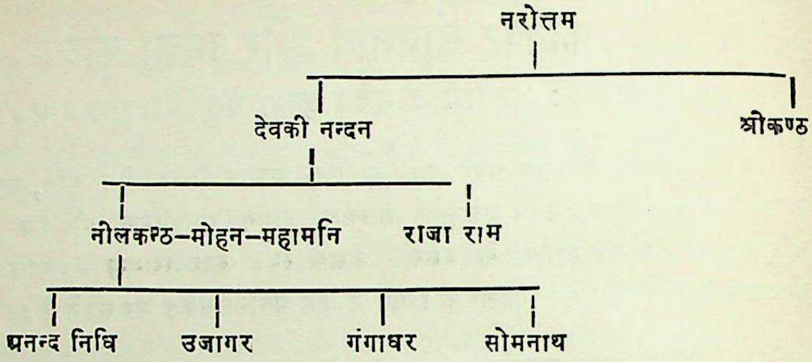

नीलकण्ठ प्रसिद्ध ज्योतिष शास्त्र के आचार्य थे। सोमनाथ ने एक कवित्त में नीलकण्ठ का परिचय दिया है।—

काम अवतार से अनूप अति रूप करि
सील कर सुन्दर सरद सुधा धर से
कविता में व्यास के समान कहि सोमनाथ
युद्ध रीति जानिवे में पारथ से दरसे
बुद्धि करि सिन्धुर बदन के समान अरू
उद्धत उदारता में भूमि सुरतरु से
सिद्धता में विमला वसिष्ठ मुनिवर से औ
जोतिस में नीलकन्ठ मिश्र दिनकर से।।

दिनकर उपमान से इनका सूर्य सिद्धान्त का विशेषज्ञ होना भी सिद्ध होता है अपने भाइयों के बारे में वे आगे लिखते हैं—

तिनके पुत्र अनन्द निधि बड़े उजागर जानि
जिनकौ सुयश दिगन्तलौं महा उजागर मानि
गंगाधर तिनके अनुज गंगाधर परमान
सोमनाथ तिनके अनुज सबतें निपट अजान।।

अनन्द निधि यदि विशेषण माना जाय तो इनके ज्येष्ठ भ्राता दो होते हैं 'पर सबते निपट अजान' तीन ज्येष्ठों का परिचायक है।

कविवर सोमनाथ वर्तमान रतन कुन्ड मुहल्ले के समीप ही रहा करते थे। कालान्तर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

में विद्योपार्जन की सार्थकता के लिये भरतपुर नरेश सूरज मल (सूदन के आश्रय दाता) तथा उनके अनुज प्रताप सिंह के दर्बार में रहे थे।

श्री प्रताप सिंह को पिता के आदेश से 'वेरि' नामक स्थान में जाना पड़ा पर वे सोमनाथ के वियोग को न सह सके एवं आग्रह पूर्वक उन्हें भी 'वेरि' ले गये। यहाँ दीर्घ काल के निवास में प्रताप सिंह पर उनका गहरा प्रभाव पड़ चुका था। शिक्षा के प्रेमी प्रताप सिंह के निमित्त उन्होंने कई ग्रन्थों का निर्माण किया। अनेक ग्रन्थों का पद्यात्मक अनुवाद एवं की कुछ एकों की टीका भी की।

शिवसिंह सरोज की भूल

शिव सिंह सरोज में इनका कविता काल सं० १८८० दिया है जो नितान्त अयुक्त है। क्योंकि रस पीयूष निधि का समय निश्चित है जिससे आधार पर इनका समय भी निश्चित प्राय है। रस पीयूष निधि वेरि में १७९४ वि० सं० में पूर्ण हुआ था। यह ग्रन्थ उच्च कोटि का ग्रन्थ है. तथा इसकी रचना कविके प्रौढ वय की ओर संकेत करती है। यदि ५० वर्ष की आयु में भी इस रचना को मान लिया जाय तो कवि का समय १७४४ वि० के आस पास बैठता है। सं० १८१३ तक की कृतियों से इनका १८२० सं० तक जीवन का अनुमान है।

१८८० सं० किसी भी अनुमान से सिद्ध नहीं किया जा सकता। यदि दीर्घायु माने तो इनकी रचना १८१३ सं० के उपरान्त भी होती जो प्राप्त नहीं अत: पूर्वोक्त १७४४ का आस पास का समय ही इनका जन्म समय मानना उपयुक्त है।

रीतकाल के वेगवान् प्रवाह के समय सोमनाथ उत्पन्न हुये फलत: उसका प्रभाव इन पर पड़ना अनिवार्य था। परन्तु वंश परंपरागत प्रभाव इन्हें भक्ति क्षेत्र से दूर नहीं होने देता था। रास पंचाध्यायी-वाल्मीकि रामायण के ४ कान्डों का अनुवाद आदि इसके उदाहरण हैं। इनकी ग्रंथावलि में रस पीयूष निधि सर्वोत्तम कृति है। वैसे इनके नौ ग्रन्थ प्राप्त हैं–

१. शशिनाथ विनोद २. कमलाधर ३. ब्रजेन्द्र विनोद ४. माधव विनोद ५. ध्रुव विनोद ६. प्रेम पच्चीसी ७. रास पचाध्यायी ८. रस पीयूषनिधि ९ स्फुट कविता

कवि कालिदास की कृति को लिपि बद्ध भी किया है इस कृति का नाम है वधू विनोद–

अन्तिम कृति माडलो या शिव पर्वती विवाह या शशि विनोद ही माना गया है। यह १८१३ स० में पूर्ण हुआ है। पार्वती, शिव के विवाह का वर्णन पुराण के आधार पर है। वैशाख शुल्क पूर्णिमा को विवाह की लग्न भी लिखी है। सोमनाथ व्रज भाषा के प्रबल पक्ष पाती थे कहीं भी इसके साथ से वंचित नहीं हुए। अनुप्रास यमक आदि के पीछे ये हाथ धोके

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नहीं पड़ परन्तु इनके ज्येष्ठ बन्धु के बारे में यह नहीं कहा जा सकता क्योंकि वे तो अलंकारों में ही रमे हैं और उनका पुत्र हरि प्रसाद भी, जिसने भाषा तिलक का निर्माण किया है।

सोमनाथ की भाषा में ओज तथा प्रसाद का आधिक्य है। उक्त ग्रन्थ में विविध छन्द हैं-हिमालय वर्णन सजीव है

पार्वती वर्णन—नव चपकली सी चरन आंगुली नख छबि जीती चंदै
अरु छोटे २ तिनमें नूपुर मनि गन जटित अमन्दै ॥

चौपाई--छोटी चौपाई दोहा कुन्डलिया—तोमर-सोरठा—छप्पै, मधमार—उपेन्द्र वज्रा-छन्द काव्य—मथना आदि एक साथ इस ग्रन्थ में देखे जा सकते हैं।

बरात वर्णन देखिये—

बनी असरफी सेर बडी बरफी अरु पेरा,
मोदक मगद मलूक और मट्ठे पहसेरा
फैनी गूझा गजक भुर भुरे सेव सुहारे
जोर जलेबी पुंज कन्द सों पगे छुहारे
निकुती छोटी छांटि मंजु मुति लड्डू चुनाये
सरस अमृतीं खुरमा सुन्दर वेस सजाये ॥

इस व्यंजनावली में मथुरा की भङ्ग की गोली भी गिनाई है। १८१३ पौष कृष्णा २ धा बुधवार को यह ग्रन्थ पूर्ण हुआ है। पाठक की अभिलाषा उत्तरोत्तर बढती है अतः यह सफल कृति कही जा सकती है।

—★—

शरद रजनी

(ले० राजेन्द्र रंजन, भारती भूषण)

अमल अमन्द चारु सीतल सुखद भव्य,
आनन मयंक ही सुसोभा सों हँसति है।
रंजन सुकवि, रस्मि सरल सरस अति,
हीरन के हार सौ सिंगार दर सति है।
कलित निकुंजन में भौंर पुंज गुंज मनों,
ललित मधुर बीन सुर सरसति है।
चाँदनी दिगंत अन्त धवल वसन धारें
सरद निसा ही देखु सारदा लसति है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पत्र व्यवहार

श्रद्धेय बाबूजी

सादर नमन् ।

कोसी कलाँ

२०-११-६५

व्रज भारती' के पुनर्प्रकाशन एवम् 'ब्रज साहित्यमण्डल' के कार्य को सुसंचालित करने के आपके शुभ संकल्प के लिए मेरी बधाई और शुभ कामना ।

आपके वक्तव्य में 'व्रज साहित्य मण्डल' के लिए जो एक सहज टीस है उसे मैं भली भांति अनुभव कर रहा हूँ । अपने अन्त:करण की विशुद्ध सात्विकता से प्रेरणा ग्रहण कर पर्याप्त समय के पश्चात् एक बार पुन: 'मण्डल' के कार्य का पुनर्मूल्यांकन करने का आपने जो सद्प्रयास प्रारम्भकिया है, उससे "मण्डल" के सभी यत्किंचित सम्बन्धित कार्यकर्त्ताबन्धुओं को योग्य दिशा निर्देश प्राप्त होगा, ऐसा मेरा विश्वास है ।

व्रज अपने आप में इतना पूर्ण और यथेष्ट है कि उसकी महिमा वर्णन करने की आवश्यकता नहीं । हिन्दी के कतिपय साहित्यकारों की कृपा से व्रज की साहित्यिक व सांस्कृतिक धरोहर की ओर व्रज में विद्वानों और सर्वसाधारण का संगठित रूप से ध्यान आकर्षण सर्वं प्रथम "व्रज साहित्य मण्डल' के ही माध्यम से हुआ । इस प्रकार ब्रज-चेतना को मुखरित करने का सर्वप्रथम श्रेय 'मण्डल' को ही प्राप्त होताहै जो उसके जीवन में एक ऐतिहासिक महत्व रखता है उस प्रबुद्ध चेतना के परिणाम स्वरूप व्रजविषयक विशिष्ट कार्य भी हुआ जिसका कि स्थायीमहत्वहै । 'मन्डल' के ही तत्वाबधान में व्रजवासियो ने अपने साहित्यिक गौरव को अनुभव किया और मन्डल अपने जीवन के आरम्भकाल में विकसित होकर उत्तरोत्तर वृद्धि करता गया ।

मन्डल की प्रगति अपने आप में जितनी उल्लेखनीय रही, उसकी अवनति भी इस क्षेत्र में एक कहानी बनकर कुछ योग्य पाठ पढ़ा गई है । उस कहानी की चर्चा करना अबमै इसलिए व्यर्थ व पूर्ण रूपेण अनावश्यक समझता हूँ कि जिस पावन भावना से आपने इस पुनीत कार्य को पुन: संचालित करने का श्री गणेश किया है, वे बातें उस भावनापर तुषारपात के समान होंगी और योग्य वातावरण के निर्माण में बाधा पहुंचेगी । अतएव आज वस्तुत: उसी भाव की आवश्यकता है जिससे प्रेरणा लेकर हम अपने पूर्वजों की क्रियात्मक परम्परा को प्रगति देसकें और ब्रज की इस साहित्यिकसंस्था में प्राणसंचार कर सकें ।

आज व्रज में एक अभिनव चेतना का संचार हुआ है । ब्रजभाषा के वैज्ञानिक व तुलनात्मक भाषाशास्त्रीय विवेचन, विभिन्न मानदण्डों पर आधारित व्रज साहित्य के अध्ययन व्रजकला व रंगमंच के परिष्करण, व्रजलोक जीवन और लोककाव्य के परिशीलन तथा राष्ट्रीयता में व्रज के योगदान की ओर एक नवीन स्फूर्तिवान दृष्टिकोण लेकर विभिन्नक्षेत्रों में कुछ करने के लिए उभार आया है और यह सचेतन उभार ठोस कार्यक्रमों के रूपमें धीरे धीरे स्पष्टतर होता जारहा है । अतएव आज व्रज की भाषा, साहित्य व कला के विकास के इन प्रगतिशील प्रयासों की विधिवत समायोजन की अतीव आवश्यकता है और वह सभी के पारस्परिक सहयोग और एक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

ध्येय वादिता से ही संभव है।

इसीकारण ब्रजसाहित्य मन्डल के पुनरुत्थान की आज की परिस्थितियों में औरभी अधिक आवश्यकता मुझे अनुभव होती है। साथही ब्रज में नवोदित प्रतिभाओं का भी अभाव नहीं है। अतएव प्रारम्भ से ही विशुद्ध रचनात्मक दृष्टि रखकर नवीन प्रतिभाओं के सक्रिय सहयोग और पुराने सभी अनुभवी कार्य कर्त्ताओं के परामर्श व सहानुभूति से एक बार पुनःमिलकर यह कार्य सम्पन्न हो ऐसी मेरी आकांक्षा है, जिसके लिए सभी के साथ मैं भी पूर्ण सहयोग के लिए कृत संकल्प हूँ।

विश्वास है 'ब्रजभारती' के सुयोग्य सम्पादन से निकट भविष्य में मथुरा में 'मन्डल' के सभी नवीन व पुराने कार्य कर्त्ताओं को आमन्त्रित कर ठोस कार्यक्रम की रचना करने में आप अवश्य सफल होंगे। सफलता की शुभकामना सहित।

भवदीय

मोहन लाल शर्मा

श्री राधारानी

(श्री मोहन लाल शर्मा, कोसीकलां)

(१)

ज्ञानिन की अजानी अरु ध्यानिन की समाधानी,
मानिन की महामानी, दानिन की दानी है।
योगिन की ज्वानी अरु वियोगिन की धानी,
रस रासेश्वर की निजि सरस खानी है॥
पावस में पानी अरु पानी में रवानी,
अरु रवानी में लहरानी सौख्य की अमानी है।
व्रज की ठकुरानी, ब्रजबासिन की सयानी, सीधी,
ब्रजठाकुर की मनमानी श्री राधारानी है॥

(२)

प्रेम की कहानी अरु कमानी व्रज जीवन की
नेह में बिकानी, सनेह सरसानी है।
पावनता परसानी अरु दिव्यता दरसानी
सहजता सुहानी, हरि हिय हरसानी है।
सुकोमलता कमलानी, अमलता शुभ्र शरदानी,
दृष्टि वरदानी, सब सृष्टि सुखदानी हैं।
शोभा बरसानी, नित मुखरित ब्रजबानी,
व्रज की कल्याणी राधे, व्रज की इन्द्रानी है,॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ब्रज साहित्य मन्डल की दो गोष्ठियाँ

ले० श्री किशन प्रसाद जैन एम० ए०, एल० एल० बी०

तुलसी जयंती

ब्रज साहित्य मंडल के तत्वावधान में रक्षाबन्धन के दिन साहित्यगोष्ठी आयोजित करने का वचन मैंने दिया था परन्तु तुलसी जयंती के लिए वह उपयुक्त दिवस न होने के कारण हमने संत श्री तुलसीदास का जयंती समारोह ४ अगस्त को मनाया जिसका आयोजन डैम्पीयर नगर. मथुरा में मेरे आवास पर किया गया। डा०माता प्रसाद गुप्त, अध्यक्ष, कन्हैया लाल मुंशी हिन्दी शोध संस्थान आगरा और वहाँ के सम्माननीय साहित्य सेवी श्री महेन्द्र जी तथा मथुरा के विद्वत् जन समारोह में पधारे।

तुलसी जयंती की अध्यक्षता श्रीयुत महेन्द्रजी ने की। आपने अपने अध्यक्षीय भाषण में कविरत्न को भावभीनी श्रद्धांजली अर्पित की और मानस के महत्व पर प्रकाश डालते हुए रामचरितमानसके प्रति दिन नियम से अनुशीलन और मनन पर बल देते हुए बताया कि इस पुनीत ग्रंथ में पारिवारिक जीवन की एकता एवं हृदयहारी पारस्परिक व्यवहार के अनूठे, अनुकरणीय उदात्त आदर्शों का सफल मनोहारी चित्रण है। आज की इस विषमय परिस्थिति में सहज सौजन्य एवं सद्‌भावना हेतु प्रत्येक मानवधारी के लिए पारिवारिक सामाजिक और धार्मिक दृष्टि से यह एक अत्यन्त ही उपादेय और सद-मार्ग दर्शन का दृढ संबल है। यह बड़े हर्ष का विषय है कि यह समादरणीय ग्रंथ का विदेशों में भी समुचित आदर एवं प्रणयन हुआ है।

डाक्टर माता प्रसाद गुप्त ने गोस्वामी जी को अपने श्रद्धाविगलित मन: पुष्प अर्पित करते हुए कहा कि भारतीय जीवन तथा मानव मूल्यों के प्रति आस्था रखने वाला तुलसी के सदृश कोई दूसरा कवि नहीं हुआ। भारत के सांस्कृतिक चरित्र की सम्पूर्णता से सम्पन्न अवतारणा श्री राम के चरित्र में हुई है। इस ध्येय को पूर्ति हेतु तुलसी ने श्री रामको अपनी काव्य रचना का आधार बनाया है। तुलसीदास जी ने जिस उत्कृष्टता से श्री राम का चरित्र प्रस्फुटित किया है वह उन्हें सर्वोत्तम स्थान दिलाने का अधिकारी है।

श्री प्रभुदयाल मीतल ने तुलसी के जन्म स्थान के विषय में उपलब्ध सामग्री पर प्रकाश डाला। श्री जयकुमार मुदगल ने कहा कि श्री तुलसी दास जी ने क्रांति के संदेश के लिए जो उचित समझा उसका मानस में उपयोग किया।

श्री वृन्दावन दास कार्य वाहक अध्यक्ष ने आगंतुक अतिथियों का स्वागत करते हुए मन्डल की गति विधि पर प्रकाश डाला।

जयन्ती का शुभारम्भ हिन्दी बाल मन्दिर की छात्राओं ने "श्री राम चन्द्र कृपालु भजमन" मंगला चरण से किया तथा अन्त में लोक गीत पर नृत्य प्रस्तुत किये।

सूर—सागर

इसी अवसर पर श्री माता प्रसाद जी गुप्त ने मथुरा के साहित्य कारों से वार्तालाप में बताया कि भारत सरकार ने सूर-सागर का प्रामाणिक संस्करण प्रकाशित करने के लिए पचास

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हजार रुपये की धन राशि प्रदान की है। इस धन को शोध कार्य और शोधात्मक प्रकाशन पर व्यय किया जायगा। डाक्टर गुप्त ने आगे बताया कि सूर सागर पर शोध कार्य अनवरत हो रहा है। सूर सागर पर १०० के लगभग प्राचीन प्रतियां संस्थान को प्राप्त हो चुकी हैं जिन्हें, माईक्रो-फिल्म कर लिया है। शोध सँस्थान के पास दुर्लभ सूर साहित्य का अपूर्व संग्रह है जिसको वह सर्वदा के लिए सुरक्षित रखने के लिए प्रयास रत है। प्रत्येक जिज्ञासु इस संग्रह से लाभ ले सकता है।

वीर रस कवि सम्मेलन

शरद पूर्णिमा को शरद गोष्ठी करने का विचार था। आज देश पर पाक आक्रमण के कारण जो वातावरण उत्पन्न हो गया है उसको दृष्टिगत करते हुए शरद गोष्ठी की अपेक्षा वीररस कवि सम्मेलन का आयोजन उपयुक्त प्रतीत हुआ। फलतः श्री चच्चन जी के संयोजकत्व में एक सफल वीर रस कवि सम्मेलन का समायोजन श्री हीरा लाल धर्मशाला में किया गया। अध्यक्ष पद ग्रहण किया मण्डल के कार्यवाहक अध्यक्ष श्री वृन्दावन दास जी ने।

सम्मेलन का शुभारम्भ कविवर राम लला की 'अमृत ध्वनि' से हुआ। श्री विष्णु दत्त की 'चीन को चेतावनी' चँचल चौहान की व्यंगात्मक हँसाइयां, बाल मुकुन्द चतुर्वेदी के वीर रस पूर्ण छन्दों ने सम्मेलन को आरम्भ से ही जमा दिया। श्री भगवान सहाय पचौरी ने भारत पाकिस्तान युद्ध पर व्यंगात्मक पिटाइयाँ तथा ओज दर्प पूर्ण 'एक बार रण के पहिये की धुरियाँ जब घूमने लगी' तथा 'मथुरा का कंकर कंकर प्रलयंकर है' को सुनाकर वीर रस वहाया। श्री राजेन्द्र कुमार पाठक सूचनाधिकारी की 'पाकिस्तान को ललकार' एक सुन्दर रचना रही।

श्री राजेश दीक्षित को रचना 'महा भारत की पुनरावृति' ने तो श्रोताओं में अपार जोश भर दिया। फलतः उन्हें बार बार कविता पाठ करना पड़ा जिसका श्रोताओं ने करतल ध्वनि से स्वागत किया। श्री चच्चन जी की कविता को भूरि भूरि प्रशंसा की गई।

इसके अतिरिक्त सर्व श्री भगवान दत्त चतुर्वेदी, श्री राजेन्द्र रंजन, श्री महेन्द्र शर्मा, श्री बनमाली शास्त्री, श्री विनोद दीक्षित, श्री बिष्णु चतुर्वेदी, श्री राजा बाबू वर्मन, श्री मनोहर अभय, बलदेव शास्त्री, कैलाश चन्द्र कृष्ण, श्री नवनीत लाल नागर और श्री बरसाने लाल जी आदि ने अपनी अपनी कविताओं का पाठ किया।

श्री ब्रज वल्लभ मिश्र ने युद्ध क्षेत्र के अनुभवों के आधार पर हँसाइयाँ तथा 'ऐसी धरती को कौन गुलाम बना सकता है'' अभिनय पूर्ण शैली में सुनाकर श्रोताओं की राष्ट्रीय भावना को जाग्रत किया।

धर्मशाला श्रोताओं से खचाखच भरी हुई थी। कवि सम्मेलन में सम्मिलित होने के लिए मथुरा तथा आस पास के सभी कवि गण उपस्थित थे। सम्मेलन करीब ८ बजे आरम्भ हुआ और रात्रि के ११ बजे वाद तक चलता रहा। श्री राजेश दीक्षित और ब्रज वल्लभ जी की कवितास्रों की मांग अन्त तक बनी रही।

हम सब चच्चन जी के आभारी है जिन्होंने सम्मेलन को सफल बनाने में पूर्ण योग दिया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

१--हमारे जवानों के शौर्य ने शत्रु के मनसूबे धूल में मिला दिए
२--हमारे यहां बने हथियारों के सामने अमरीकी हथियार कामयाब न हो सके ।
३--हमें अपने को अन्नोत्पादन में भी आत्म निर्भर होना है ।
४--अमरीका या अन्य देशों का मुंह ताकना धोखा दे सकता है

देश का हर व्यक्ति राष्ट्र की इस सबसे बड़ी समस्या में अपना योग दे सकता है जिला सहकारी बैंक में अपना धन आप जमा करें जहाँ वह पूर्ण सुरक्षित है ब्याज दूसरे बैंकों से आपको ज्यादा मिलेगा और किसानों के अन्नोत्पादन के कार्य में आपके धन का उपयोग होगा ।

जिला निवासियों के लिये हमारी शुभ कामनाओं के साथ हम आशा भी करते हैं कि आप अपने ही सहकारी बैंक को अपना कर अपना तथा इस बैंक का और अपने राष्ट्र का सदैव हित करेंगे ।

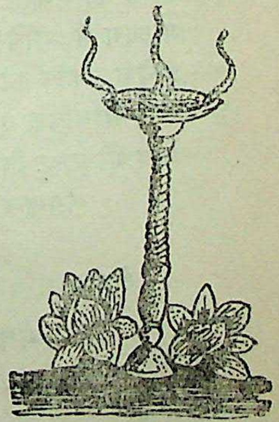

ब्याज की दरें

सेविंग खाता पर	४	प्रतिशत वार्षिक	
कौल डिपोजिट पर	३।।	,,	,,
६ माह की अमानत पर	५।।	,,	,,
१ साल की अमानत पर	६।	,,	,,
२ साल की अमानत पर	६।।	,,	,,
३ साल की अमानत पर	६।।।	,,	,,
४ साल की अमानत पर	७	,,	,,
५ साल की अमानत पर	७।	,,	,,
७ साल की अमानत पर	७।।	,,	,,

मथुरा जिला सहकारी बैंक लि०, मथुरा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

व्रज साहित्य मंडल के कुछ प्रकाशन

१- व्रज की लोक-कहानियाँ—(सम्पादक डा० सत्येन्द्र)

व्रज में प्रचलित रोचक लोक-कहानियों का वैज्ञानिक वर्गीकरण-पद्धति पर सङ्कलन। भूमिका, आवश्यक टिप्पणियों तथा उपयोगी शब्दकोश सहित अपने विषय की सर्वप्रथम पुस्तक, रङ्गीन आवरण, डिमाई साइज, पृष्ठ० १०×१८५। सजिल्द मू० ३।)

२- व्रज लोक-संस्कृति [सचित्र]—(सम्पादक डा० सत्येन्द्र)

व्रज साहित्य मंडल द्वारा आयोजित लोक-शिक्षण-शिविर में अधिकारी विद्वान द्वारा व्रजभाषा साहित्य, काल, सङ्गीत; इतिहास और लोक-वार्ता पर दिए गएभाषणों का सङ्कलन। आर्ट पेपर पर छपे ३० चित्रों सहित, डिमाई सा०, पृष्ठ सं० २२७। सजिल्द मू० ४)

३- पोद्दार अभिनंदन ग्रंथ—प्रधान सम्पादक डा० वासुदेव शरण अग्रवाल

सेठ कन्हैयालाल पोद्दार के सम्मान में व्रज जनपद के बहुमुखी अंगों पर ८० से अधिक विद्वानों के लेखों का संग्रह। यह संग्रह व्रजभाषा साहित्य एवम् संस्कृति के विश्व-कोश के रूप में कई वर्षों के परिश्रम से तयार किया गया है। सुपरराइल साइज चिकने कागज पर मुद्रित सैकड़ों चित्रों सहित, पृष्ठ सं० ११५४। मूल्य ३०)

४- व्रज का इतिहास—(सम्पादक श्री कृष्णदत्त वाजपेयी)

यह व्रज का प्रथम प्रामाणिक विस्तृत इतिहास है, जिसमें व्रज का भौगोलिक एवम् प्राकृतिक विवरण, व्रज के इतिहास की सामग्री, शूरसेन प्रदेश तथा श्री कृष्ण के समय से लेकर आज तक का व्रज का क्रमबद्ध इतिहास अनेक मानचित्रों सहित दिया गया है। व्रज का पूरा परिचय जानने वालों के लिए यह ग्रन्थ अत्यन्त उपयोगी है। डिमाई साइज, पृष्ट २६०। मूल्य ५

५- श्रीकृष्ण जन्म स्थान का इतिहास--(श्री कृष्णदत्त वाजपेयी(मूल्य ≡

६- व्रज का लोक साहित्य—(सं० डा० सत्येन्द्र)

व्रज के लोकसाहित्य का प्रथम व्यवस्थित सङ्कलन, सुपर रायल साइज पृष्ठ १५२। मूल्य ५)

७-अष्टछाप के वाद्ययंत्र [सचित्र]— श्री चुन्नीलाल 'शेष') (मू० ३

व्रजभारती —(सम्पादक श्री वृन्दावनदास)

व्रज साहित्य मंडल की त्रैमासिक शोध-पत्रिका। वार्षिक मू ५,) एक प्रति १।)

विशेष--केवल ११) वार्षिक देकर व्रज साहित्य मडल के सक्रिय सदस्य बनने वालों को मण्डल द्वारा सभी प्रकाशित ग्रन्थ पौन मूल्य में ही प्राप्त होते हैं तथा 'व्रज-भारती' निःशुल्क मिलती है।

उक्त तथा व्रजभाषा सम्बन्धी अन्य सभी प्रकार के साहित्य के लिए निम्न पते पर पत्र-व्यवहार करें—

प्रकाशन मन्त्री, अ० भा० व्रज साहित्य मण्डल, मथुरा।

मुद्रक—हीरालाल प्रिंटिंग प्रेस मथुरा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ब्रजभारती

फाल्गुण सं० २०२२ वि०

सम्पादक :
वृन्दावनदास
बी० ए०, एल-एल० बी०

प्रकाशक :
किशन प्रसाद जैन
संयुक्त प्रधान मन्त्री

अखिल भारतीय ब्रज साहित्य मंडल, मथुरा

वर्ष १९] [अङ्क ३

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

※ अनुक्रमणिका ※

क्रमांक लेख	लेखक	पृष्ठांक
१—गोपालकृष्ण [कविता]	श्री भगवानदत्त चतुर्वेदी	१
२—हमारा निवेदन [सम्पादकीय]	श्री वृन्दाबनबास	२
३— मथुरा के चतुर्वेदियों की सङ्गीतमय होरी [चौपाई]	श्री रमाशंकर चतुर्वेदी 'सुमन'	५
४—बल्लभ सम्प्रदाय की आठवीं गद्दी और उसका साहित्य	श्री प्रभुदयाल मीतल	९
५—मुगलयुग के शक्तिशाली हिन्दू राजा (२)	श्री वृन्दावनदास	३४
६—जय किसान जय जवान [कविता]	श्री राजेन्द्र रंजन	४४
७—ब्रज साहित्य मण्डल का पुनरुद्धार	श्री बनारसीदास चतुर्वेदी	४५

प्रिय पाठकवर,

हम आपकी सेवा में **'ब्रज-भारती'** का तीसरा अङ्क भेज रहे हैं इस वर्ष के दो अङ्क पहिले भी भेज चुके हैं।

पिछले कई वर्षों में 'ब्रज-भारती' प्रकाशित नहीं की जा सकी क्योंकि हमारे पास आर्थिक साधनों की कमी थी। इसके साथ-साथ और भी अनेक बाधायें उत्पन्न हो गई थीं। बाबू वृन्दावनदास जी के प्रयत्नों के फलस्वरूप अब 'ब्रज भारती' का प्रकाशन नियमित रूप से भविष्य में होता रहेगा। अतः आपसे प्रार्थना है कि आप अपना सहयोग हमें प्रदान करें और पत्रिका का वार्षिक मूल्य ५) भेजकर ब्रजभारती के स्थायी ग्राहक बन जायें। वैसे हम चाहेंगे कि आप ११) भेजकर ब्रज साहित्य मण्डल के सक्रिय सदस्य बन जायें जिससे आपको मण्डल द्वारा सभी प्रकाशित ग्रन्थ पौन मूल्य में प्राप्त हो सकेंगे तथा ब्रजभारती निःशुल्क मिलती रहेगी। सदस्यता आवेदन-पत्र संलग्न है।

धनराशि एवं सदस्यता आवेदन-पत्र बाबू वृन्दावनदास, सम्पादक ब्रज भारती, 'प्रकाश भवन' डोरी बाजार, मथुरा के पते पर भेजने की कृपा करें।

किशन प्रसाद जैन
संयुक्त प्रधान मन्त्री
ब्रज साहित्य मण्डल, मथुरा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ब्रजभारती

[अखिल भारतीय ब्रज-साहित्य-मण्डल की मुख-पत्रिका]

वर्ष १९] मथुरा फाल्गुण सं० २०२२ [अङ्क ३

गोपाल--कृष्ण

(रचयिता-श्री भगवानदत्त चतुर्वेदी)

कूल कलिंदजा के घनस्याम, कदम्ब की छाँह में बेनु बजामें।
नाम सुनाय सुनाय अनेकन, गायन को निज पास बुलामें ॥
हाथन सों गऊ देह सिराय, सनेह सों आपुनी छाक चखामें।
गामें कबों कबों नाचें गुपाल, कबों सबै ग्वालन घेरि नचामें ॥१॥

सङ्ग सखान के छाक छकें सद छाछ कौ पान करें भरि दौनी।
चाखें चखामें बनावत स्वाद, लियें कर में नवनीत की लौनी ॥
कोऊ सखा बहुभाषी बने कोउ मौनी बने से लरावत कौनी।
भूल रहे द्रुम डारन सों कोऊ खेलिरहे मिलि आँख मिचौनी ॥२॥

रच्छक आपुनो पाय प्रतच्छ त्रिलोक के नाथ कों गायसिहानी।
मोद भरें बनमें विचरें सुखपाय हरे तृन खाय अघानी ॥
बैठी जुगाली करें रुचिसों कोउ पीमें कलिंदजा कौ सुचि पानी।
ठाड़ी कोऊ तरु छाँह तरे कोऊ धूम मचाय रही मनमानी ॥३॥

लालन के सँग ग्वालन कों, अपुने अपुने घर की सुधि आई।
भानु छिपौही चहें यह जानिकें कान्ह ने टेरकें गाय बुलाई ॥
कान उठायें चहूँ दिसतें वे तुरंत सबै व्रजधाम कों धाईं
भोरहि तें अबलों बिछुरे बछरान की याद करी औ रँभाईं ॥४॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सम्पादकीय

हमारा निवेदन !

यों तो साहित्य सिंधु अगाध है उसमें जितना अवगाहन किया जाय अल्प है परन्तु यह भी निर्विवाद है कि ब्रजसाहित्य के कवियों और मर्मज्ञों की कृतियों पर इतना लिखा जा चुका है कि बहुधा सद्यः प्रस्तुत साहित्य में पुनरुक्ति दोष आजाता है। हिन्दी में ब्रज साहित्य की शोध पर हजारों निबन्ध, लेख और सैकड़ों प्रबन्ध लिखे जा चुके हैं। प्रातः स्मरणीय तुलसी, सूर आदि पर पुस्तकों का भण्डार विद्यमान है यही कारण है कि नये साहित्य में पूर्व लिखित एवं प्रकाशित अंश आही जाते हैं। ऐसी दशा में कुछ विद्वानों का यह मत है कि हमें थोड़ी लचीली नीति अपनानी चाहिये और इस पत्रिका में ब्रजसाहित्य के साथ साथ हिन्दी भाषा के अन्य साहित्य की भी चर्चा होनी चाहिये।

हमारे एक मित्र हमसे बोले, "भाई, यह पुरानी शराब नई बोतलों में कब तक भरते रहोगे, थोड़ी नूतनता लाओ, ब्रजसाहित्य के साथ साथ कुछ हिन्दी भाषा के साहित्य का भी अध्ययन, अनुशीलन करो, कुछ उस जाति के सम्बन्ध में भी विचार करो जिसकी बोली कभी ब्रजभाषा थी और आज जिसकी ब्रजभाषा और हिन्दी दोनों हीं बोलियाँ हैं।" हिन्दू जाति आज बड़ी संकटमय परिस्थिति से गुजर रही है। हिन्दू वीरों के शौर्य का इतिहास, भारतीय सभ्यता, संस्कृति, अध्यात्म, दर्शन चिन्तन आदि समस्त भारतीय साहित्य के विभिन्न एवं अविभाज्य अङ्ग हैं। क्या ब्रजसाहित्य को भारतीय साहित्य से पृथक् कोई इकाई मानना उचित है ? क्या साहित्य रूपी शरीरके एक अंग का वर्णन ही पूर्ण समझा जायगा ? क्या अन्य अङ्गों के वर्णन से वांछित अङ्ग का वर्णन अधिक प्राणवान् न होगा ? क्या वांछित एक अङ्ग तब ही शोभित न होगा जब अन्य अंगों की भी सुषमा प्रस्तुत की जायगी।

स्वनामधन्य श्री बनारसी दास जी चतुर्वेदी का लेख इस अंक में अन्यत्र छपा है। चतुर्वेदी जी अपने व्यापक दृष्टिकोण के लिए प्रख्यात हैं।उनके हृदय में सामाजिक जीवन को उन्नत करने की तीव्र आकांक्षा है। वे साहित्यकार से भी यह चाहते हैं कि वह सामाजिक जीवन को उन्नत करने में सहायक हो। वे चाहते हैं कि साहित्य सृजन के साथ साथ साहित्कार का ध्यान जन जीवन की ओर भी आकर्षित हो और वह उस जनपद की भी चतुर्मुखी उन्नति करने में अपना योगदान दे जिसमें कि वह रहता है या जिससे कि उसका सम्बन्ध है। ब्रज साहित्य मण्डल के कार्य कर्ताओं से वे केवल ब्रज साहित्य की ही नहीं ब्रज मण्डल की सर्वाङ्गीण उन्नति की कामना करते हैं। हम उनके इस प्रस्ताव का भी स्वागत करते हैं कि ब्रजभारती में कम से कम चार पृष्ठ अन्य जनपदीय भाषाओं की गतविधियों के लिये भी सुरक्षित हों। चतुर्वेदी जी के नेतृत्व में हिन्दी वालों को एक नये मोड़ की ओर मार्ग दर्शन उपलब्ध होता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भारतीय साहित्य, दर्शन, अध्यात्म और चिन्तन के अन्तर्गत ही ब्रजसाहित्य भी है। वह उससे पृथक् नहीं हो सकता। अतः यदि ब्रजभारती में भारतीय साहित्य अथवा इतिहास के कुछ पृष्ठ हों तो उनसे ब्रजसाहित्य को संक्रमण न होगा वरन् वे उसके लिये संजीवनी बूटी का काम करेंगे। हम अंश की पूर्ण के बिना कल्पना नहीं कर सकते हैं। भारतीय इतिहास के पुट से ब्रज साहित्य के गौरव की वृद्धि होगी, हानि नहीं। ब्रजभारती में ब्रज साहित्य पर शोध सम्बन्धी लेख प्रकाशित होते हैं, वे अवश्य प्रकाशित हों परन्तु उनके साथ यदि भारतीय हिन्दी साहित्य, इतिहास आदि पर भी सामग्री प्रकाशित हो जाय तो यह उसकी शोभा की बात होगी, हीनता की नहीं। हम ब्रजसाहित्य पर ब्रज भारती में लिखते हैं परन्तु लिखते हैं खड़ी बोली हिन्दी में। यह पद्धति ब्रजभारती की जन्म से चली आ रही है जिसको आज बीस वर्ष व्यतीत हो रहे हैं तो फिर यदि हिन्दी साहित्य का ब्रजभारती में ब्रजसाहित्य के साथ समावेश हो तो कोई आपत्तिजनक बात नहीं है।

भावनाओं की विद्यमानता सहृदयता की प्रतीक है। ममत्व से पोषण होता है यह भी निर्विवाद है। परन्तु हम भावनाओं से इतने अभिभूत न हो जाँय कि हम पर पृथक्तावादी होने का आरोप लग सके। हमें सबको साथ लेकर चलना है। ब्रजभाषा आधुनिक हिन्दी की जिसे खड़ी बोली भी कहते हैं जननी है। अपनी दुहिता की सुख समृद्धि देखकर कौनसी ऐसी माता है जो आनन्दित न होगी। हिन्दी भाषा की निरन्तर अबाध उन्नति ब्रजभाषा के लिये गौरव का विषय है संकट का नहीं।

हमारी नीति यह है कि ब्रज सम्बन्धी साहित्यिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक लेख ब्रजभारती में हम लगभग ६० प्रतिशत दें और शेष ४० प्रतिशत स्थान हम भारतीय हिन्दी साहित्य, इतिहास और अध्यात्म, दर्शन, चिन्तन आदि की सामग्री पर दें। यह एक आवश्यक मोड़ है और वर्तमान संदर्भ में नीतिसङ्गत है। हमारा आशय निकट भविष्य में ब्रजभारती के आकार में भी वृद्धि करने का है। मित्रों के सहयोग और ईश्वरेच्छा से ही यह सम्भव हो सकता है।

चतुर्वेदी जी को रूसी पुरस्कार :—श्रद्धेय श्री बनारसीदास चतुर्वेदी को उनकी साहित्यिक सेवाओं के उपलक्ष में जो रूसी पुरस्कार मिला है वह उनकी साहित्यिक महानता का प्रतीक है। इस पुरस्कार के उपलक्ष में चतुर्वेदी जी का कई स्थानों पर अभिनन्दन किया गया। हमने भी अपने कतिपय मित्रों की सलाह से उनका मथुरा में अभिनन्दन करने का विचार किया। एतदर्थ जब चतुर्वेदी जी को तिथि निश्चित करने को लिखा गया तो उन्होंने उत्तर में कहा कि मथुरा में उनका कई बार अभिनन्दन हो चुका है और आज व्यक्तियों की अपेक्षा सामूहिक अभिनन्दन करना अधिक हितकर है। वे लिखते हैं, "व्यक्ति आते हैं और चले जाते हैं, पर उनका जनपद शत शताब्दियों तक बना रहता है। अपने जनपद की

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सर्वाङ्गीण उन्नति का कोई भी मौका हमें अपने हाथ से न जाने देना चाहिये। क्या किसी जनपद का गौरव केवल किसी साहित्यिक अथवा राजनैतिक कार्यकर्ता से ही बढ़ता है ? क्या सुयोग्य शिक्षक, कुशल इन्जीनियर, शक्तिशाली पहलवान, होशियार खिलाड़ी, सफल चित्रकार, या मधुर गायनाचार्य से जनपदीय कीर्ति में कुछ भी वृद्धि नहीं होती ? क्या कोई उद्योगी किसान या ईमानदार मजदूर अभिनन्दनीय नहीं है ? दर असल हमें अभिनन्दन सप्ताह मानना चाहिये और उसमें हमें अपने जनपद की विभिन्न कलाओं के कलाकारों का विधिवत् सम्मान करना चाहिये।"

चतुर्वेदी जी का उपरोक्त दृष्टिकोण साहित्यकारों को सांस्कृतिक पुनरुत्थान में अपना योगदान देने को प्रेरित करता है। यदि इस पुनरुत्थान के प्रति प्रभावकारी कार्यक्रम प्रस्तुत करना है तो यज्ञ में प्रत्येक व्यक्ति को आहुति देनी है चाहे वह कलाकार हो या साहित्यकार।

"राष्ट्र धर्म" के सम्पादक श्री रामशंकर जी अग्निहोत्री के निम्नलिखित विचारों से जो उन्होंने हमें अपने एक पत्र द्वारा व्यक्त किये हैं हम पूर्ण रूप से सहमत हैं और उन्हें आश्वस्त करते हैं कि इन सुझावों को कार्यान्वित करने के लिए ब्रजभारती में आवश्यक कदम उठाये जायेंगे।

'प्रत्येक भाषा का साहित्य देश-काल की परिस्थितियों में विकसित होता हैं और इसलिये रचनाओं के पीछे कुछ तत्कालीन दुख, सुख, उलझन, संघर्ष, प्राप्ति, उत्कर्ष की आशा के चित्र होते हैं। कालान्तर में रचनायें रह जाती हैं और चित्र साफ मिट जाते हैं तभी भाषा मृत हो जाती है। उसका सम्बन्ध जन जीवन से ओझल हो जाता है। यदि ब्रज साहित्यमण्डल ब्रजसाहित्य की रचनाओं के साथ उस काल की स्थिति के चित्र तथा ऐतिहासिक घटनाओं के संदर्भ दे सके, उन जनश्रुतियों को जो भावावेश में बह गईं कुछ सरल अर्थों में समझा सके तो ब्रज का ही नहीं हिन्दी का भी बड़ा लाभ होगा।"

मण्डल की गतविधियाँ—मण्डल के लिए भूमि अधिग्रहण सम्बन्धी कार्य में निरन्तर नई नई बाधाएँ उपस्थित हो रही हैं। परन्तु मन्त्रिमण्डल के सदस्य उन बाधाओं को हल करने में जुटे हुए हैं। परिश्रम का सुफल प्राप्त होने की आशा है। मण्डल के समस्त कार्यों में हमें श्री किशन प्रसाद जैन, सर्व श्री रामप्रसाद कमल जुगल किशोर चतुर्वेदी, सुरेन्द्र प्रसाद श्रीवास्तव आदि मन्त्रिमण्डल के सदस्यों से बड़ी सहायता मिल रही है, एतदर्थ उन्हें धन्य वाद।

ब्रजभारती के लेखक महोदयों के प्रति हम कृतज्ञता प्रकट करना अपना कर्तव्य समझते हैं। इस दिशा में माननीय श्री प्रभुदयाल जी मीतल का सहयोग अत्यन्त सराहनीय है, वे मण्डल के संस्थापकों में से हैं और ब्रजभारती के प्रति तो उनकी भावना निजत्व की है। जिन लेखक महोदयों के लेख स्थानाभाव के कारण मुद्रित होने से रह गये हैं उन्हें हम अगले अंकों में प्रकाशित करने की चेष्टा करेंगे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मथुरा के चतुर्वेदियों की संगीतमय होरी (चौपाई)

[श्रीरमाशंकर चतुर्वेदी 'सुमन']

भारतवर्ष में हमारे पूर्वजों ने जाति भेदभाव को दूर करने के लिए उत्सवों की नींव डाली। प्राय: सभी उत्सव ऋतुओं से सम्बन्ध रखते हैं। होली भी वसन्त ऋतु से सम्बन्धित है या यों कहिये जबकि धरा पीली ओढ़नी ओढ़कर एक नवेली दुल्हन बनती है और उस दुल्हन को मुग्ध करने के लिये कोयल मयूर आदि अपनी तानें सुनाकर प्रसन्न करने की चेष्टा करते हैं, तब उन तानों को सुनकर ऐसा लगता है कि मानों वह अपनी चुनरी हिलाकर संकेत से कह रही है कि तुम सब लोग खुशियाँ मनाओ, गाओ क्योंकि मैं अब कितनी सुन्दर लग रही हूँ। इस खुशी में पक्षी समुदाय ही क्या मानव-समुदाय में भी खुशी की लहर उमड़ने लगती हैं। होली हमारा वसन्तोत्सव है, उस समय हमारी कृषि पकने पर आजाती है, आम वृक्षों में बौर आजाते हैं और ऋतु में सम शीतोष्णता आती है। सभी लोग अपनी खुशी प्रकट करने को आठ दिन तक उत्सव मनाते है और इसे ही होलिकाष्टक कहते हैं। इस उत्सव के अन्तिम दिन उपले और लकड़ियों को इकठ्ठा करके आग लगायी जाती है। हम कामना करते हैं कि इसके साथ ही हमारे हृदय में जो बुराइयाँ हों वह भी जल जाँय। इस दिन हम गेहूँ और जौ की बालियाँ लाकर इसमें पकाते हैं और घर जाकर इसे सबको बाँटते हैं इस आधे भुने हुये अन्न को होला करते हैं। इसके दूसरे दिन मनुष्य एक दूसरे पर टेसू के फूलों का रंग घोलकर डालते हैं, एक दूसरे पर गुलाल उड़ाते हैं। इसका एक वैज्ञानिक उपयोग भी है टेसू के फूलों के पानी से चेचक का डर नहीं रहता है, यह पीलिया की बीमारी से भी बचाता है आदि यह राष्ट्रीय भावात्मक एकता का प्रतीक है जो यह बतलाता है कि हम सब वर्ग धर्म जाति भेद को भूलकर एक रंग में रंगजाय। इस दिन वृद्ध, युवा, बच्चे सभी खुशी से एक दूसरे के गले लगते हैं।

सारे भारतवर्ष में होली का यह पावन पर्व बड़े उल्लास के साथ मनाया जाता है किन्तु इसका वास्तविक आनन्द जो व्रज में आता है, वह अन्यत्र देखने को नहीं मिलता। यहाँ का होलिकोत्सव देखने को मनुष्य दूर-दूर से आते हैं। यह वही ब्रज प्रदेश है, जहाँ पर कृष्ण ने रास रासेश्वरी राधा और अन्य गोपियों के साथ होली खेली थी।

मथुरामें श्री कृष्णने कंस राजाका बध फाल्गुन शुक्ला चतुर्दशीको कियाथा। उसके एक दिन बाद ही होली का मतवाला पर्व आया गोपियों एवं ब्रज वासियों ने कृष्ण से पूछा था कि आप होली किस तरह से मनाना पसन्द करेंगे। इसपर कृष्ण ने जवाब दिया था कि गांना व नाचना मुझे प्रिय लगता है एवं यह कहकर वह गीत गाने लगे। तभी से होली पर गाने व नाँचने की प्रथा चली आरही है तथा इसका स्वर्गीय सुख होली के दिनों में मथुरा की गलियों में देखने को मिलता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

व्रजवासी आनन्द से परिपूर्ण होकर झूम-झूम करके यह गाते हुये दिखलाई पड़ेगें —

आज बिरज में होरी रे रसिया,
होरी रे रसिया बरजोरी रे रसिया
नन्दगाँव के ग्वाला और बरसाने की गोरी रे रसिया
आज बिरज में ।।

जैसे-जैसे होली का दिन निकट आता है, वैसे ही वैसे मथुरा के चतुर्वेदियों के हृदय में नवीन जोश का संचार होता है जैसे कहा गया है नाचने वाले का कूल्हा फड़कता है इसी के अनुसार वह एक साल की ऊब को होली के दिनों में नाच गाकरके पूरा करते हैं जिसके लिए वह पहिले से ही तैयारी करते हैं। तरह-तरह की धुनों पर गीत बनाते हैं, इन्ही गीतों को होली की तान कहते हैं। तान शब्द तन्-धातु मे बना है जिसका अर्थ है जोर २ से गाना और इसमें मुखड़ा, टेक, दौड़, शेर आदि होती हैं जिनको एक लय से गाया जाता है। मथुरा में चौबों के कई अखाड़े हैं जिनमें गोविन्दगढ़, मोहन बाग, एवं कंस टीला आदि प्रमुख हैं। ये सब अखाड़े अपनी अलग २ संगीत की धुनें बनाते हैं। इनके प्रमुख वाद्य जिन्हें साज कहते हैं, नगाड़ा, ढोलक, तार [मंजीरा] व हारमोनियम आदि हैं। प्रत्येक अखाड़े के साथ कम से कम दो सौ व्यक्ति रहते हैं। पहिले पांच छै: व्यक्ति जो अच्छे गायक होते हैं, एक लाइन गाते हैं, उसके बाद सभी व्यक्ति एक स्वर से उसी लाइन को गाते हैं और इस प्रकार में क्रम चलता रहता है और इस प्रकार गाने- नाँचने का यह कार्यक्रम शाम के ५ बजे से रात्रि के चार बजे तक निरन्तर चलता रहता है और यह होली के दूसरे दिन से चार दिन तक चलता है। चतुर्वेदियों के इस उत्सव को देखने के लिए दूर-दूर से सैकड़ों व्यक्ति आते हैं जो यहाँ होली का वास्तविक आनन्द लूटते हैं।

ये समस्त गीत कृष्ण की लीलाओं से सम्बन्ध रखते हैं, जिनके प्रमुख नाम हैं:— ग्वालिनियाँ, लीला मानसरोवर, निंदिया, पनघट, लीलाजान-अजान, बिरहिन, श्याम घटा, चन्दा, उपालम्भ, भ्रमर दूत, स्वाधीन लीला, गो-दहन लीला, मानमोचन लीला, कमलदूत चन्द्र दूत, कपटी भौंरा आदि आदि।

सर्व प्रथम गीत गाने से पहिले ये गणेश जी की बन्दना करते हैं:—

मन सुमरौ प्रभु परमेश,
हाँ पहिलें हाँ पहिलें श्री गणपति गणेश ।। मन० ।।
नारायण सच्चिदानन्द हरि, जगत्यापक जय गजानन्दकर
ज्योतिस्वरूप अति सुन्दर, कौस्तुभ भूषण हृषिकेश ।।मन।।
जय लक्ष्मीपति शंख चक्रधर जय दामोदर गदा पद्मकर
श्याम सहायक केशव मुनिहर, अघहारन टारन कलेश ।।मन।।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इसके बाद ये अपने गीतों में प्रथम "होरी" को प्रमुखता देते हैं क्योंकि "नैंन नचाय कहीं मुसकाय लला फिर आईयो खेलन होरी" अतः होर की महत्ता और भी बढ़ जाती है :-

आली आयेरी श्याम चलौ कुंजन में
गोरो खेलें सब होरी रस पुंजन में
घोरो केशर कनक कमोरिन में ।-आली ० ।

कान्हा एक गोपी पर पिचकारी भरकर रंग डाल रहे है, मगर गोपी हाथ जोड़ कर विनती कर रही है कि मेरी सब सारी बिगड़ जायगी :-

मोरी सारी रंग डारी प्यारे सांवरे ।
छुऔ बैंया ना कन्हैया परों पांवरे ॥
ए हो निपट अनारी नव रंग के खिलाड़ी ।
रोको ना गैल हमारी, मारौ न भर पिचकारी ॥

होली आई हैं, अतः एक सखी दूसरी सखी से कृष्ण को बाला बनाने को कह रही है :—

आवौरी गोरी होरी खेलन धामें
नंदलाला कों बाला बनामें, गुलाल लगामें
छबि छाबे, हियें हुलसामें चुनर पहिरामेंरी
पिय की गहिकें छुड़ावो बंसुरिया
भाजि के जाइनां सांवरौ ॥

होली आगई है, मगर कृष्ण नहीं आये हैं। अतः राधिका कमल को दूत बनाकर कृष्ण की खोज करने को भेज रही हैं :—

छलिया छबीलौ प्यारो सांवरिया
कांधे धरे हों कारो कामरिया
हे नद नन्दन ब्रज चन्द हमारे जारे "जलज" जहं नयनन तारे
बेगि बतारे आरे बिसद व्यथारे
हंसि बस कीनी मोहि बावरिया ॥ छलिया ॥

एक सखी चन्द्रमा को दूत बनाकर कृष्ण का सन्देश लाने को कह रही है :—

मुखड़ा :–चन्दा जइयौ रे कहियो ।
टेक :-प्यारे, छाए छलिया जहाँ तहीं रहियो ।
दौड़ :-व्याकुल बिरहिनी बौरी बिहारी रे ।
उन कीनी निठुर निठुराई रे हों, मोरी गुजरिया गंवारि ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गोपियाँ उद्धव को उलाहना दे रही हैं। उनका कहना है कि जितनी भी काली वस्तुएँ हैं वो निर्मोही ही होती हैं। एक भंवरा है, वह काला है जो फूल का रस चूसकर उसे छोड़ देता है और एक काले कृष्ण हैं :—

ऊधौ रे ये है भंवरन को रीति प्रीतिकरि नहीं निभाते हैं
कहूँ कारे निहारे न मीत
कुंजन में डोले गुंजन में बोलें कली कली रस घोलैं
मधुलोभी करें अनरीत ।। प्रीतकर० ।।

काले-बादल छाये हुए हैं, वर्षा होने को है, लेकिन कृष्ण नहीं आये हैं। अतः राधिका को कुछ भी अच्छा नहीं लग रहा।

घन छाए री श्याम नहीं आए
नाचौ नाचौ न मन के मोर मोर मन भाए
बजुमारी जा कारी कोयलिया पपिहा पिडन बोल
प्रान पियारे छाये जहाँ रे जारे ।।

राधिका ने ग्वाल का भेष धारण किया है :—

ग्वाल बनी गोरी किशोरी राधिका प्यारी ।
छैल छटा छबि न्यारा, मोह्यौ नन्द लला बनवारी ।
पीताम्बर कटि फेटि दियौ है, सीस मुकट कर लकुट लियौ है ।
वेणु अधर धारी, किशोरी० ।।

अतः इन समस्त गीतों में अनुप्रास, अलंकार, रूपकों की बहुतायात देखने को मिलती है। कृष्ण की लीलाओं के ऐसे सजीव वर्णन हैं जिन्हें सुनकर हर व्यक्ति आत्मविभोर हो उठता है और व्रजांगनायें भी इन गीतों का रसास्वादन करने को रात्रि के समय भी छत्तों पर छज्जों पर सैकड़ों की तादाद में बैठी रहती हैं। रात्रि के शान्त वातावरण में नगाड़ा अपनी आवाज से झंझावत पैदा कर देता है जिससे मालुम पड़ जाय कि होली आगई है और चारों तरफ खुशी आनन्द हर्षोल्लास के स्वर गूंजते हैं। ये चार दिन तक जो कार्यक्रम चलता है, इसी को चौपाई कहते हैं।

इस प्रकार व्रज में होली के त्यौहार को बहुत महत्व दिया गया है। वैसे तो सम्पूर्ण भारतवर्ष में होली का त्यौहार मनाया जाता है, लेकिन इसका वास्तविक आनन्द जो कृष्ण की जन्मभूमि मथुरा एवं राधिका की जन्म भूमि बरसाना में आता है, वैसा अन्यत्र कहीं देखने को नहीं मिलता।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वल्लभ संप्रदाय की आठवीं गद्दी और उसका साहित्य

—श्री प्रभुदयाल मीतल

वल्लभ संप्रदाय की सात गद्दियाँ प्रसिद्ध हैं, जो गोसाईं बिठ्ठलनाथ जी के सातों पुत्रों द्वारा स्थापित हुई थीं। इन गद्दियों को 'सात घर' भी कहा जाता है, किन्तु अन्य संप्रदायों की भांति इन्हें 'पीठ' कहने की परम्परा नहीं है। इन गद्दियों अथवा 'घरों' की कई शाखा-प्रशाखाएँ हैं, जिनके सैकड़ों देवालय और लाखों शिष्य सेवक हैं। इन सबके द्वारा भारतवर्ष के मध्यवर्ती, पश्चिमी और दक्षिण-पश्चिमी भागों में कृष्णोपासना और ब्रजभाषा साहित्य का बड़ा प्रचार हुआ है।

उक्त सातों गद्दियों के अतिरिक्त इस संप्रदाय की कोई आठवीं गद्दी भी है, इसकी जानकारी बहुत कम लोगों को है। सुप्रसिद्ध सातों गद्दियों की स्थापना जहाँ गोसाईं जी के औरस पुत्रों ने की थी, वहाँ यह आठवीं गद्दी उनके पोष्य पुत्र तुलसीदास उपनाम 'लालजी' द्वारा स्थापित हुई थी। इस गद्दी के आचार्यों और उनके शिष्य-सेवकों ने भारत की उत्तर-पश्चिमी सीमा के सुप्रसिद्ध नगर डेरागाजीखाँ में निवास कर बर्बर विदेशियों और असहिष्णु विधर्मियों के निरन्तर आक्रमण की अनेक कठिनाइयों को सहन करते हुए सिन्ध और पञ्जाब के सीमावर्ती राज्यों में कृष्णोपासना तथा ब्रजभाषा-हिन्दी के भक्ति-साहित्य का समुचित प्रचार किया था। महाप्रभु वल्लभाचार्य और गोसाईं विठ्ठलनाथ ने पुष्टिमार्ग के प्रचारार्थ भारत के दक्षिणी, पश्चिमी और पूर्वी भागों में तो लम्बी यात्राएँ की थीं; किंतु उत्तर भाग में वे थानेश्वर के आस-पास तक ही गये थे। इस प्रकार पंजाब, सिंध और पश्चिमोत्तर प्रदेश उनके प्रभाव क्षेत्र में नहीं आ सके थे। वार्ता साहित्य से कुछ ऐसा आभास मिलता है कि वहां के निवासियों के आचार-विचार, रहन-सहन और खान-पान के कारण उन्होंने देश के उस भाग को अपने लिए निषिद्ध मान लिया था। उसी अछूते भाग में वल्लभ संप्रदाय और ब्रजभाषा-साहित्य के प्रचार का श्रेय इस गद्दी को है। इस निबन्ध में इसी गद्दी के आचार्यों, उनके वंशजों और प्रमुख शिष्य-सेवकों के वृत्तांत तथा सबके द्वारा की गई साहित्य-साधना का संक्षिप्त परिचय दिया गया है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इस गद्दी के संस्थापक गो० तुलसीदास उपनाम 'लालजी' का उल्लेख 'दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता' में हुआ है। उक्त वार्ता का सारांश इस प्रकार है—

'तुलसीदास का जन्म दिल्ली से बीस कोस पर एक सारस्वत ब्राह्मण के यहाँ हुआ था। एक समय वह ब्राह्मण अपने बालक तुलसीदास सहित ब्रज के दर्शनार्थ मथुरा गया। उस समय वहाँ गो० बिट्ठलनाथ जी विराजमान थे। तुलसीदास के पिता ने गोसाईं जी से पुष्टि मार्ग की दीक्षा ली और वह उनके साथ रहकर ठाकुर जी के जल-घर की सेवा करने लगा। जब तुलसीदास केवल ५ वर्ष का अबोध बालक था, तभी उसके माता-पिता की मृत्यु हो गई, अतः उसका पालन-पोषण गो० बिट्ठलनाथ जी के बालकों के साथ होने लगा। तुलसीदास यह समझता था कि वह भी गोसाईं जी का ही बालक है।

जब गोसाईं जी के सातों पुत्र बड़े हुए, तब उन्हें पृथक्-पृथक् ठाकुर-सेवाएँ दी गईं, ताकि वे स्वतंत्र रूप से उनकी व्यवस्था कर सकें। उस समय तुलसीदास को कोई सेवा न मिलने से वह उदास रहने लगा। गोसाईं जी ने यह देखकर तुलसीदास को श्री गोपीनाथ जी की सेवा प्रदान की और उसे आदेश दिया कि वह सिंध प्रदेश में जाकर पुष्टि मार्ग का प्रचार करे।

तुलसीदास अपने ठाकुर गोपीनाथ जी को लेकर ब्रज से चल दिया। उसने गोसांई जी के आदेशानुसार सिंध प्रदेश के निवासियों में पुष्टि मार्ग का प्रचार किया था। उसे 'लालजी' कहा जाता था। उसने बहुत से पदों की भी रचना की थी, जिनमें उसकी नाम-छाप 'लालदास' मिलती है। वह गोसांई जी के आठवें लाल जी के नाम से प्रसिद्ध हुआ। उसके वंशज अब भी सिंध निवासियों को पुष्टि मार्ग की दीक्षा देते हैं। (*)

इस गद्दी के गोस्वामियों के पास वार्ता, बधाई एवं स्तुति के रूप में जो सांप्रदायिक साहित्य सुरक्षित है, उसके अनुसार लाल जी के वृत्तांत में कुछ भिन्नता ज्ञात होती है। यह भिन्नता उनके मथुरा आगमन से संबंधित है। 'दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता' के अनुसार लाल जी अपने माता-पिता के साथ मथुरा आये थे। उस समय उनकी आयु केवल ५ वर्ष की थी। उनके पिता को तथा उन्हें स्वयं बिट्ठलनाथ ने दीक्षा दी थी। उनके पिता ठाकुर जी की सेवा के लिए जल भर कर लाते थे। इस गद्दी के साहित्य के अनुसार लालजी अपने पिता की मृत्यु के उपरान्त अकेले ही मथुरा आये थे। उस समय उनकी आयु १७ वर्ष की थी और उन्होंने गोसांई जी के ज्येष्ठ पुत्र गिरिधर जी से दीक्षा ली थी। ठाकुरजीकी सेवा के लिए लाल जी के पिता नहीं, वल्कि स्वयं लाल जी ही जल भर कर लाया करते थे। गोसाईं बिट्ठलनाथ जी द्वारा तुलसीदास को अपना 'लाल जी' मानना, उन्हें ठाकुर गोपी-

(*) शुद्धा० द्वैत एकेडेमी, कांकरोली द्वारा प्रकाशित गो० हरिराय जी कृत भावना वाली 'दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता' सं० २३९ (तृतीय खण्ड) पृ० २५२-२५४।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नाथ जी की सेवा प्रदान करना और उनको सिंध प्रदेश में जाकर पुष्टि मार्ग के प्रचार का आदेश देना आदि बातें दोनों में समान हैं, उनमें कोई भिन्नता नहीं है ।

हमारे मतानुसार 'दो सौ बावन वार्ता' का कथन ही उपयुक्त ज्ञात होता है । इसका कारण यह है कि ५ वर्ष की अबोधावस्था में तुलसीदास के मथुरा आने और गोसाईं जी के बालकों के साथ खेलने से ही उनके गोसाईं जी के 'लाल जी' कहे जाने की सङ्गति हो सकती है । फिर गोसाईं बिट्ठलनाथ जी के गद्दीस्थ होने की दशा में उनके पुत्र से दीक्षा लेना भी सांप्रदायिक मर्यादा के विरुद्ध है ।

इस गद्दी के सांप्रदायिक साहित्य के अनुसार तुलसीदास उपनाम लाल जी का जन्म सं० १६०८ की माघ शु० ७ बुधवार को मेष लग्न में हुआ था । उनके पिता का नाम अजू जी और माता का नाम देवकी जी था । वे कौशल गौत्र और ललरी अल्ल के सारस्वत ब्राह्मण थे।* इस गद्दी की मान्यता है कि लालजी का जन्म स्थान सिंध प्रदेशस्थ लाड़काना का निकटवर्ती सेवन ग्राम है । वे सं १६२५ में मथुरा गये थे और गोसाईं बिट्ठलनाथ जी के

---

*द्विज अजू गृह प्रकट, नाम श्री लाल धरायौ ।
सोरह सै अठतरें, लाल प्रभु अवतार आयौ ॥
उत्तरायन के समै, माघ सप्तमि सुदि होई ।
बार नक्षत्र अनूप, जोग जानै सब कोई ॥
—परमानन्द कृत लाल जी की स्तुति ।

संवत बसु नभ रस धरा, श्री लालन अवतार ।
जगत उधारया आइकें, 'खेमदास' बलिहार ॥
—खेमदास कृत 'बधाई'

सप्तमि तिथि सित माघ मास ही, मेष लगन बुधवार ।
'कल्यानदास' श्री लालन के गुन, नित प्रति करत उचार ॥
—कल्याणदास कृत 'बधाई'

धन्य कूख माता देवकि की, जिन त्रिभुवन पति गोद खिलायौ ।
'दास अनन्त' चरन सरनायौ, मन वांछित फल सकलै पायौ ॥
—अनन्तदास कृत 'बधाई'

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

देहावसान से कुछ समय पूर्व ही सं० १६४१ नें ब्रज से आ गये थे। गो० बिट्ठलनाथ जी ने उन्हें अपना आठवाँ पुत्र मान कर ठाकुर गोपीनाथ जी की सेवा प्रदान की थी और उन्हें आदेश दिया था कि वे सिंध प्रदेश में जाकर वहाँ के निवासियों को पुष्टि मार्ग की दीक्षा दें। उन्होंने सिंध नदी के तटवर्ती डेरागाजीखाँ को अपना प्रमुख केन्द्र बनाया था। वे ६७ वर्ष तक इस धरा धाम पर विद्यमान रहे। उनका देहान्त सं० १६७५ की भाद्रपद शु० ६ को वृन्दाबन में हुआ था। वहां ठाकुर मदनमोहन जी के पुराने मन्दिर के निकट उनकी समाधि बनी हुई है।

लाल जी द्वारा स्थापित यह आठवीं गद्दी उतनी प्रसिद्ध नहीं हुई, जितनी बल्लभ संप्रदाय की अन्य सात गद्दियाँ हैं। इसके कई कारण हैं। एक कारण तो यह है कि लाल जी गो० बिट्ठलनाथ जी के पोष्य पुत्र थे, अतः उनकी गद्दी को वह महत्व नहीं मिल सका, जो गोसाईं जी के औरस पुत्रों द्वारा स्थापित सातों गद्दियों को प्राप्त है। दूसरा कारण यह है कि लाल जी और उनके वंशजों के कार्य-क्षेत्र सिंध और पञ्जाब के वे भाग हैं, जो विदेशियों द्वारा सदैव आक्रांत रहने के कारण भारत के कृष्णोपासक धार्मिक क्षेत्र से प्रायः कटे-छटे से रहे हैं। फिर भी यह गद्दी इसलिए अधिक महत्वपूर्ण है कि इसके आचार्यों तथा शिष्य-सेवकों ने अनेक कठिनाइयों तथा विघ्न-बाधाओं के रहते हुए भी ब्रजमंडल से बहुत दूर भारत की उत्तर-पश्चिमी सीमा के क्षेत्र में कृष्ण-भक्ति और ब्रजभाषा-हिन्दी की पताका फहराये रखी है। लाल जी के वंशज अपने सेव्य स्वरूप और शिष्य-सेवकों सहित सिंध और प०पंजाब के विविध स्थानों में निवास करते थे। देश का विभाजन होने पर वे देव-विग्रह, ग्रंथ सामग्री तथा चल सम्पत्ति में से जो कुछ ला सकते थे, उसे लेकर वहां से चल दिये थे। इस समय वे उत्तर भारत के विविध स्थानों, विशेषकर दिल्ली और वृन्दाबन में बसे हुए हैं।

'लाल जी' काव्योपनाम 'लालदास' गोसाईं बिट्ठलनाथ जी के सम्पर्क में रहने से पुष्टि सम्प्रदाय की भक्ति-भावना और ब्रजभाषा साहित्य से भली भांति परिचित हो गये थे। उन्होंने भागवत की सरल टीका तथा ज्ञानोपदेश की रचनाओं द्वारा सिंध निवासियों में कृष्ण-भक्ति का प्रचार किया था। उन्होंने ब्रजभाषा में लीला, शृङ्गार तथा उपदेश संबंधी सैकड़ों पद और दोहों की रचना की थी। उनके रचे हुए ग्रंथों के नाम श्रीमद्भागवत, भक्ति रस सुधा, लघु पचीसी, शिक्षा पचीसी, घर की पद्धित, गीता माहात्म्य, उत्सव मालिका, धर्म सम्वाद आदि हैं। वे बल्लभ संप्रदायी सेवा-विधि के अनुसार ठाकुर गोपीनाथ जी के उत्सव किया करते थे, जिनमें उनके रचे हुए पदों का गायन होता था। काव्य की दृष्टि से ये उत्तम हैं। उनकी अन्य रचनायें साधारण कोटि की हैं, क्योंकि वे जन साधारण के उपयोग के लिए रची गई थीं। यहाँ पर उनकी रचनाओं के उदाहरण दिये जाते हैं—

सुभग नंदनंद आनन्द-निधि साँवरौ, मुकुट वर सीस धरि आजु आयौ।
सहज सुन्दरी महारूप-निधि राधिका, आपु चलि आयकें दरस पायौ॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

'चंद चकौर ज्यों चार द्रग लगि रहे, कहा कहौं विवसता प्रेम छायौ ।
लाल कौ दास' छवि युगल की निरखिकें, उमँगि हृद के विसै सुजस गायौ ।।

फूल के झरोखा बीच राजत हैं स्यामा स्याम,
चहूँ ओर सखी सब गावत उमङ्ग कै ।
बांके अति नन्दलाल, नवल लाड़िली कृपाल,
इकटक चितवत लेत हैं उमङ्ग कै ।।
मीठौ सुर बोलिकैं, रिझाय लाल प्रान प्यारी,
आपु में बिकाने दोऊ लज्जित अनंग कै ।
ऐसे दोऊ प्रानप्यारे 'लालदास' हृदि धारे,
देखौं याही रूप सदा महा रस रंग कै ।।

क्रीड़त श्री यमुना जल माँहीं ।
गौर स्याम अभिराम सुभग तन धारी परस्पर बाँहीं ।।
तनसुख सेत बसन तन सोहत, चंदन अंगन राजै ।
मोतिन हार लसै उर मांहीं कुन्द माल दुति साजै ।।
बादर नवल चारु नभ राजत नाचत मोर कलापै ।
गावत गीत मधुर रस भीने राग मल्हार अलापै ।।
चहुँ दिस तें ठाढ़ी ब्रज–बनिता, भ्राजत है ज्यों बीजै ।
डारत मुदित सुगन्धित सीकर उछरन बन वरषीजै ।।
आनन्द मुदित सकल मिलि डोलत करत केलि अति भारी।
निरख प्रिया-प्रियतम यह लीला 'लालदास' बलिहारी ।।

अब हम लोक निगम बिधि खोई ।
कहा करैगो जगत हमारौ, प्रगट प्रीत गिरधर संग होई ।।
कुल मरयादा कालौं राखौं, काहू प्रकार रहै मन नाहीं ।
निरखि लाल मुख ऐंच परी वस्त्र, फबि रही कांति अली हृद माहीं।।
डूबी महा मोक रस महियाँ, समरथ कौन काट जो लेवै ।
सजन-कुटुंव-तात-सुत बिसरै, यह मन नंदनंदन पद सेवै ।।
निश्चय ही सर्वस समर्प्यौं, मोल बिना हरि हाथ बिकानी ।
'लालदास' हरि रङ्ग मन रातौ, भव-भ्रम तज हम ऐसै मानी ।।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आज छटी जसुमति के सुत की, चलौ बँधावन नन्द महर घर।
भूषन-बसन साज मंगल लै, सकल सिंगारन बनाइ सखी कर॥
जसुदा रानी लाल नहावत, कुल देवी कों पूँजि माँगि वर।
जै-जैकार होत गोकुल में, "लालदास" गावत तिहिं अवसर॥

उनकी उपदेशमयी वाणी का एक पद भी यहाँ दिया जाता है। इससे ज्ञात होगा कि उन्होंने भगवद्भक्ति, संतोष और वैराग्य का उपदेश देते हुए जनता को सद्धर्म का बोध कराया था। वह पद इस प्रकार है :—

ईश्वर पै सब डारौ साधो, ईश्वर पै सब डारौ।
होय निर्हचिंत रहो जग माहीं, मन का सोक निवारौ॥
तुम जो कहते हम कछु करते, तुमसे कछू न होई।
पारब्रह्म की अद्भुत लीला, करै-करावै सोई॥
जा विधि रची होत पुनि सोई, घटत बढ़त कछु नाँहीं।
काहे कों सोक करो दुख पावो, धीर धरो मन माँहीं॥
जिन दई देह, देयगा सोई, समय पायकै पावो।
प्रापति के बस दाना-पानी, चलि आवै चलि जावो॥
ज्ञान-बुद्धि कौ सँग करि लेवो, हरि चरनन चित लावो।
"लालदास" झूठी पैंड बाँधी, डारि देउ, सुख पावो॥

लालजी के ४ पुत्र और अनेक शिष्य थे। पुत्रों के नाम क्रमशः इस प्रकार हैं :—

(१) मथुरा नाथ जी (२) गिरिधारी जी (३) भगवान जी और (४) ग्वाल जी। उनका संक्षिप्त परिचय तथा उनकी रचनाओं के कतिपय उदाहरण यहाँ दिए जाते हैं :—

(१) मथुरानाथ जी :—"लाल जी" के ज्येष्ठ पुत्र थे। उनका जन्म सं० १६४५ में डेरा गाजीखाँ में हुआ था। उनकी रचनायें अधिक नहीं हैं, किन्तु जितनी भी हैं, वे भाव-पूर्ण हैं। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं :—

परम धन्य वृन्दाबन वासी।
नन्द-कुंवर वृषभानु-सुता की महिमा, जानत चरन उपासी॥
कर्म-योग अरु ज्ञान-अध्यातम, ब्रज सुख देखि गये नसि कासी।
लोक-वेद की आन न मानत, नहीं पड़त गुरुजन की फाँसी॥
यहि सुख रस-विलास में रचि रहे, गृह कारज तें रहत उदासी।
"मथुरापति" के जीवन आश्रय जानन हार सदा सुख रासी॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लाल, मेरौ मन निज चरनन में राखो।
आन और जानि नहिं दीजै, इहि पुनि-पुनि अभिलाखों॥
सुनो कृपाल दयाल लाल जी, तुम्हरे गुन नित भाखों।
"मथुरापति" कौ मन षटपद ज्यों चरन-कमल रस चाखों॥

(२) **गिरिधारी जी:**—उन्होंने भी भक्ति पूर्ण पदों की रचना की थी। उनका एक पद यहाँ दिया जाता है :—

मेरे सर्व काल सुखकारी।
श्री लालन प्रभु अन्तरजामी, दीनन के उपकारी॥
तुम बिन और ओट कों नाहीं, इहि चित माँहि बिचारी।
तुम्हरे चरन कमल की छाया, बंछत नित "गिरधारी"॥

(३) **भगवान जी :**—उन्होंने सरस पदों की रचना की थी। एक उदाहरण दिया जाता है :—

आय बैठे हैं संकेत वट, कुँवरि कुँवरलाल बनि।
आज के सुख की कछु मोपै न कही परति, गावत केदारौ राग सुघर दोऊ जन॥
अर्ध रात भई मानों पलकन माँहि गई, अति आनन्द बाढ्यौ है दम्पति मन।
"जन भगवान" रसिक ललितादिक, देत असीस तुम राजो हो वृन्दावन॥

(४) **ग्वाल जी :**—उनकी व्रजभाषा रचनायें उपलब्ध नहीं हुई, किन्तु मुलतानी बोली में कथित उनकी रचनायें मिलती हैं। इनके कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं :—

ज्यों घुन अन्न ते माइक खादीं, पल बिच करे खलासी।
खट्टे मर्द ते नारि वंजाये, सो भुग्गा क्यों कर बासी॥
सावण दे विच वाय दखिन दी, वद्दल करे उदासी।
तीवे "ग्वाल" कथा-कीर्तन बिच, गाल करण ते हाँसी॥

मन मारे विन जोग न होवे, क्या होवे कन्न फरायाँ।
संन्यासी जिन आस न त्यागी, क्या होवे भिटाँ धरायाँ॥
बैरागी जिन छव नहिं त्यागी, क्या होवे मूंड़ मुड़ायाँ।
दास "ग्वाल" जुर्यो मन बाभूँ, कूटे भेष बनायाँ॥

हिक डीं मुलुक पातश्या सडाये, जोरे लक्ख किरोरी।
हिक डीं लक्ख सवाली दर ते, आंदे वाहाँ जोरी॥
हिक डीं खासे चौतार हंडायें, हिक डीं डांग पहोरी।
डर दा रहे "ग्वाल" खसम, तो मुद्दा हे सिर तोरी॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लाल जी के अनेक शिष्य थे। उनमें से प्रमुख बारह शिष्यों के नाम इस प्रकार बतलाये गये हैं :—(१) द्वारकादास, (२) ऊँचीराम, (३) हित जगदीश, (४) खेमदास, (५) परमानन्द, (६) रस जगदीश, (७) परमानन्द सचदेव, (८) कल्याणदास, (९) दंडी भगवत दास, (१०) संतदास, (११) बीरभक्त, (१२) प्रेमदास। उक्त बारहों शिष्यों के नामों का उल्लेख एक कवित्त में इस प्रकार मिलता है।—

श्री लालजी के सेवक द्वादस भये हैं वर, तिहिं नाम कहौं, सुनौ नोके मन आनियै
द्वारकादास, ऊँचीराम, हित जगदीश, खेमदास, परमानन्द, रस जगदीश मानियै ॥
परमानन्द सचदेव, कल्याणदास, दन्डी भगवानदास, संतदास विप्र मानियै ।
बीरू भगत भए लाल के प्रताप हू तें, प्रेमदास हूँ के हिय प्रेम-भक्ति दानियै ॥

उक्त १२ शिष्यों का वृतांत ब्रजभाषा गद्य की एक वार्ता पोथी में लिखा गया है, जिसका नाम "श्री लाल भक्तवर द्वादस कथा" है। यह वार्ता श्री लाल जी के शिष्य प्रेमदास कृत कही जाती है। इसकी एक हस्त लिखित प्रति की पुष्पिका इस प्रकार है :— "इति श्री प्रेमदास कथित श्री लाल द्वादस भक्त वर कथा समाप्ता शुभ संवत् १९५३ पुरुषोत्तम मासे नवम्याम् बुधवार रचितायां ॐ नमः श्री गोपीजन बल्लभायनमः इदं पुस्तकं जीवन लालस्य पठनार्थे"।

इस प्रकार यह वार्ता पोथी सं १९५३ की लिखी हुई है। पता नहीं इससे पहिले की कोई प्रति मिलती है या नहीं। इसके ब्रजभाषा गद्य का नमूना इस प्रकार है :—

"जब श्री कृष्ण रूप सूर्य इन पृथिवी तें अन्तर्धान होत भये, तब सगरी मही विषे अंधकार रह्यौ। तब केतेक दिन पीछें स्वेच्छित ही श्री नारद जी ब्रह्मलोक तें पृथ्वी को पधारये। तब आइ करके देखे तो सगरी पृथ्वी विषें अंधकार छाय रह्यौ है। अरू पश्चिम देश विषे गहरो अंधकार छाइ रह्यो हैं। काहे तें दक्षिण देश विषे श्री द्वारकानाथ जी विराजित हैं। अरु पूरब देश विषे श्री जगन्नाथ जी विराजित हैं। अरु श्री गोकुल जी विषे श्रीनाथ जी विराजित हैं। अरु श्री बल्लभाचार्य जी पुष्टिमार्ग कौ प्रकास कीयो है। पुन उत्तर देस मद्ध श्री बद्रीनाथ जी विराजित हैं। अरु नेऋत कोण विषे श्री रणछोड़ जी विराजत हैं। अरु एक शेष पश्चिम देस शून्य परो है। यह अवस्था पश्चिम देस की देख के श्री नारद जी मन में बहुत खेद पायौ। अरु दया आई। तब मन में गूंथ्यो जो पश्चिम के जीवों का उधार करिये। यह विचार के ब्रह्मलोक को जावत भये"।

लाल जी के शिष्यों में द्वारकादास खत्री प्रमुख थे। वे श्री गोपीनाथ जी के मुख्य सेवाधिकारी भी थे। शिष्यों में जो कवि थे, उनके नाम हित जगदीश, परमानन्द, रस जगदीश, परमानन्द सचदेव, कल्याणदास भगवत दास और प्रेमदास हैं। उनकी रचनाओं के कतिपय उद्धरण यहाँ दिये जाते हैं :—

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हित जगदीश :—इनके रचे हुए स्फुट पद और "श्री लाल पंचासिका" नामक ग्रंथ उपलब्ध है। रचना का उदाहरण इस प्रकार है :—

श्री लाल को ध्यान रहै हिरदै, तब अन्य कौ हेत कहा धरियै।
श्री लाल के गुनन रसी रसना, तब अन्य कौ जाय कहा करियै।।
श्री लाल गोविन्द में भेद नहीं, इनकी पग नाव सदा चरियै।
"जगदीस" के दास भजो जब ही, तब ही वर जान एही धरियै।।

परमानन्द :—इनकी रची हुई एक अष्टपदी दी जाती है :—

निजानन्द तृप्ताशय, निखिलाश्रय, चिदानन्द स्वरूप। जय श्री लाल विभो।।
अद्वैतामल भूषण, गत दूषण, द्विजवर मंडल भूप। जय श्री लाल विभो।।
भक्त पक्ष प्रतिपालक, द्विरालक, निज जन स्वाँति मराल। जय श्री लाल विभो।।
ब्रह्मवाद परिमंदन, माया मत खंडन, खडन कृत करवाल।। जय श्री लाल विभो।।
कलमष वृन्द विदारण, भव तारण, वशवर्ती इंद्रिय पुंज जय श्री लाल विभ
ब्रह्मादिक वंदित, पद रंजित, जन सर्वाशि गुण गुंज जय श्री लाल विभो।
निज पद मंजु मरोरहु, कमलाकृत वास मनोभव जय श्री लाल विभो।।
"परमानन्द" जनेरित सफलं कुरु दान, नाथ सुखदान जय श्री लाल विभो।।

रस जगदीश :—वे ठट्ठा नगर निवासी कपूर खत्री थे। उनके रचे हुए कुछ पद-कवित्तादि कहे जाते हैं। उनका कोई उदाहरण उपलब्ध नहीं हो सका है।

परमानन्द सचदेव :—उनका रचा हुआ एक छंद दिया जाता है :—

सामर्थ पूरन लाल भगवत रूप, मुनि पग धारियो।
बूढ़त लिए रवि जन्तु भव तें, पकरि बाहु उवारियो।।
दैत्यन किये अध नास तू रन, अपुन विरद विचारियो।
जग व्याधि आधि, उपाधि ताप, क्लेश दूर निवारियो।।
जागे बड़े मय भाग पूरब, लाल के ढिग आइयो।
विलोकि यो रंचक मुझे, मगगौत धर्म सिखाइयो।।
अनगनत जन्म की गाँठ काटी, दिव्य द्रष्टि खुलाइयो।
कहि दास "परमानन्द" के अघ, सकल दूर जराइयो।।

कल्याणदास :—वे पुष्करणी ब्राह्मण थे। उनकी रचना के कुछ दोहा उदाहरणार्थ प्रस्तुत हैं :—

कृपा मई कीनी दया, सुमरत ही निज नाम।
पारस चिंतामनि सुरभि, सुरतरु सों नहिं वाम।।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पुन प्रभु जी की कृपा तें, उपजौ धन संतोष ।
एक लालि के नाम बिन, फीकी लागत मोक्ष ।।
नाम हिरदै धरि लियौ, धन की चिंता नांहि ।
इन्द्रादिक कौ राज जो, सो भी इन सम नांहि ।।
जिनके हिय तुव नाम है, तिनमें मोद अपार ।
"कल्याण" हिए में धरि लियौ, लाल नाम सुख-सार ।।

भगवतदास पंबू जी :—उनका पिता स्वामी हरिदास का सेवक था, किन्तु एक मित्र के कहने से भगवत दास श्री लाल जी के सेवक हुए थे । उनकी रचना के कतिपय छंद उदाहरणार्थ दिये जाते हैं :-

सतयुग में हरि रूप धरि कर, राक्षसन कों मारिया ।
त्रेता युग में राम रूप धरि, रावन कुल संहारिया ।।
द्वापर युग में इन्द्र कौ मद, कंस आदिक टारिया ।
प्रगटे काल कलौ विषै, श्रुति वाह धर्म विचारिया ।।
भक्ति ज्ञान विराग आदिक, जगत मांहि पसारिया ।
कहै दास "भगवत" लाल वपु धरि, सब जगत कों तारिया ।।

प्रेमदास :—उनकी वार्ता पुस्तक का उल्लेख पहिले किया जा चुका है ।यहाँ उनकी पद्य रचना का एक छंद उदाहरणार्थ दिया जाता है :—

धन्य श्री लाल अवतार लियौ जगत में, जरत सब जीव जग के सिराने ।
धन्य सो जीव जिन सरन गहो लाल की धन्य तेऊ जेऊ तिहिं बखाने ।।
लाल भगवान में भेद जाने नहीं, लाल के भजन बिन तुच्छ आने ।
कहत जन "प्रेम", मन धारि यह नेम, गहु सरन की लाज तब सकल ठाने ।।

केवलराम जी :--लाल जी के ज्येष्ठ पुत्र मथुरानाथ जी के दो पुत्र थे :— (१)गोकुलनाथजी और (२) केवल राम जी । उनमें केवलराम जी बहुत प्रसिद्ध हुए । गोकुल नाथ जी की कोई रचना उपलब्ध नहीं हुई है, किन्तु केवलराम जी के बहु संख्यक दोहों और पदों में रचे हुए कई बड़े ग्रंथ उपलब्ध है । उनका जन्म सं० १६७४ में हुआ बतलाया जाता है । इस गद्दी के कवियों में केवलराम जी सर्व श्रेष्ठ कहे जा सकते हैं । लीला श्रृंगार, सिद्धांत और और बाल्य भाव विषयक उनकी प्रचुर रचनायें मिलती हैं । उनके ग्रंथों में स्नेह सागर, ज्ञान दीपक और रत्न सागर उल्लेखनीय हैं । यहाँ पर उनकी रचना के कुछ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

उदाहरण दिये जाते हैं :—

साखी :—वृन्दावन रस केलि कों, चले दोऊ रस पुंज।
राधा लाल विलोक हों, फूल रहीं नव कुंज ।।
पिक चातक अलि गुंज ही, सबद करत बहु मोर।
केवल तहाँ विराज हों, नागरि-नंद किसोर ।।

छंद :—वृन्दावन रस रास रसिक दोऊ खेलहीं।
नाना प्रफुलित फूल मधुप मिलि केलहीं ।।
मिलि मधुप करहिं किलोल, कौतुक कोकिला कल धुनि रटी।
सुनि मोर चातक को कुलाहल, चलन तें जमुना हटी ।।
नवल कुंज समीर सीतल, मौन को तन पेलहीं।
बलि जाय "केवल" जुगल छवि पर, मुदित रसरस झेलहीं ।।

साखी :—कुंज लता हित जानिके, नवसत साजें अंग।
गोपी जन रस कारने, करत परसपर रंग ।।
रास मंडल आये दोऊ, भुजा भुजा पर धारि।
"केवल" दूलह दुलहिनी, महाप्रेम विस्तार ।।

छंद :—राधा लाल विलोक, कुंज हित राजहीं।
गोपी जन रस मंडल, नव सत साजहीं ।।
तन साज नव सत चलीं, भामिन पिय भुजा पर भुज धरी
रस भरे आये रास मंडल, प्रेम पूरन हृद भरी ।।
ताल बेनु मृदंग मुरली साज बहु बिधि बाजहीं।
बलि जाय "केवल" जुगल छवि पर, कोटि मनपथ लाज हीं।।

मांझ :—अलवेले अलमस्त सखी री, अरन नैन मतवारे।
दीरघ चपल सलौने सुन्दर, हित रस पूरन भारे ।।
खंजन मीन कमल अलि मोहे, कोटि मैन मृग वारे।
नेक निहार नैन तेऊ "केवल", महियाँ नन्द दुआरे ।।

पद :—जागये नन्द किसोर, सखी री जागये नन्द किसोर।
भोर समें रवि किरन प्रकट भई, बन बन कुहकें मोर ।।
बोलत धेनु कूदत हैं बछड़ा, अरु बोलत तम चोर।
दधि मंथान करत ब्रज बनिता, गृह गृह मुरली की घोर।
मात जसोदा वारत आरती, ठाड़ी है कर जोर।
मनि मय भूमि नन्द जी आँगन, भयौ मंगल चहुँ ओर ।।
दरसन को गोपी मिलि आई, मित मरजादा तोर।
यह छवि निरखि निरखि "केवल" जन, लागि रही है ठौर।।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

केवलराम जी क पश्चात् लाल जी की वंश-परम्परा और शिष्य-परम्परा का यथष्ट विस्तार हुआ था। उनमें से कितने ही कवि भी हुए, जिनके भक्ति-काव्य की रचनायें उपलब्ध हैं। उन सबके नामों का उल्लेख स्तुतियों की एक हस्तलिखित पोथी में मिलता है। ये स्तुतियाँ लालजी तथा उनके वंशजों की हैं। स्तुति कर्ताओं में लालजी के कतिपय वंशजों तथा अधिकतर उनकी गद्दी के शिष्यों के नाम हैं। सरसरी निगाह से देखने पर जान पड़ता है कि विविध व्यक्तियों द्वारा कथित इन स्तुतियों को किसी एक व्यक्ति ने क्रमानुसार संकलित किया है, किन्तु ध्यान से पढ़ने पर मालूम होता है कि इनकी रचना किसी एक व्यक्ति की ही है। स्तुतियों की भाषा और उनके कथन की शैली से वे विभिन्न व्यक्तियों की कृतियाँ नहीं ज्ञात होती हैं।

इस पोथी का आरम्भ श्री लाल जी की स्तुति से हुआ है और इसकी अन्तिम स्तुतियाँ हरिदेव जी तथा बलदेव जी की हैं। हरिदेव जी की स्तुति बलदेव जी के नाम से लिखी मिलती है, जिसकी पुष्पिका इस प्रकार है :—

"वल्लभ जो वल्लभ कियौ, रहि बल्लभ पासा। जीव चरण रज वंदित, वंछित सेवक बलदासा ॥ श्री हरिदेव जी की जै। इति श्रीमद्गोस्वामि श्री हरिदेव जू की स्तुति संपूर्ण १८९१ श्रावण वदि ८ बनाइ गवाई।"

पता नहीं, उक्त तिथि हरिदेव जी को स्तुति के पूर्ण होने की है, अथवा इस पोथी के कथन या संकलन के समाप्त होने की है, या इसके लिपि-काल की है। इसके बाद भिन्न लिखावट में बलदेव जी की स्तुति और है, किन्तु आगे के पृष्ठ पानी से खराब हो जाने से ठीक तरह से पढ़ने में नहीं आते हैं। इस पोथी में जिनकी स्तुतियाँ हैं, और जिनके नामों से वे कथी गई हैं, उनकी नाम वार सूची इस प्रकार है :—

जिनकी स्तुतियाँ हैं :—	**जिनके नाम से स्तुतियाँ मिलती हैं :—**
१. लालजी—	भगवान
	परमानन्द
	हित जगदीश
	मथुरा नाथ जी
	माधौ दास
२. मथुरा नाथ जी—	केवलराम जी
३. गोकुल नाथ जी—	माधौदास
४. केवल राम जी—	रूपचन्द
५. मदन मोहन जी—	माधौदास
६. जगन्नाथ जी—	"
७. प्रद्युम्न लाल जी—	अनिरुद्धलाल जी
८. व्रज भूषण जी—	भोपति
९. धरणीधर जी—	चतुर्भुज जी
१०. अनिरुद्ध जी—	दूलह राम
११. मुरली धर जी—	माधौदास
१२. चतुर्भुज जी—	"
१३. बाँके बिहारी जी—	प्रभुदास
१४. विश्वनाथ जी—	रणछोड़ जी
१५. रणछोड़ जी—	हरिदेव जी
१६. हरिदेव जी—	बलदेवजी
१७. बलदेव जी—	×

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इन स्तुतियों में जहाँ लाल जी के वंशजों और उनके शिष्य सेवकों का नामोल्लेख हुआ है, वहाँ कई गोस्वामियों के जन्म और देहावसान की तिथियाँ भी बतलाई गई हैं। इनसे लाल जी के वंशजों और शिष्यों की परम्परा और उनके काल की, महत्व पूर्ण सूचनायें मिलती हैं। ये स्तुतियाँ चाहे अनेक व्यक्तियों द्वारा कथित हों और चाहे किसी एक व्यक्ति द्वारा, उनकी उक्त सूचनाओं का महत्व स्वयंसिद्ध है।

इन स्तुतियों के आधार पर लाल जी का वंशवृक्ष इस प्रकार बनता है :—

लाल जी के वंश वृक्ष

- गो० विट्ठलनाथ जी पोष्य पुत्र तुलसीदास जी उपनाम लाल जी सं० (१६०८–१६७५)
  - मथुरानाथ जी (जन्म सं० १६४५)
    - गोकुलनाथ जी (जन्म सं० १६६१)
    - केवलराम जी (जन्म सं० १६७४)
      - मदनमोहन जी (जन्म सं०१७०१)
        - प्रद्युम्न जी सं० १७२९–१७७४)
          - अनिरुद्धजी सं० १७४९–१७८२)
        - व्रजभूषण जी (सं० १७३३–१८०१)
          - मुरलीधर जी
          - चतुर्भुज जी (देहांत सं० १८२५)
            - बांके बिहारी जी (देहांत सं० १८३७)
              - रणछोड़ जी (जन्म सं० १८२२)
                - हरिदेव जी (जन्म सं० १८५०)
                  - बलदेव जी (सं. १८७२-सं. १९३९)
                    - कुंजलाल जी (सं० १९२०–सं० १९८५)
            - विश्वनाथ जी (सं० १८०६–१८४७)
        - धरणीधर जी (देहांत सं० १७९५)
      - जगन्नाथ जी
  - गिरधारी जी (जन्म सं० १६४९)
  - भगवान जी
  - ग्वाल जी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सुन्दरलाल जी (जन्म सं० १६३५)	जयलाल जी (जन्म सं १६३८)	दानीलाल जी (जन्म सं० १६५३)	श्यामलाल जी (जन्म सं० १६६१)

सुन्दरलाल जी
|
बांकेलाल जी (जन्म सं० १६५३)
|
रतनलाल (जन्म सं० १६८२)

अब पहिले लाल जी के पौत्र वलराम जी के वंशजों का और फिर इस गद्दी के कुछ शिष्य-सेवकों का संक्षिप्त वृत्तांत तथा उनकी रचनाओं के कतिपय उदाहरण दिये जाते हैं।

मदनमोहन जी—वे केवलराम जी के ज्येष्ठ पुत्र थे। उनका जन्म सं० १७०१ की श्रावण कृ० १ को हुआ था। उनके छोटे भाई का नाम जगन्नाथ जी था। उनके नामों का उल्लेख इस गद्दी के एक भक्त कवि माधौदास ने इस प्रकार किया है—

ललरी वंश उदार में, प्रगट भये श्री लाल।
तिहि सुत मथुरानाथजी, दीनन विषै दयाल॥
तिहि सुत केवल राम जी, केवल केवल रूप।
श्री मदनमोहन जगन्नाथ जी, तिनतें भए अनूप॥

मदनमोहन जी की रचनाएँ पर्याप्त परिमाण में मिलती हैं। इस द्रष्टि से उनका स्थान इस गद्दी के कवियों में केवलराम जी के पश्चात् सबसे ऊंचा है। उन्होंने भागवत स्कंध का ब्रजभाषा छन्दों में अनुवाद भी किया था। उनकी रचना के कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं—

ऊधौ, हरि मेरी पीर न जानी।
नहीं जानौं मेरी कौन अवज्ञा, मन मोहन के उर आनी॥
तलफत रहों, कहों केहि आगै, जो दीनी सिर मानी।
'मदनमोहन' ब्रज-लोक बिसरि गयौ, करि कुब्जा पटरानी॥

नाँचत श्री गोपीनाथ रास मंडल माँहीं।
और सखी चहुं ओर राधा संग बाँहीं।
मुकुट सीस पीताम्बर काछिनि कटि राजै।
षोडस शृङ्गार चार, श्यामा तनु साजै॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

शरद रैन उजयारी वृंदावन फूल्यौ ।
उमड्यौ अतिसय विलास यमुना के कूल्यौ ।।
सरस प्रेम आँनद की उठत हैं झकोरें ।
बजत हैं अनिक बाजे मुरली घनघोरें ।।
एक एक गोपी प्रति गोपी मधि सोहें ।
देव देव रमजी शशि देखत ही मोहें ।।
अङ्ग अङ्ग रस तरङ्ग छवि अनंग को हैं ।
श्रम कन झलकात भाल मुक्त माल जोहें ।।
नाना विधि करत केलि रसिक प्रिय प्यारी ।
'मदनमोहन' छबि अनूप , निरखत बलिहारी ।।

जगन्नाथ जी—वे केवलराम जी के कनिष्ट पुत्र थे । उनके गुणों का वर्णन माधौदास कृत स्तुति में इस प्रकार किया गया है—

बालपने तें हरि भजन, सदा रास रस लीन ।
निसि दिन प्रेम कीरतन विषै, छुहें नहीं गुन तीन ।।
सदा उदार प्रसन्न मुख, सोभा सुख की खान ।
अफल फले जिहिं द्रष्टि तें, या सम और न आन ।।

उनकी रचना कोई प्राप्त नहीं हुई है । उनका देहावसान भी छोटी आयु में ही हो गया था । उनकी विधवा पत्नी सुक्खन देवी जी वृन्दाबन में आकर रहने लगी थीं । उनका समस्त जीवन भगवद्भक्ति और सेवा पूजा में व्यतीत हुआ था । उनके नाम पर वृन्दाबन में 'सुक्खन माता की कुंज' प्रसिद्ध है, जो इस गद्दी के गोस्वामियों का प्रमुख स्थान है ।

मदनमोहन जी के तीन पुत्र थे । उनके नाम १. प्रद्युम्न जी, २. ब्रजभूषण जी और ३ धरणीधर जी मिलते हैं । इन नामों का उल्लेख इस संप्रदाय के भक्त कवि प्रभुदास द्वारा एक स्तुति में इस प्रकार हुआ है—

लाल नाम जग प्रगट कर, सफल जनन सुख दीन ।
पुष्टिमार्ग श्री भागवत, धर्म-सेतु द्रढ़ कीन ।।
पुनि श्री मथुरानाथ गृह, प्रगटे केवलराम ।।
मदनमोहन के गेह सौं, त्रिविधि रूप अभिराम ।।
प्रद्यम्न ब्रजभूषण प्रभू, धरणीधर सुभ धाम ।
हैं तीनों ये लाल बपु, एक रूप त्रै नाम ।।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रद्युम्नजी—उनकी स्तुति अनिरुद्ध जी के नाम से मिलती है। इससे ज्ञात होता है कि उनके पिता मदनमोहन जी थे और उनकी माता का नाम बोधीश्री था। उक्त स्तुति में प्रद्युम्नजी के जन्म और देहावसान की तिथियों का इस प्रकार का उल्लेख हुआ है—

संवत ग्रह द्रग जलधि ससि, उत्तम सावन मास।
सुकुल रुद्र तिथि मूल रिषि, सुरगुरु दिवस प्रकास।
लाल वंश में अवतरे, श्री मदनमोहन के धाम।
माता बोधी उदर तें, धरयौ रूप अभिराम॥
संवत जुग रिषि छंद मनि, सूर चक्र रथ जान।
सावन सुकला तिथि पुरी, देवगुरु सत मान॥

उक्त उल्लेख से ज्ञात होता है कि प्रद्युम्न जी का जन्म सं० १७२९ की श्रावण शु० १२ गुरुवार को तथा उनका देहावसान सं० १७७४ की श्रावण शु० १५ को हुआ था। उनकी रचना का उदाहरण इस प्रकार है।

बन तें आवत मदनगोपाल।
गोप मंडली मध्य विराजत, देख सखी री आज नंदलाल॥
मोर मुकुट मकराकृत कुंडल, उर सोभित मोत्यान की माल।
'प्रद्युम्न' गिरिधर के दरसन पर, तन मन,धन बारत ब्रजबाल॥

ब्रजभूषण जी—उनका जन्म सं० १७३३ की आषाढ़ कृ० २ में हुआ था। उनकी स्तुति का गायन भोपति के नाम से हुआ है, जिसमें उनके देहावसान की तिथि सं० १८ ० की आषाढ़ शु० ३ का इस प्रकार कथन है :—

संवत छित अरु ं वदु सिधि, रविरथ चक्र बखान।
सुदि अषाढ़ तृतीया दिनें, गमन कियो प्रभु जान॥

धरणीधर जी—उनकी स्तुति चतुर्भुज जी के नाम से मिलती है। इसमें उनके देहांत की तिथि सं १७९५ की श्रावण कृ० ८ बुधवार का उल्लेख इस प्रकार हुआ है—

व ग्रह अरु जलधि छित, सावन मास प्रधान।
कृष्ण पच्छ तिथि अष्टमी, बुध वासर परवान॥
त्याग कियो तब देह कों, लाए देव विमान।
चलो आपुने धाम कों, एतौ कियौ बखान॥

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अनिरुद्ध जी—वे मदनमोहन जी के ज्येष्ठ पुत्र प्रद्युम्नलाल जी के कदाचित पुत्र थे। यह अनुमान इसी गद्दी के एक भक्त कवि दूलहराम के निम्नोक्त कथन से होता है:—

मदनमोहन श्री कृष्ण तन, जगन्नाथ बल रूप।
श्री प्रद्युम्न अनिरुद्ध जी, चतुर व्यूह हरि रूप॥

दूलहराम ने उनके जन्म और देहावसान के काल का भी इस प्रकार उल्लेख किया है—

संवत ग्रह विधिमुख जलधि, रविरथ चक्र विचार।
तिथि तेरस रिषि वारणी, नभ सो सुकल ससिवार॥
द्रग वसु रिषि भू रवीसुत, संवत जान सुजान।
रवि हरि गत दिन सप्तदस, तिथि रस कृष्णा जान॥

उपर्युक्त कथन से ज्ञात होता है कि अनिरुद्ध जी का जन्म सं० १७४९ में तथा उनका देहावसान सं० १७८२ में हुआ था। उनके शांत और सात्विक स्वरूप तथा अनासक्त स्वभाव का इस प्रकार उल्लेख किया गया है—

शांत रूप नहिं द्वेष मन, शत्रु मित्र सम जान।
सुमग सुभग जिमि कर उभय, गंध भेद नहिं मान॥
तन विदेह नृप जनक ज्यों, दुःख सुख छुअत न गात।
ज्यों जलसुत जल में रहै, नोर न परसै पात॥

उनकी रचना का उदाहरण इस प्रकार है—

श्री गोपीनाथ हमारे स्वामी।
जब तब करत सहाय भक्त हित, सब विधि अँतरजामी॥
हित प्रहलाद खंभ ते निकसे, ततछन दैत्य संहार्‌यौ।
इंद्र कोप तें ब्रज-जन राखे, कर गोबरधन धार्‌यौ॥
पांडु बधू के नगन करन कों, दुर्योधन हठ कीना।
द्वारापुर तें सुनि पुकार प्रभु, अंग न उघरन दीना॥
गर्भ माँहि अभिमन्यु सुत राख्यौ, करुनामय सुखदाई।
ग्राह ग्रस्यो गजपति कों राख्यौ, दुख भजंन जदुराई॥
कवन कवन गुन बरनौं तेरे, महिमा अपर तिहारी।
तैसे राख लीजै 'अनुरुद्ध' कों दीनानाथ मुरारी॥

चतुर्भुज जी—वे ब्रजभूषण जी के छोटे पुत्र थे। उनके बड़े भाई का नाम मुरलीधर जी था। उनका देहावसान सं० १८२५ की आषाढ़ शु० १५ बुधवार को हुआ था। उनके गुणों का वर्णन माधोदास कृत स्तुति में इस प्रकार हुआ है—

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ज्ञान भगति दोउ मार्ग के, ततवेत्ता सर्वज्ञ ।
कर प्रबोध रिधि-सिधि करें, जे जन मन के अज्ञ ।।

देस देस विचरन कियौ, सेवक भये अपार ।
भजन द्रढ़ायौ कृष्ण कौ, जो है जग में सार ।।

बाँकेबिहारी जी—वे चतुर्भुज जी के ज्येष्ठ पुत्र थे। उनके छोटे भाई का नाम विश्वनाथ जी था। विश्वनाथ जी का जन्म संवत् १८०६ बतलाया है। इससे अनुमान होता है कि बांके बिहारी जी का जन्म सं० १८०० के आस-पास हुआ होगा। उनकी स्तुति प्रभुदास के नाम से मिलती है, जिसमें उनके देहावसान की तिथि सं० १८३७ की चैत्र शु० ५ का इस प्रकार कथन हुआ है—

संवत मुनि श्रुति गज धरा, चैत्र पंच सित जाम ।
निज इच्छा कर श्री प्रभु, करी केलि निज धाम ।।

उनकी रचना का उदाहरण इस प्रकार है—

अब मेरौ गोपीनाथ सों नातौ ।
गृह कारज सब दूर किये हैं, निसि दिन हरि गुन गातौ ।।
जमुना जल स्नान करों नित, गोबरधन उठि जाऊँ ।
श्री गोकुल की लीला देखों, ब्रज भक्तनहिं बुलाऊँ ।।
श्री प्रभु गोपीनाथ मुख निरखों, जनम जनम पद ध्यावों ।
"वंक विहार" एही वर माँगों, चरन छाँड़ि नहिं जावों ।।

विश्वनाथ जी—उनकी स्तुति रणछोड़ जी के नाम से मिलती है, जिसमें उनके जन्म और देहावसान की तिथियाँ क्रमशः सं० १८०६ भाद्रपद शु० २ शनिवार तथा सं० १८४७ द्वितीय आषाढ़ शु० ६ शनिवार इस प्रकार लिखी गई हैं—

चतुर्भुज जू कों दियौ, दुइ सुत रूप अनूप ।
इक श्री बंकविहार जी, विश्वनाथ वर रूप ।।
संवत अठदस शत उपर, षट् पुरुषोत्तम मास ।
भादव सुदि तिथि दूज शनि, प्रगट भये सुख-रास ।।

पुनि पुरुषोत्तम मास सुभ, द्वितियो मास अषाढ़ ।
सुदि षष्टी शनि मध्य दिन, तजो देह हृद गाढ़ ।।
संवत रिषि चतुरानवे, सिद्धि चंद्र संख्याइ ।
गवन कियौ विश्वनाथ जी, लोक रहे मुरझाइ ।।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रणछोड़ जी—वे बांकेविहारी जी के पुत्र थे। उनका जन्म सं० १८२२ की श्रावण कृ० १० सोमवार को हुआ था। उनकी धार्मिक भावना की प्रशंसा हरिदेव जी कृत स्तुति में इस प्रकार हुई है—

महा उदार प्रसन्न मुख, मृदुल स्वरूप उलास।
द्वादस तिलक सोभित सदा, ओढ़त पीत सुवास॥
पहरि उपवीत निगम पढ़ें, आरति अति हृद धार।
आतम निवेदन गिरिधरन, पूर्व सदा आचार॥
ग्रंथ स्व मारग पढ़ि लिए, सेवा पुष्टि प्रकार।
अहिर दिवस गोपीश के, सेवत भये चरणार॥

अपने अन्तिम दिनों में वे तीर्थ यात्रा और गंगा स्नान कर ब्रज में आ गये थे। यहाँ पर ब्रज यात्रा करने के अनंतर उन्होंने वृन्दाबन में अपना शरीर छोड़ा था—

गंगादिक स्नान कर, बहु विधि कीने दान।
ब्रज यात्रा कर शिवा परि,देह अनित्य दिखान॥
श्री बल्लभ कुल दरस की, चरन गुरुन हृद धार।
परम धाम वृंदा विपिन, तत्वन देह कों ढार॥

पौड़ी—तजि दीनी देह, महारानी में मिल गये।
ब्रज विहारिन नेह, कुंजन में खेलत भये॥

हरिदेव जी— वे रणछोड़ जी के पुत्र थे। उनका जन्म सं० १८५० की माघ कृ०६ को हुआ था। वे बड़े विद्वान थे। उन्होंने पुष्टि संप्रदाय का व्यापक प्रचार किया था। उनके एक ग्रंथ "विरह भेद विवरण" का नामोल्लेख मिलता है। उनके पुत्र बलदेव जी ने उनकी स्तुति करते हुए बतलाया है—

चार दिशा पावन करीं, सिंधु तीर लों जाइ।
शरण मंत्र उपदेश करि, मारग पुष्टि द्रढ़ाइ॥
दैवी जन सों हित सदा, विमुखन कों दे दंड।
मायावादी तिमिर जन, भास्कर तेज प्रचंड॥
कविता में श्री व्यास सम वक्ता में सुकदेव।
श्रोता श्रेष्ठ नृप वर्य के, रस वक्ता जयदेव॥
विरह मगन मन ताप में, करुणा बल्लभ चर्ण।
अनेक ग्रंथ कीर्तन किये विरह भेद विवर्ण॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उनकी रचना का उदाहरण इस प्रकार है—

लटकि चलति मटकावत नैंना, हटकि रहति ना किन सों ।
झटकि जाति बीथि हरि ब्रज तिय, मन अटकावति तिनसों ।।
भटकति पाछें घूंघट पट दै, अटकि लोक वर इनकी ।
घटकि काम सब छटकि सदन सों,सही न फटकि बिरहिन की ।
पट सों पाटि कपाट पाट कों, बसन दूर करि दरसन ।
खुटकि वेद कुल सकल त्यागि करि, उलटि-पलटि भई "हरिजन"।।

रसिक सिरोमनि अब नहिं आये, किन दूती भरमाये ।
या गुरुजन लज्जा में बाँधे, या किन ज्ञान लगाये ।।
या भय लोकन, या देह रोगन, या मोइ अनगन जाने ।
पूजा देवन या जल मेघन, खोलहिं रोकन आने ।।
पीया न आवत, तर्क न जावत, विरह दहावत गात ।
"हरिजन" राधा बड़ी चटपटी, रैन घटी वह हटी न जात ।।

बलदेव जी—वे हरिदेव जी के पुत्र थे । उनका जन्म सं० १८७२ की आषाढ़ शु० ६ को तथा उनका देहान्त सं० १९३६ की फाल्गुन शु० १४ को हुआ था । उनकी रचन का उदाहरण इस प्रकार है :—

गिरिधर लाल चले गो-चारन ।
भलौ महूरत आजु बिचार्यौ, गो संग विपिन पधारन ।
मोर-मुकुट कटि काछिनि, झलमल, अंस पीत पट धारन ।।
नख-सिख भूषित,लग्यौ डिठोना, "बल" संग लीये ग्वारन ।

बलदेव जी के कई पुत्र थे । उनमें से कुंजलाल जी और जीवन लाल जी का वंश-विस्तार हुआ है । कुंज लाल जी के ४ पुत्र सुन्दर लाल जी, जय लाल जी, दानी लाल जी तथा श्यामलाल जी हुए । जीवनलाल जी के पुत्र कन्हैया लाल जी तथा गोवर्धन लाल जी हुए । सुन्दर लाल जी के पुत्र बाँके लाल जो तथा पौत्र रतनलाल जी इस गद्दी की गौरव वृद्धि के लिए प्रयत्नशील हैं ।

जैसा लिखा जा चुका है, इस गद्दी के शिष्य-सेवकों में भी अनेक कवि हुए हैं । उनमें से श्री लाल जीं के द्वादश शिष्यों का उल्लेख पहिले हो चुका है । उनके अतिरिक्त लाल जीं के वंशजों के शिष्यों में सर्वश्री प्रभुदास, माधौदास, गंगाधर, बनवारी, सुजन, नवनीत दास, त्रिलोकीनाथ, रूप चन्द, भोपति, दूलहराम आदि की रचनायें मिल चुकी हैं ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

विशेष अनुसंधान से औरों की भी मिल सकती हैं । यहाँ पर ऐसे कुछ कवियों की रचनाओं के उदाहरण दिए जाते हैं ।

प्रभुदास:—इस गद्दी के शिष्यों में से प्रभुदास की रचनायें अधिक संख्या में मिलती हैं । उन्हें श्री केवलराम जी का शिष्य समझा जाता है, किन्तु उन्होंने बाँके बिहारी जी तक की स्तुति का कथन किया है, जो केवलराम जी की ५ वीं पीढी में हुए थे । अनुमान से वे बाँके विहारी जी के ही शिष्य जान पड़ते है । उनकी रचना के कुछ उदाहरण यहाँ दिये जाते हैं—

राजत आज गोपीनाथ ।
रास मंडल रच्यौ अद्भुत राधिका के साथ ।।
मुकुट मुरली काछि अंबर पीत उर बनमाल ।
सजे नव सत नव किसोरी, वर सिंगार रसाल ।।
धरनि बेली गोपिका मधु, मनि सु मकरत स्याम ।
किधौं जड्यौ जड़ाव, वृंदावन पहरि बर दाम ।।
कल्प सम भई सरद रजनी, रह्यौ ससि थिर जोय ।
बढ्यौ आनंद सिंधु "प्रभुदासै" निरखि सुख होय ।।

आज छटी दिन नंद कुमार ।
बनिता बनिकें सब मिलि आईं, गावत मंगलचार ।।
जसुदा सुत अहन्वाइ मोद सों, बारत मोतिन माल ।
पूजन कर वर कुल बिधान सों,देत तिलक वर माल ।।
गर्ग आदि लै सकल मुनिश्वर, करि धुनि वेद उचार ।
देस-देस तें मागध आये, माँगन व्रजपति द्वार ।।
सुन्दर सकल सोहत इत-उत सों झलकत बंदन माल ।
"प्रभुदासै" जन देत बधाई, पाई शक्ति विसाल ।।

दक्षिण गिरि तें प्रगट भए, प्रभु गोपीनाथ सुखदाई ।
मंगलचार भए तिहिं अवसर, बज्रनाभ सुन पाई ।।
धाइ चल्यौ हृद प्रेम मोद भरि, प्रभु पद सीस नवायौ ।
माथे धारि चल्यौ ले आज्ञा, गोबरधन पधरायौ ।।
भादों वदि ग्यारस तिथि नीकी, जानि महोच्छव कीनौं ।
"प्रभुदासै" सेवा करि हित सों, सब जीवन सुख दीनौं ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

माधौदास—उनकी रचनाएँ भी पर्याप्त परिमाण में उपलब्ध होती हैं। उन्होंने सर्वश्री लाल जी, गोकुलनाथ जी, मदनमोहन जी, जगन्नाथ जी से लेकर चतुर्भुज जी तक की स्तुतियों का कथन किया है। इससे इनके समय और कुछ जीवन-वृत्त को जानने में सुविधा होती है। स्तुतियों के अतिरिक्त उनकी और भी अनेक रचनाएँ हैं। कुछ उदाहरण यहाँ दिये जाते हैं:—

सोहनी सूरत नन्द दा लाला, असानू चेटक लाय गया।
मटकी पटकी, सुधि नहिं घर की, चटकी तान सुनाय गया॥
खोर सांकरी मिल्या अचानक, अखियाँ दी चमक दिखाय गया।
सब गुन भारा, रूप उज्यारा, "माधौ" चित्त चुराय गया॥

स्यामसुन्दर मोहन प्यारे, संग लागीं मोरी अँखियाँ रे।
रुके नैन पुन अंजन जैसे, उड़ि मिलीं ज्यों मधु मखियाँ रे॥
काहू की सीख न मानें निठुरीं, लक थक रहियाँ सखियाँ रे।
"माधौ" स्वामी रूप लुभानी, प्रेम-सुधा रस चखियाँ रे॥

गंगाधर—परम निधि श्री लालन मोहि दीनी।
जो देवन सुरपति हू निश्चय, कबहू स्वप्न न चीनीं॥
पूरन ब्रह्म नंद कौ नंदन, तिनकौ हाथ गहायौ।
निगम सार गोपी जन बल्लभ, सो मोहि नाम बतायौ॥
पुष्टि मार्ग मत श्री भागवत कौ, पुनि सेवा रस स्वाद।
ब्रज लीला सुंदर कौ अनुभव, अस मुरली कौ नाद॥
श्री पुरुषोत्तम कौ अधरामृत, आनंद मय बरसायौ।
लाल कृपाल कृपा द्रग हू तें, 'गंगाधर' फल पायौ॥

सुजन—परम पवित्र घोर अघ दाहनि, एकादसी सप्त प्रभु केरी।
तिन स्वरूप अठवीस धर्‌यौ है, स्याम गौर लखि विपति निबेरी॥
चार स्वरूप जयंती कहियै, चार औतार भए तिन मेरी।
तीन लोक अघ जारन कारन, द्वादस स्याम रूप हित सेरी॥
द्वादस गौर रूप जा हित हैं, हरि पद पावन कौ निश्चैरी।
इन ब्रत कों रुचि तें जन धारे, "सुजन" जेई प्रभु के हित केरी॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पुष्टि मार्ग में जो आयौ, धर्म तत्त्व सोई पायौ,
कृष्ण नाम जो गायौ, ताकों गाइवौ कहा रह्यौ ।
चरनहिं कौ पियौ वारि, मोक्ष फल लियौ चारि,
कृष्ण जल नहायौ, और न्याइवौ कहा रह्यौ ॥
गीता गावत पढ़्यौ, सबै वेद कंठ कर्‌यौ,
खायौ जो प्रसाद, और खाइवौ कहा रह्यौ ।
चित्त जाहि ठौर "सुजन" ताहि चाह कहा और,
वृंदाबन पायौ, और पाइवौ कहा रह्यौ ॥

नवनीत—गोपीनाथ मेरौ नित संगी ।
जहाँ-जहाँ भीर पड़ी मोपै भारी, तहाँ-तहाँ प्रगट्यौ ललित त्रिभंगी ॥
कर्म-अकर्म जगत् जेहि कीने, गोपीनाथ अधार निसंगो ।
जन "नवनीत" नहीं भय पावत, सदा विनोद सुमोद उमंगी ॥

दास—आया हूँ तेरे द्वार, ओट और सभी हार,
चिंता बाढ़ी अपार, कछु न सुहाता जू ।
माँगत हैं एते मोसों, मैं भी एक माँगों तोसों,
तुम जग देन हारे, मेरा तोसों नाता जू ॥
सुनके अचिंत रहो, मेरी पीर कैसे सहौ,
ढील के किए तें, सब लोक हू हँसाता जू ।
"दास" दुख भंजन, उतावले हैं खेवन हार,
ढील कों निवारियै, श्री गोपीनाथ दाता जू ॥

त्रिलोकीनाथ—माई मेरौ लालन सों मन मान्यौ ।
अन्य आसरौ छाँड़ि दियौ, जब श्री लालन पति जान्यौ ॥
निसि-दिन लाल चरन सेवा रहि, लाल रूप रस सान्यौ ।
"त्रिलोकीनाथ" लालन सेवा तें, सब संसय मन मान्यौ ॥

रूपचंद—उन्होंने केवलराम जी की स्तुति करते हुए लिखा है—

दोहा—गुरु महिमा को मुख कहै, को पढ़ि किसे सुनाइ ।
श्री केवलराम प्रसन्न होइ, चार पदारथ पाइ ॥
प्रात मध्य संध्या समै, कभू पढ़ै हित धार ।
सकल मनोरथ सिद्ध तिस, करुना करै मुरार ॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पौड़ी—करुना बहु धारें, जिसको प्रभु अपुना करें।
इस जगत मझारें, जो फल माँगे सो लहें ।।
गोपद ज्यों तारे, महा विषम संसार तें।
जों मुखों उचारे, सदा कृतारथ जगत में ।।
हृद माँहि विचारे, मुक्त विषै संसा नहीं।
श्री नंद दुलारे, प्रगति पदारथ तिसो दें ।।
श्री गुरु केवलराम जी, करुना मुझ कीजै।
"रूपचंद" सरनें पर्यौ, अपुना कर लोजै ।।

भोपति—उन्होंने ब्रजभूषण जी की स्तुति करते हुए कहा है—

दोहा—श्री प्रभु गोपीनाथ जो, निसि दिन करों प्रणाम ।
पतित उधारन विरद तुझि, दीनबंधु है नाम ।।
सुन बानी यह बीनती, नमस्कार करों तोहि।
श्री ब्रजभूषन गुन कहों, निरमल बुधि दे मोहि ।।

पौड़ी—लोनौ अवतार, माता बीबी उदर तें ।
अति भये उदार, श्री मदन मोहन जी हरष तें ।।
नहीं पारावार गो-मुक्ता-धन-पट दीए ।
बाढ़्यौ जयकार, गो द्विज संत सुखी भए ।।

द्विज कर्यौ उचार, ब्रजभूषन जी नाम धर।
यह रूप निहार, नैन महा विह्वल भए ।।
सोभासिंधु अगाध है, काहू न पायौ पार।
सुर नर मुनि रिष मिल सभी, जै-जैकार उचार ।।

दोहा—श्री ब्रजभूषन लाल जी, माँगों एही दान।
जन "भोपति" के हृद विषै, नित-नित तेरौ ध्यान ।।

दूलह राम—उन्होंने अनिरुद्ध जी की स्तुति करते हुए गुरु महिमा का कथन इस प्रकार किया है :—

बंदौ गोपीनाथ पद, जो दायक फल चार।
जिहि पग लग मुनि त्रिय तरी, करी मुक्त बनवार ।।
एक रदन कविवर बदन मदन कदन सुत जोइ।
विघन हरन मंगल करन, सरन धरन जग सोइ ।।
बानी रानी जगत की, हौं नित प्रणवों तोहि।
गुरु महिमा बरनत, सुमति देहु कृपा करि मोहि ।।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जैसा लिखा जा चुका है, श्री लाल जी ने सं० १६४१ में ब्रज से जाने पर डेरा गाजीखाँ में अपना प्रमुख केन्द्र बनाया था। उनके चारों पुत्र सर्वश्री मथुरानाथ जी, गिरधारी जी, भगवान जी और ग्वाल जी उसी स्थान पर रहे थे। बाद में श्री मथुरानाथ जी के वंशज तो डेरा गाजीखाँ में ही रहे आये, किन्तु श्री गिरधारी जी के वंशज डेरा इस्माइल खाँ और बहावलपुर चले गये। सर्वश्री भगवान जी और ग्वालजी की वंश-परंपरा नहीं चली। सं०१६४१ से सं०१९०६ तक, जब कि वह प्रदेश अँग्रेजों के अधिकार में गया, इस गद्दी की उन्नति होती रही और उसके साहित्य का भी विकास होता रहा। अँग्रेजी शासन-काल में उक्त प्रगति में शिथिलता आ गई थी। सं० २००४ में देश का विभाजन होने पर इस गद्दी के आचार्यों तथा उनके शिष्यों-सेवकों को डेरा गाजीखाँ, डेरा इस्मालखाँ, बहावलपुर तथा पाकिस्तान के अन्य स्थानों से हटना पड़ा था। उस हड़बड़ी में वे लोग अपना बहुत सा साहित्य उन्हीं स्थानों में छोड़आये थे। जो कुछ वे साथ में लाये, उसमें से भी बहुत सा मार्ग में ही लुट गया था। इस समय इनके पास अधिक साहित्य नहीं है, फिर भी जो कुछ है, वही उनकी गौरवशाली परम्परा का परिचय देने में पर्याप्त है।

जिस प्रकार भारतवर्ष में लुप्त प्राचीन ग्रंथों की मूल अथवा अनुवादित प्रतियाँ नैपाल, तिब्बत, चीन आदि देशों में मिली हैं, उसी प्रकार इस गद्दी के आचार्यों के संग्रह में बल्लभ संप्रदाय का कुछ ऐसा साहित्य भी है, जो इस देश के प्रमुख सांप्रदायिक केन्द्रों में कठिनता से मिलता है। इसका अनुभव मुझे अपने ग्रंथ "गो० हरिराय जी का पद साहित्य" की सामग्री संकलित करते समय हुआ था। जहाँ नाथद्वारा, कांकरौली आदि के बल्लभ संप्रदायी ग्रंथ भंडारों में गो० हरिराय जी कृत पदों का कोई अच्छा संकलन नहीं मिल सका, वहाँ इस गद्दी की ग्रंथ सामग्री का अन्वेषण करते समय मुझे हरिराय जी कृत "नित्योत्सव" के पदों की तीन बड़ी पोथियाँ मिल गईं, जिनका मैंने अपने ग्रंथ में समुचित उपयोग किया था। इस प्रकार इस गद्दी का अछूता साहित्य हिन्दी के अन्वेषक विद्वानों को अपनी ओर आकर्षित कर सकता है।

सिंध-पंजाब से हटने पर इस गद्दी के गोस्वामी और उनके शिष्य-सेवक गण उत्तरी भारत के विविध स्थानों में, विशेषकर दिल्ली और वृंदाबन में बस गये हैं। इस गद्दी के उपास्य श्री गोपीनाथ जी का देव विग्रह, जो पहिले डेरा गाजीखाँ में था, अब दिल्ली को नई बस्ती कीर्तिनगर के एक छोटे मंदिर में विराजमान है। वर्तमान आचार्यों में श्री रतन लाल जी अपने पूर्वजों की गौरव-वृद्धि तथा उनके साहित्य की समुचित व्यवस्था करने में सचेष्ट हैं। इस गद्दी का उपलब्ध साहित्य जहाँ बल्लभ संप्रदाय के प्रचुर साहित्य-भंडार की और भी श्री वृद्धि करेगा, वहाँ ब्रजभाषा-हिंदी के भक्ति-साहित्य की समृद्धि में भी अपना समुचित योग देगा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मुगल युग के शक्तिशाली हिन्दू राजा (२)

श्री वृन्दावन दास, बी० ए०, एल-एल० बी० मथुरा

सन् १५५६ ई० में दिल्ली के सिंहासन पर अकबर का राज्यारोहण हुआ। प्रस्तुत लेख का आशय उस समय की हिन्दुस्तान की राजनीतिक परिस्थिति का अध्ययन हिन्दुओं के महत्व की दृष्टि से करने का है। मुगलयुग के इस भाग में हिन्दू राजाओं की शक्ति कितनी प्रबल थी, उनका अधिकार क्षेत्र कितना विस्तृत था, देश की राजनीतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक प्रगतियों में उनका प्रभाव कितना व्यापक था आदि विषयों का ऐतिहासिक वर्णन बड़ा मनोरंजक है।

दिल्ली के पश्चिम मे जो राजपूत राज्य थे वे अब स्वतन्त्र होगये थे और उनमें मेवाड़, जेसलमेर, बूँदी और जोधपुर के राज्य सबसे प्रसिद्ध थे। इन राज्यों ने अपनी सैन्य-शक्ति में यथेष्ट वृद्धि करली थी और इनका प्रभावक्षेत्र भी घना था। गोंडवाना राज्य का प्रबन्ध रानी दुर्गावती के कुशल हाथों में था। विंध्याचल के दक्षिण में खानदेश, गोलकुन्डा बरार, बीदर, बीजापुर और अहदमनगर के स्वतन्त्र मुस्लिम राज्य थे। इन मुसलमानी राज्यों के दक्षिण में कृष्ण और तुंगभद्रा से कुमारी तक विजयनगर का हिन्दू राज्य फैला हुआ था।

राज्यसिंहासन पर बैठते ही अकबर को दो मुस्लिम शक्तियों से संघर्ष करना था। एक तो सूरवंशीय अफगान लोग थे और दूसरी शक्ति थी मुहम्मद आदिल के नेतृत्व में लोधी वंश की। मुहम्मद आदिल ने इस साम्राज्य की जिस पर शेरशाह सूर ने अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया था पुनः प्राप्ति की आशा अभी नहीं छोड़ी थी। उसको हेमू नाम के एक सुयोग्य हिन्दू सेनापति की सेवायें प्राप्त थीं। पहिले हेमू रैवाड़ी गांव का एक साधारण व्यवसायी था परन्तु अपनी असाधारण योग्यता के आधार पर वह उन्नति करता हुआ आदिलशाह लोधी का प्रधान मन्त्री बन गया। वह एक उच्चकोटि का वीर और संगठनकर्ता था। मुहम्मद आदिल के दरबार में उसका प्रभाव इतना बढ़ गया था कि वह अपनी इच्छा के अनुसार मुस्लिम सरदारों को जागीरों का वितरण करता था। इस समय

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उसने राजा विक्रमादित्य की उपाधि धारण की। अबुल फजल अपनी पुस्तक में लिखता है कि उसका राज्य प्रबंध बड़ी योग्यता और सफलता से किया गया था। हेमू ने अनेक युद्धों में बड़ा यश प्राप्त किया था। उसने अपने स्वामी आदिलशाह के प्रतिद्वन्दी इब्राहीम खाँ को युद्ध में परास्त किया तथा २२ युद्धों में विजय प्राप्त की। हुमायूँ की अचानक मृत्यु और उसके उत्तराधिकारी की अल्पवयस्कता के कारण उसने सोचा कि भारत में अपना साम्राज्य स्थापित हो सकता है। आदिलशाह से परामर्श करके हेमू विक्रमादित्य ५०० हाथी और ५० हजार सवार सैनिकों की एक सेना लेकर आगरे पर चढ़ दौड़ा। उसने बड़ी सुगमता से आगरा ले लिया। आगरे से भागती हुई शाही सेना का पीछा करते हुए हेमू दिल्ली पर चढ़ाई करने लगा। वहाँ मुगल सेना के सेनापति बेग से उसकी सेनाओं की मुठभेड़ हुई। बेग अपनी सेना सहित बुरी तरह पराजित हुआ और हेमू विक्रमादित्य ने दिल्ली पर विजय प्राप्त कर अपने आपको सम्राट घोषित कर दिया।

इस प्रकार आगरा और दिल्ली पर अपना अधिकार जमा कर हेमू विक्रमादित्य ने अपने आपको भारत का सम्राट तो उद्घोषित कर दिया परन्तु उसे यह भली भाँति ज्ञात था कि मुगलों से अभी अन्तिम युद्ध लड़ना शेष है। हेमू के राज्य में बड़ा दुःसह दुर्भिक्ष पड़ा परन्तु हेमू अपने जीते हुए राज्य को सुरक्षित करने नें व्यस्त था, जनता की ओर देखने का उसके पास समय न था। थोड़े ही समय में हेमू ने एक विशाल वाहिनी तैयार की जिसमें १५०० हाथी थे। इस विशाल सेना को लेकर हेमू मुगलों से लड़ने के लिए पानीपत के मैदान में पहुँचा। उसकी सेना को देखकर मुगलों में पहिले तो घोर निराशा छागई और ऐसा प्रतीत होने लगा कि बिजयश्री हेमू को ही प्राप्त होगी। हेमू की सेनाओं की विजय चिरस्थायी न रह सकी, कारण संघर्ष के मध्य में शत्रु सेना की ओर से चला हुआ एक तीर उसकी आँख में लगा जिससे वह मूर्छित होगया। हेमू को गिरते देख उसकी सेना में भगदड़ मच गई और हेमू को युद्ध क्षेत्र में ही बन्दी बना लिया गया। बन्दी के रूप में हेमू को अकबर के सम्मुख प्रस्तुत किया गया जहाँ उसके संरक्षक वैरमखाँ ने अपनी तलवार से उसका वध कर दिया।

अकबर के समय में हिन्दुओं की स्थिति

अकबर बड़ा बुद्धिमान था, उसने हिन्दुओं के प्रति उदारता की नीति का अनुसरण किया। अकबर का हृदय उदार था और धार्मिक सहिष्णुता तो उसमें मानो हिन्दुओं की सी थी। अकबर इस बात को जानता था कि राजपूत हिन्दुओं के सैनिक वीर एवं नेता हैं तथा उनके सहयोग से विमुख होकर हिन्दुस्तान में साम्राज्य स्थापित करने का स्वप्न आकाश कुसुमवत् है। उसकी यह धारणा सत्य थी कि राजपूत हिन्दुस्तान के सर्व श्रेष्ठ योद्धा हैं और यदि साम्राज्य स्थापित करना है तो उनका सहयोग अनिवार्यतः प्राप्त करना

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

होगा। उच्च विद्वानों के संसर्ग में रहने के कारण अकबर का हृदय धार्मिक विद्वेष से रहित हो गया था। वह धर्मान्धता को राजनीतिक दृष्टि से मूर्खता पूर्ण समझता था और कभी उसका कायल न था। उसके हृदय से धार्मिक संकीर्णता निकल जाने से हिन्दुओं के प्रति उसकी सहानुभूति में बड़ी वृद्धि हुई। टोडरमल और बीरबल जैसे योग्य और प्रतिभाशाली हिन्दुओं को अपनी सेवा में लेकर उसने एक सफल राजनीतिज्ञ होने का परिचय दिया। वस्तुतः अपने उत्तम व्यवहार से अकबर ने राजपूतों की सहानुभूति और सहयोग प्राप्त करने का संकल्प किया। वह जानता था कि ऐसा किये बिना उसकी महत्वाकांक्षा कभी चरितार्थ न हो सकेगी।

अकबर के व्यवहार और उसकी उपरोक्त विचारधारा से प्रभावित होकर आमेर के कछवाहा राजा भारमल ने अपनी पुत्री का विवाह अकबर के साथ करने का प्रस्ताव प्रस्तुत किया। राजा ने वैवाहिक सम्बन्ध द्वारा अकबर से राजपूत मैत्री को स्थिर करना चाहा। अकबर ने राजा भारमल का प्रस्ताव सहर्ष स्वीकार कर उनकी पुत्री से अपना विवाह कर लिया। राजा भारमल अपने पुत्र भगवानदास और पौत्र कुँवर मानसिंह को लेकर आगरा आये। वहाँ उन्हें पंचहजारी मन्सबदार नियुक्त किया गया। राजा भगवानदास और मानसिंह ने तो आगे चलकर भारत की राजनीति में महती भूमिका अदा की और बड़ा प्रभाव एवं यश अर्जित किया।

यह विवाह इस देश के इतिहास एवं राजनीति में एक महत्वपूर्ण घटना सिद्ध हुई। इससे भारत की तत्कालीन दो प्रमुख जातियों में पारस्परिक विरोध दूर होकर सहानुभूति तथा सहयोग की भावना उत्पन्न हुई। प्रसिद्ध इतिहासकार डाक्टर बेनीप्रसाद लिखते हैं, "इससे भारतवर्ष के राजनैतिक इतिहास में एक नये युग का आविर्भाव हुआ। इससे देश को प्रसिद्ध सम्राटों की एक परम्परा प्राप्त हुई और इसने मुगल बादशाहों की चार पीढ़ियों को मध्यकालीन भारत में जन्म लेने वाले कुछ सबसे बड़े सेनापतियों और राजनीतिज्ञों की सेवा प्रदान की।"

जयमल और पत्ता की वीरता

राजपूताना में मेवाड़ का राजवंश सर्वोच्च माना जाता था। वहाँ के राणा अपने को श्री रामचन्द्र का वंशज मानते थे। वस्तुतः यह वंश राजपूत गौरव का प्रतिनिधि स्वरूप था। यह एक ऐतिहासिक तथ्य है कि इस वंश के राजाओं ने कभी विदेशी सम्राटों के आगे अपना मस्तक नीचा नहीं किया। अकबर के समय में राणा उदयसिंह मेवाड़ के अधिपति थे। उन्होंने अकबर की शक्ति की परवाह न कर मालवा के भागे हुए शासक बाजबहादुर को शरण दी और उन मिर्जाओं को भी सहायता दी जिन्होंने अकबर का

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

विरोध किया था। अकबर को प्रतीत हुआ कि जब तक मेवाड़ की विजय न होगी हिन्दुस्थान का सम्राट बनने की उसकी महत्वाकांक्षा भी पूर्ण न होगी। अत: उसने चित्तौर पर चढ़ाई करने का संकल्प किया। इसी समय एक विचित्र घटना उत्पन्न हुई। राणा उदयसिंह का पुत्र शक्तिसिंह अपने पिता से अप्रसन्न होकर अकबर से मिला। परन्तु जब अकबर ने उससे यह कहा कि उसका इरादा चित्तौर पर चढ़ाई करने का है तो वह चुपके से रात्रि को निकल भागा और अपने पिता को सब समाचार सुना दिया। अकबर शक्तिसिंह के निकल भागने का समाचार सुनकर बड़ा क्रुद्ध हुआ और उसने मालवा के बजाय पहिले चित्तौर पर ही चढ़ाई करने का निश्चय किया। उसने २० अक्टूबर सन् १५६७ के दिन चित्तौर के किले के पास पहुँच कर पड़ाव डाला और अपनी सेना द्वारा किले का घेरा डालने का यत्न करने लगा। राणा उदयसिंह अपने सरदारों से परामर्श करके ८००० राजपूत वीरों की सेना के साथ जयमल और पत्ता को किले की रक्षा का भार सुपुर्द कर स्वयं पहाड़ियों में चले गये।

लगभग ६ महीने तक किले की घेरा बन्दी चलती रही। राजपूतों ने किले की रक्षा में अभूत पूर्व वीरता दिखाई। भयंकर युद्ध में कई बार अकबर मरते मरते बचा। निराश होकर अकबर ने विजय प्राप्ति के लिए अजमेर के ख्वाजा मुईनुद्दीन की जियारत की मनौती की। युद्ध २३ फरवरी सन् १५६८ ई० तक चलता रहा। अन्त में किले पर काम करते समय अकबर की गोली से जयमल घायल हो गया और भोजन की सामग्री भी किले में समाप्त हो गई थी। जयमल ने सब सरदारों को एकत्र करके दुर्ग के द्वार खोलकर युद्ध करने और जौहर द्वारा प्राणोत्सर्ग करने का प्रस्ताव किया। दूसरे दिन दुर्ग के द्वार खोल दिए गये और राजपूतों ने बड़ी वीरता से भयंकर युद्ध किया जिसमें शत्रु सेना के अगणित सिपाही खेत रहे। राजपूत वीर लड़ते लड़ते एक एक करके मरते रहे और जौहर की अग्नि में समस्त स्त्रियों और बालकों ने अपनी जान देदी। जयमल और पत्ता ने मेवाड़ के गौरव की रक्षा में विलक्षण शौर्य प्रदर्शित करते हुए प्राणोत्सर्ग कर दिया। किले में स्थित प्रजा का भी संहार हुआ, क्योंकि अकबर ने कत्लेआम का हुक्म दे दिया था। प्रजा के प्रति असंतोष का कारण यह था कि उसने राजपूती सेना का साथ दिया था। अबुलफजल का कहना है कि लगभग तीस सहस्त्र मनुष्यों का बध कर दिया गया परन्तु अन्य इतिहासकारों का मत है कि इस कथन में अतिशयोक्ति है।

रणथम्भौर का दुर्ग सुरजन हाड़ा के आधीन था। यह दुर्ग ऊंची पहाड़ी पर स्थित था और मुगल सेना को इसे जीतने में बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ा। सुरजन हाड़ा को राजा भगवानदास और मानसिंह ने समझा बुझा कर सन्धि के लिए उद्यत कर दिया। इसीं प्रकार राजा भगवानदास और मानसिंह ने जोधपुर के राजा मालदेव तथा कलिंजर और नागौर के हिन्दू राजाओं से अकबर का मेल करा दिया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

राजा भगवानदास और मानसिंह अकबर के शासनकाल में बड़े शक्तिशाली हिन्दू राजा थे। अकबर की राजपूतों के साथ मेल करने नीति भी इन्हीं राजाओं के प्रभाव का परिणामस्वरूप थीं। यह इन राजाओं का ही प्रभाव था कि अकबर ने हिन्दुओं को काफिर समझ कर उनसे घृणा नहीं की। अकबर राजपूतों से जी जान से लड़ता तो था परन्तु वश्यता स्वीकार कर लेने पर उनसे वह मेल कर लेता था और कभी कोई काम ऐसा नहीं करता था जिससे उनकी धार्मिक भावना को ठेस पहुँचे। राजा भगवानदास और मानसिंह का प्रभाव इस दशा में सदैव काम करता रहता था। अकबर राजपूत और मुसलमान सरदारों को समान रूप से अधिकार व पद देता था। वह दोनों में किसी प्रकार का भेदभाव नहीं करता था।

अकबर के शासनकाल में मेवाड़ की स्थिति

सन् १५७२ ई० में महाराणा उदयसिंह की मृत्यु हो गई। उनके बाद उनके पुत्र महाराणा प्रतापसिंह उनके उत्तराधिकारी हुए। उन्होंने अन्य राजाओं की भाँति अकबर के साथ मेल करके अपना अस्तित्व कायम रखने की नीति को आत्म गौरव के प्रतिकूल समझा। वे स्वतन्त्रता को जीवन का सर्वस्व समझते थे और किसी विदेशी शक्ति के आगे सिर झुकाना पाप समझते थे। उनको अपने पूर्वजों राणा सांगा और राणा कुम्भा के वीर चरित्रों पर गर्व था। राणा के आगे भी अनेक प्रलोभन रक्खे गये परन्तु उन्होंने अपनी स्वतन्त्रता को ही गौरव समझा।

महाराणा प्रताप के साथ अकबर का जो युद्ध छिड़ा उसका एक मनोरंजक कारण था। इस का वर्णन राजपूताने की ख्यातों में, प्रशस्तियों में और टाड कृत राजस्थान के इतिहास में मिलता है। कहते हैं गुजरात से लौटते समय दिल्ली जाने के अपने मार्ग में राजा मानसिंह उदयपुर पहुँचे। राणा ने उनका मान सम्मान तथा स्वागत किया। उदय सागर झील के उद्यान में राजा मानसिंह के सम्मान में एक भोज का आयोजन किया गया। मानसिंह उसमें उपस्थित हुए और घनी देर तक प्रतीक्षा करने के बाद भी राणा भोज में सम्मिलित होने के लिये न आये। मानसिंह ने कारण पुछवाया तो कहा गया कि राणा के पेट में दर्द है अतः न आ सकेंगे। मानसिंह ने इसको बहाना मानकर ऐसी दशा में भोजन करना एक अपमान की बात समझी। उन्होंने आवेश में आकर कहा कि मैं इस दर्द की दवा लेकर बहुत जल्द लौटूँगा, अगर मैंने इस अभिमान का उत्तर न दिया तो मेरा नाम मानसिंह नहीं। राणा ने कहला भेजा कि आप अवश्य आइये, मैं आपके स्वागत को तैयार रहूँगा, साथ में अपने फूफा अकबर को लेते आइये। मानसिंह के चले जाने पर सब भोजन फिकवा दिया गया और स्थान की अपवित्रता दूर करने के लिए वहाँ पर गङ्गाजल छिड़का गया। मानसिंह जब दिल्ली पहुँचे तो उन्होंने अपने अपमान का वृत्तान्त अकबर को कह

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सुनाया। अकबर यह सुनकर बहुत क्रुद्ध हुआ। उसे तो अपनी साम्राज्यवादी नीति के अन्तर्गत मेवाड़ को अपनी अधीनता में लाना ही था, उसने एक बड़ी सेना के साथ मानसिंह को मेवाड़ के राणा से युद्ध करने के लिए भेजने का निश्चय किया। राणा ने भी युद्ध को अटल जानकर राजपूत वीरों तथा कम्मलनेर और गोगुन्दा के किलों को सुसज्जित किया।

राजा मानसिंह और आसफखाँ के सम्मलित नेतृत्व में एक विशाल सेना जिसमें राजपूत और मुगल दोनों शामिल थे राणा से युद्ध करने को भेजा गई। यह सेना माडलगढ़ होती हुई हल्दीघाटी पहुँची जहाँ पर राणा अपनी सेना सहित इनसे युद्ध करने को तैयार थे। यह युद्ध सन १५७६ ई० में हुआ। प्रसिद्ध लेखक अलबदायूनी इस युद्ध में स्वयं उपस्थित था। उसने इस युद्ध का बड़ा विस्तृत वर्णन लिखा है। राणा ने ३००० सवारों के साथ मुगलसेना पर हल्दीघाटी के पीछे से भीषण आक्रमण किया इस आक्रमण से शत्रुसेना में भगदड़ मचगई और मुगलों की हरावल सेना पराजित होगई। परन्तु दक्षिणी भाग के राजपूतों में अकस्मात भगदड़ मचगई और वे अस्त व्यस्त होकर भागते हुए मुगलसेना से टकरा गये। इस टकराव में राजपूतों की बड़ी क्षति हुई और अन्त में राणा को हटना पड़ा। राणा पहाड़ियों में चले गये जहाँ कि मुगलों ने उनका पीछा नहीं किया। युद्ध में मगलसेना पर राणा ने जो भीषण मार दी थी उसको ध्यान में रखकर वे राणा का पीछा करके अपने को जोखिम में डालना नहीं चाहते थे।

मुगलसेना ने कई बार मेवाड़ पर आक्रमण किया परन्तु उसका राणा को परास्त करने का स्वप्न कभी पूरा न हुआ। अकबर राणा को अपने वश में न ला सका। राणा अवसर पाकर मुगल सेना की रसद बन्द करदेते थे और उसको अनेक यातनाऐं पहुँचा कर लूट लेते थे। उन्होंने समतल प्रदेश को ऊजड़ बना दिया था जिससे मुगलसेना को रसद मिलना असम्भव होगया था। हल्दीघाटी की हार के बाद उन्होंने चित्तोड़, मांडलगढ़ और अजमेर को छोड़कर शेष मेवाड़ को पुनः अपने अधिकार में कर लिया था। उन्होंने आमेर के प्रदेश पर आक्रमण करके उसके समृद्धिशाली नगर मालपुरा को कई बार लूटा।

सन १५९७ ई० में राणा का स्वर्गवास हुआ। बीमारी के अन्तिम दिनों में राणा बड़े दुःखी प्रतीत होते थे। यह वृतान्त टाड कृत राजस्थान के इतिहास तथा वीर विनोद में मिलता है उनके स्वामिभक्त सरदारों ने उनकी शय्या के चारों ओर एकत्रित होकर पूछा कि उनके दुःख तथा अशान्ति का कारण क्या है। उन्होंने कहा कि

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अपने पुत्र अमरसिंह की आरामतलब प्रकृति को देखते हुए मुझे बड़ा सन्देह है कि वह मेवाड़ के गौरव की रक्षा कर सकेगा। यदि आप लोग मेरे पीछे देश तथा वंश के गौरव की रक्षा का भार लेकर उसे सुरक्षित रखने की प्रतिज्ञा मुझसे करें तो मेरे प्राण शान्ति-पूर्वक प्रयाण कर सकते हैं। समस्त सरदारों ने शपथ लेकर प्रतिज्ञा की और महाराणा ने इस प्रतिज्ञा को सुनकर शान्तिपूर्वक इहलीला संवरण की। यह वृतान्त महाराणा की महानता और उनके उत्कट देशप्रेम और आत्म गौरव का द्योतक है।

महाराणा अमर सिंह

महाराणा प्रतापसिंह के स्वर्गारोहण के बाद सन १५९७ ई० में उनके पुत्र अमरसिंह मेवाड़ क राज्यसिंहासन पर विराजमान हुए। सन १५९९ में अकबर ने राजा मानसिंह और युवराज सलीम की अध्यक्षता में कई सरदारों के साथ एक विशाल सेना मेवाड़ के अधिपति से युद्ध करने के लिये भेजी। प्रारम्भ में आक्रमण कारियों ने मेवाड़ के कुछ भाग पर अधिकार जमा लिया परन्तु राणा के सरदारों ने बड़ी बीरता से युद्ध करके उनको कई स्थानों पर परास्त किया और ऊँटाले का किला जीत लिया। इसके बाद राणा और उनकी सेना ने मालपुरा को फिर लूटा और वहाँ की मुगल सेना को भी पराजय का मुंह देखना पड़ा। इस प्रकार इस आक्रमण की विफलता के संदर्भ में राजा मानसिंह के परामर्श से युवराज सलीम अफगानों का उपद्रव शान्त करने के लिये बंगाल भेज दिया गया। अबुल फजल के कथन और जहाँगीर द्वारा अपनी दिन चर्या की पुस्तक में लिखे जाने से सिद्ध होता है कि मेवाड़ के बिरुद्ध किया हुआ यह युद्ध मुगल सम्राट के हित की दृष्टि से कतई व्यर्थ साबित हुआ।

राजा मानसिंह

अकबर के शासन काल में राजा मानसिंह का सर्वव्यापी प्रभाव था। हम ऊपर देख चुके हैं कि उन्होंने किस प्रकार अनेक राजपूत राजाओं को मुगल-शक्ति से व्यर्थ संघर्ष करने से रोका। ऐसा करके उन्होंने हिन्दुओं को व्यर्थ रक्तपात से बचाया तथा अकबर के राष्ट्रीय शासन को स्थिर करने में योगदान दिया। मेवाड़ के विरुद्ध युद्ध में राजा मानसिंह को सेनाध्यक्ष बनाकर भेजा जाना इस बात का द्योतक है कि हिन्दू राष्ट्रीय पहिले हैं और साम्प्रदायिक पीछे। यह इस बात का भी द्योतक है कि वे तत्कालीन महान शक्तिशाली भारत सम्राट के अत्यधिक विश्वासपात्र थे।

राजा मानसिंह द्वारा किये गये अन्य कार्य भी उनकी विशाल योग्यता, विश्वास-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पात्रता और बुद्धिमत्ता के परिचायक हैं। मिर्जा हकीम को जो अकबर का भाई था हिन्दुस्तान का बादशाह बनने की धुन सवार हुई। उसने प्रचार किया कि उसका भाई काफिर होगया है और इस्लाम के विरुद्ध है। कट्टर धर्मान्ध मुसलमान उससे सहानुभूति रखते थे। सन १५८० में वह एक विशाल सेना लेकर पंजाब पर चढ़ दौड़ा। मानसिंह ने युद्ध में उसे परास्त किया और वह भाग खड़ा हुआ। उसने पुनः अपने सेनापति शामदान के साथ एक विशाल सेना लड़ने को भेजी। राजा मानसिंह ने शामदान को बुरी तरह हराया और उसका बध कर दिया। मिर्जा हकीम सन १५८५ में अधिक मद्यपान के कारण मर गया और काबुल जिस पर कि वह शासन करता था अकबर के साम्राज्य में मिला दिया गया। राजा मानसिंह को ही काबुल प्रदेशके शासनका भार सुपुर्द किया गया।

अकबर के शासन काल में यूसुफजाइयों के एक फिरके ने बड़ा उपद्रव किया उनकी उद्दंडता अकबर के साम्राज्य को एक चुनौती थी। राजा बीरबल ने इस उपद्रव को दबाने में जो अनुपम वीरता दिखलाई वह एक ऐतिहासिक तथ्य है। अकबर ने जैनखाँ के साथ बीरबल के नेतृत्व में एक सेना यूसुफजाइयों का दमन करने को भेजी थी। जैनखाँ डरपोक एवं कायर था। वह उपद्रवकारियों की मार के आगे मैदान छोड़कर भाग गया, परन्तु राजा बीरबल रणक्षेत्र में डटे रहे और ८००० सैनिकों के साथ रणक्षेत्र में ही वीरगति को प्राप्त होगये। देश के लिए राजा बीरबल का यह बलिदान बड़ा विलक्षण था। चूंकि विद्रोह राजा बीरबल के आत्म बलिदान से भी शान्त न हुआ अतः अकबर ने राजा टोडरमल के नेतृत्व में राजकुमार मुराद के साथ एक और सेना भेजी। अबुल-फजल लिखता है कि राजा टोडर मल के नेतृत्व में इस हिन्दू सेना ने अफगान उपद्रवकारियों के विरोध को पूर्णतया नष्ट कर दिया। अफ़गानों का बड़ी संख्या में बध किया गया और जो शेष रहे उन्हें दास बनाकर फारस और तूरान में बेच दिया गया।

सन १५८२ में अकबर ने राजा भगवानदास की अध्यक्षता में पांच हजार सैनिकों को कश्मीर की विजय के लिए भेजा। वहाँ के शासक यूसुफ और उसका पुत्र याकूब परास्त हुए और उन्हें बन्दी बनाकर राजा मानसिंह की आधीनता में बंगाल भेज दिया गया इस समय राजा मानसिंह बंगाल के शासक नियुक्त हुए थे। सन १५९२ ई० में राजा मानसिंह ने उड़ीसा पर विजय प्राप्त कर उसे साम्राज्य में मिला दिया। राजा मानसिंह ने अपनी वीरता और युद्ध कौशल से अकबर के लिए इतनी विजय प्राप्त की कि यदि उनका इस प्रकार सहयोग प्राप्त न होता तो अकबर के शासन काल का इतिहास कुछ और ही होता।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अजीज कोका अकबर का एक सेनापति था। जहाँगीर के लड़के खुसरो को उसकी लड़की ब्याही थी। अजीज कोका राजा मान सिंह का मित्र था। राजा मानसिंह और अजीज कोका चाहते थे कि अकबर की मृत्यु के बाद खुसरो को ही राज्यसिंहासन का उत्तराधिकारी बनाया जाय। राजा मानसिंह जहांगीर की जो उस समय सलीम कहलाता था आदतों से कुछ उसके विरुद्ध थे। राजा मानसिंह और अजीज कोका के इस षड़यंत्र का सलीम को पता चलगया और उसने राजा मानसिंह की शक्ति से भयातुर होकर अपने पिता अकबर से मेल कर लिया। यद्यपि फिर वायुमण्डल सलीम के पक्ष में होगया था परन्तु राजा मानसिंह की शक्ति और प्रभाव पर इसका कोई असर न पड़ा, वे खुसरो को लेकर बंगाल चले गये।

राजा भगवानदास, राजा मानसिंह, राजा टोडरमल और राजा बीरबल सम्राट के अन्तरङ्ग घनिष्ट मित्रों में से थे।इन लोगों को राज्य में ऊंचे से ऊंचे पद प्राप्त हुए थे।ये बड़े बड़े युद्धों में सेनापति बनाकर भेजे जाते थे। इन राजाओं का सम्राट अकबर और जनता पर जो प्रभाव था उसी के कारण शासन प्रवन्ध में उन्नति हुई और गैर मुस्लिम प्रजा राजभक्त होगई। हिन्दू कवियों, विद्वानों, संगीतज्ञों, चित्रकारों और अन्य प्रकार के कलामर्मज्ञों ने सम्राट अकबर के दरबार में उच्च स्थान प्राप्त किये। हिन्दी कविता उन्नति के चरम शिखर पर पहुँच गई। सूर और तुलसी जो हिन्दी के सर्व श्रेष्ठ कवि हैं इसी काल में उत्पन्न हुए। अकबर स्वयं और उसके अनेक दरबारी जैसे बीरबल, टोडरमल पृथ्वीराज, नरहरिवंदीजन आदि हिन्दी के उत्तम कवि थे।

अकबर के शासन काल में उसकी धार्मिक सहिष्णुता की नीति के कारण हिन्दू कला और संस्कृति की महान उन्नति हुई। इस काल में हिन्दुओं के तीर्थस्थानों की भी बड़ी उन्नति हुई। मथुरा और वृन्दावन में भक्ति की लहर दौड़ गई और अनेक मन्दिरों और देवालयों का निर्माण हुआ।

राजा मानसिंह के पिता राजा भगवानदास ने मथुरा में सती का बुर्ज बनवाया। गोवर्द्धन में उन्होंने हरदेवजी के मन्दिर का निर्माण कराया। राजा मानसिंह ने हरदेवजी के मन्दिर के पास 'मानसी गंगा' नाम का एक विशाल सरोवर बनवाया जिसकी आजकल बड़ी मान्यता है। सन १५९० ई० में राजा मानसिंह ने वृन्दाबन में गोविन्दजी का मन्दिर बनवाया। यह मन्दिर स्थापत्य एवं वास्तुकला का विलक्षण नमूना है। दुर्भाग्यवश दुर्दान्त औरङ्गजेब ने निष्ठुरता पूर्वक इस मन्दिर को बहुत कुछ तुड़वा दिया था परन्तु जो कुछ भी भग्नावशेष है वह वास्तुकला की दृष्टि से अद्भुत वस्तु है। मथुरा के कंस किले को भी राजा मानसिंह ने बनावया था। वृन्दावन में गोपीनाथ का मन्दिर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अकबर के दरबारी कछवाहा राजपूत रायसाल ने बनवाया था ।

राजा वीरसिंह देव

अकबर-जहांगीर शासन काल में ओड़छा नरेश राजा वीरसिंहदेव भी बड़े प्रतापी हुए हैं । वे सम्राट जहांगीर के कृपापात्र थे । अकबर के शासन काल में युवराज सलीम के कहने से उन्होंने अबुलफजल का बध कर दिया था । सम्राट होने पर जहाँगीर ने इस आज्ञापालन का बदला उन्हें ओड़छा का राजा बना कर चुकाया । ऐसा करने में जहाँगीर को राजा वीरसिंह देव के बड़े भाई को अपदस्थ करना पड़ा था ।

राजा वीरसिंह देव ने सन् १६६२ ई० से १६८४ ई० तक बड़ी प्रतिष्ठा और गौरव के साथ राज्य किया । उन्होंने एक मुहूर्त में ५२ भवनों, उद्यानों और तालाबों का निर्माण कार्य आरम्भ कराया । इनमें से अधिकांश निर्माण कार्य श्री कृष्ण की लीला भूमि मथुरा, और वृन्दावन तथा ब्रजमण्डल के अन्य स्थानों में सम्पन्न हुए । राजा वीरसिंह देव ने विश्रामघाट मथुरा पर एक तुला निर्माण कराई जिसमें उन्होंने सुवर्ण में तुलकर तुलादान किया । कहते हैं इसके अतिरिक्त उन्होंने ८१ मन सोना और दान में दिया । सम्भवतः इसी सुवर्णदान की निधि से मथुरा में केशवरायका मन्दिर ३३ लाख रुपये की लागत से बनवाया गया । यह मन्दिर इतना भव्य था कि इसको लोग देवताओं द्वारा निर्मित बतलाते थे । आततायी औरङ्गजेब ने इसे अपने शासन काल में धराशायी करा कर उसके स्थान पर एक मस्जिद बनवादी ।

इन्होंने दतिया में एक राज महल बनवाया जिसमें ३५ लाख रुपये व्यय हुए और जो आज भी विद्यमान है और पुराना महल कहलाता है । काशी में मणिकर्णिका घाट व विश्वेश्वर जी का मन्दिर भी इन्हीं के द्वारा बनवाये गये थे । राजा वीरसिंह देव ने जो अनगणित निर्माण कार्य कराये उनका उल्लेख वीर मित्रोदय और आनन्दकन्द चम्पू आदि ग्रन्थों में मिलता है । राजा वीरसिंह देव का महान निर्माण कार्य उनकी असीम भक्ति और हिन्दूसंस्कृति के प्रति अगाध प्रेम का द्योतक है ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जय किसान जय जवान

[श्री राजेन्द्र रंजन]

हिमाद्रि सृंग सों सदा स्वदेस कों निहारती ।
सनेह सों दुलारती विलय यही पुकारती ।।
कि जै जवान जै किसान।

समीर बेग सों बढ़ी चढ़ी सशक्त बाहिनी ।
अधीर युद्ध कों बनी अरीन दर्प दाहिनी ।।
अभीत सत्य धर्म प्रीत रीति कों निवाहिनी ।
प्रतीत राखि जीत में सुनीत कों सराहिनी ।।
गहें सुपंथ न्याय विश्व प्रेम कौ लहैं विधान ।
जै किसान जै जवान ।।

तपाक तें घमंड चूर चीन पाक कौ कियौ ।
स्वमातृ भूमि की स्वयं बचाय लाज कों लियौ ।।
प्रचंड अस्त्र सस्त्र खंडि ढेर खाक को कियौ ।
महान हिंद देस के बहादुरौ सदा जियौ ।।
अमेय गेय कीर्ति हो अजेय अस्त्र के समान ।
जै किसान जै जवान ।।

अपाल मान लेंय जो किसान बंधु आज की ।
कबौं कमी रहै नहीं स्वराज में अनाज की ।।
बढ़ाय धान्य देश में हरें विथा समाज की ।
रहै विशेष रूप सों अखंडता सुराज की ।।
बिदेस के अनाज की अधीनता करै पलान ।
जै किसान जै जवान ।।

कृसि प्रधान देस के किसान हू खुसी रहें ।
महान वीर हिंद के जवान हू सुखी रहें ।।
किसान अन्न दातृ मातृ भूमि के सुभक्त हैं ।
जवान हू बचाव कों समर्थ हैं सशक्त है ।।
यही इमान देस के यही विकास के निसान ।
जै किसान जै जवान ।।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ब्रज साहित्य मंडल का पुनरुद्धार

[पं० बनारसी दास चतुर्वेदी, फिरोजाबाद]

यह बात निस्सन्देह बड़े हर्ष और सन्तोष की है कि ब्रज साहित्य मण्डल के कुछ उत्साही कार्यकर्ताओं ने मंडल को पुनः जीवित और जाग्रत करने का प्रयत्न आरम्भकर दिया है और 'ब्रज भारती' के दो अङ्क हाल में निकल भी चुके हैं। किन-किन कारणों से मंडल के कार्य कर्ताओं में पारस्परिक मतभेद उत्पन्न हुए, उनका सार्वजनिक रूप से उल्लेख करने की आवश्यकता नहीं, कोई भी बात हमें ऐसी न कहनी चाहिए और न लिखनी चाहिये, जिससे मनमुटाव बढ़े। अब समय आगया है कि हम सब लोग आपस में मिलकर ब्रजमण्डल की सर्वाङ्गीण उन्नति के लिए प्रयत्न करें।

ब्रज भाषा की उपेक्षा

हम लोग जो ब्रजभाषी हैं, खड़ी बोली के महत्व से इन्कार नहीं करते और इस ऐतिहासिक तथ्य को स्वीकार करते हैं कि खड़ी बोली को राष्ट्रभाषा का जो पद मिला है, वह सर्वथा उचित ही है। हम यह भी मानते हैं कि जनपदीय भाषाओं का, जो खड़ी बोली की मातायें हैं, जैसे ब्रजभाषा, अवधी, बुन्देलखण्डी, भोजपुरी इत्यादि, यह कर्तव्य है कि वे खड़ी बोली की उन्नति में भरपूर सहायक हों; लेकिन इसके साथ ही साथ खड़ी बोली को भी अपने कर्तव्य पर ध्यान देना चाहिये। जो लोग खड़ी बोली के स्टीम रोलर से जनपदीय भाषाओं को दबोचने की कल्पना करते हैं, वे निस्सन्देह मूर्खों के स्वर्ग में रहते हैं। बकौल राहुलसांकृत्यायन जनपदीय भाषाएँ कोई पिंजरापोल की गायें तो हैं नहीं, वे तो सजीव जीती जागती मातृभाषाएँ हैं, जो सैकड़ों वर्षों से प्रचलित हैं और भविष्य में सैकड़ों वर्षों तक प्रचलित रहेंगी। हिन्दी की प्रतिष्ठित संस्थाओं को इस विषय पर गम्भीरतापूर्वक पुनः विचार कर लेना चाहिये।

अन्तर्जनपदीय परिषद

ब्रज साहित्य-मण्डल के हाथरस अधिवेशन के समय हमने एक अन्तर्जनपदीय परिषद कायम कराने का प्रयत्न किया था और वह स्थापित हो भी गई थी। खेद की बात है कि कई कारणों से उसका काम आगे नहीं चल सका। अब उसको पुनर्जीवित करने की जरूरत है। हमें एक बात न भूलनी चाहिए, वह यह कि जनपदीय भाषाओं का भाग्य एक दूसरे से सम्बद्ध है। हर्ष की बात है कि राजस्थानी के लिए काफी कार्य हुआ है; उस राज्य में उसके लिए चार पत्रिकाएँ निकलती हैं। कुछ कार्य अवधी और भोजपुरी के लिए भी हुआ था। मैथिली का तो अलग व्यक्तित्व है ही।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इसमें कोई सन्देह नहीं कि ब्रज-भाषा इनमें सबसे बड़ीबहिन है और उसका कर्तव्य है कि वह अन्य छोटी बहिनों की सहायता करती हुई आगे बढ़े और उनका पथप्रदर्शन करे। 'ब्रजभारती' के सम्पादक महोदय से हमारा अनुरोध है कि वे अपनी पत्रिका के चार पृष्ठ अन्य जनपदीय भाषाओं की गतिविधि के लिए सुरक्षित रख दें।

अन्य आवश्यक प्रश्न

(१) गैर-सरकारी ढङ्ग पर ब्रज-भाषाओं का जारी करना एक अत्यन्त आवश्यकीय कार्य है। यह प्रश्न बहुत वर्षों से हमारे सामने है भी, इसमें अब बिलम्ब नहीं होना चाहिये।

(२। ब्रजभाषा के वर्तमान कवियों का यथोचित सम्मान और उनकी रचनाओं के प्रकाशन का प्रबन्ध।

(३) ब्रजमण्डल के लेखकों और कवियों के विषय में एक संदर्भ-ग्रन्थ का तैयार करना।

(४) ब्रजमंडल में जो साहित्यिक तथा सांस्कृतिक संस्थाएँ काम कर रही हैं, उनमें पारस्परिक सहयोग स्थापित करना।

(५) ब्रजमंडल की शिक्षण संस्थाओं के विद्यार्थियों में ब्रजभाषा के प्रति प्रेम उत्पन्न करना।

(६) ब्रजमण्डल के कवियों की कीर्ति रक्षा का प्रयत्न, उदाहरण के लिये श्रीधर पाठक की जन्मभूमि जौंधरी में उनके स्मारक की स्थापना और सत्यनारायण जी के धांधूपुर में उनके मन्दिर का जीर्णोद्धार।

(७) रेडियो पर जो ब्रजभाषा प्रोग्राम आ रहा है, उसके विस्तार पर विचार।

(८) ब्रज क्षेत्र में रेडिओ स्टेशन की स्थापना।

मुख्य कार्य

हमारा मुख्य कार्य तो इस समय यही है कि ब्रज साहित्य मण्डल के पुराने कार्यकर्ताओं में सौहार्द और मैत्री की स्थापना करें, क्यों कि उसके बिना हमारे सारे स्वप्न अधूरे ही रह जायगे। हम चाहे इसे ठीक समझें या न समझें, पर आगे चल कर उत्तर प्रदेश दो भागों में विभाजित होकर ही रहेगा, और उस समय ब्रजमंडल को और ब्रज-संस्कृति को भी पश्चिमी उत्तर प्रदेश में एक गौरव पूर्ण स्थान मिलेगा। इस प्रकार ब्रज-साहित्य मण्डल की जिम्मेदारी और भी बढ़ जाती है। हमें छोटे-छोटे मनमुटाव और झगड़ों को तिलाञ्जलि दे देनी चाहिए और ब्रज मण्डल के उज्वल भविष्य की कल्पना करके उसकी चौगुनी उन्नति के लिए भरपूर प्रयत्न करना चाहिये।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

१-हमारे जवानों के शौर्य ने शत्रु के मनसूबे धूल में मिला दिए।
२-हमारे यहाँ बने हथियारों के सामने अमरीकी हथियार कामयाब न हो सके।
३-हमें अपने को अन्नोत्पादन में भी आत्म निर्भर होना है।
४-अमरीका या अन्य देशों का मुँह ताकना धोखा दे सकता है।

देश का हर व्यक्ति राष्ट्र की इस सबसे बड़ी समस्या में अपना योग दे सकता है। जिला सहकारी बैङ्क में अपना धन आप जमा करें जहाँ वह पूर्ण सुरक्षित है, ब्याज दूसरे बैङ्कों से आपको ज्यादा मिलेगा और किसानों के अन्नोत्पादन के कार्य में आपके धन का उपयोग होगा।

जिला निवासियों के लिये हमारी शुभ कामनाओं के साथ हम आशा भी करते हैं कि आप अपने ही सहकारी बैंक को अपनाकर अपना तथा इस बैंक का और अपने राष्ट्र का सदैव हित करेंगे।

ब्याज की दरें

सेविंग खाता पर	४	प्रतिशत	वार्षिक
कौल डिपौजिट पर	३॥।	,,	,,
६ माह की अमानत पर	५॥	,,	,,
१ साल की अमानत पर	६।	,,	,,
२ साल की अमानत पर	६॥	,,	,,
३ साल की अमानत पर	६॥।	,,	,,
४ साल की अमानत पर	७	,,	,,
५ साल की अमानत पर	७।	,,	,,
७ साल की अमानत पर	७॥	,,	,,

मथुरा जिला सहकारी बैंक लि०, मथुरा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अपनी सम्पूर्ण बचत आज ही

उत्तर प्रदेश कोअपरेटिव बैंक लिमिटेड

प्रधान कार्यालय लखनऊ में

जमा कर अपनी आर्थिक स्थिति सुदृढ़ कीजिये

उक्त बैंक सहकारी आन्दोलन के अन्तर्गत सरकारी साझेदारी तथा बैंकिंग संस्थान अधिनियम के अन्तर्गत सरकार द्वारा निरीक्षित एक मात्र एवं विश्वसनीय बैंकिंग संस्था है

शाखाएँ — आगरा, अल्मोड़ा, बरेली, फैजाबाद, डी० ए० वी० कालेज कानपुर, गोंडा, पीलीभीत, कानपुर, रामपुर, सीतापुर, वाराणसी।

क्षेत्रीय कार्यालय — आगरा, गोरखपुर, कानपुर, बरेली।

हमारी विशेषताएँ

१—राज्य की समस्त कृषि योजनाओं के लिए जिला एवं केन्द्रीय सहकारी बैंकों के माध्यम से आर्थिक सुविधाएँ प्रदान करना।

२—प्रत्येक प्रकार की बैंकिंग सुविधायें प्रदान करना।

३—अल्प सामयिक एवं मियादी अमानतें आकर्षक दरों पर स्वीकार करना।

आप भी राष्ट्र निर्माण योजनाओं की पूर्ति, उसकी समृद्धि के निमित्त अपना धन लगाकर सहयोग प्रदान कर राष्ट्र निर्माण में हाथ बटाएँ।

अन्य जानकारी

क्षेत्रीय अधिकारी, शाखा प्रबन्धक या मुख्य कार्यालय से प्राप्त कीजिये

गत ५ वर्षों में बैंक की प्रगति के कुछ आंकड़े

	३०–६–६०	३०–६–६५
१—पूँजी	२५४·७६ लाख	५३८·७६ लाख
२—अमानतें	७४७·४६ लाख	२०६०·०८ लाख
३—सहकारी संस्थाओं को ऋण दिया गया	१३०५·६५ लाख	३३३६·२५ लाख
४—लाभ	१६·०५ लाख	३७·०२ लाख

गङ्गासिंह चूड़ामणि
आई० ए० एस०
अध्यक्ष

रोशनलाल शुक्ल
उपाध्यक्ष

ए० आर० खान
सामान्य प्रबन्धक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अ० भा० ब्रज साहित्य मंडल, मथुरा

सदस्यता-आवेदन-पत्र

श्री प्रधान मन्त्री,

अ० भा० ब्रज साहित्य मंडल,

मथुरा।

महोदय,

मैं अ० भा० ब्रज साहित्य मंडल के उद्देश्यों और नियमों से सहमत हूँ। कृपया मुझे संरक्षक/आजीवन/सक्रिय/साधारण सदस्य बना लीजिए।

भवदीय

....

तिथि .... नाम ....

पूरा पता ....

व्यवसाय ....

साहित्य सेवाओं का उल्लेख ....

....

....

....

शुल्क ....

प्रस्तावक ....

समर्थक ....

....

प्रधान मन्त्री

तिथि ....

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

फोन नं० २४८५४ तार : मार्कफेड

उत्तर प्रदेश कोआपरेटिव फैडरेशन लि०,

(स्थापित : १९४३)

प्रधान कार्यालय:- ६ कैपर रोड, लखनऊ

शाखायें:-बम्बई, कलकत्ता, धनवाद, कानपुर, हापुड़, आगरा, हाथरस, बाँदा, वाराणसी, कालपी ।

राज्य की सहकारी क्रय-विक्रय समितियों एवं जिला सहकारी संघों की शीर्षस्थ संस्था

कारोबारी पूँजी—	रु० ४·३५ करोड़
निजी पूँजी—	रु० १·९८ करोड़
वर्ष १९६४-६५ में किया व्यवसाय-	रु० १४ करोड़ से अधिक

मुख्य व्यवसाय-

★ खाद्यान्न, कृषि-उपज, गुड़, खाँडसारी, जूट, पटसन आदि ।
★ रासायनिक उर्वरक, उन्नतिशील बीज एवं कृषि-यन्त्र ।
★ सहकारी भट्टों हेतु कोयला प्रदान ।
★ रोजिन तथा टरपेन्टाइन के निर्माता ।
★ विशुद्ध आयुर्वेदिक दवाओं के निर्माता ।

दूसरे प्रदेशों की दालें, खाँडसारी, गुड़, सरसों का तेल, तिलहन तथा अन्य कृषि उपज के निर्यात हेतु एवं हमारे औषधि निर्माणशाला द्वारा निर्मित आयुर्वेदिक व अन्य पेटेन्ट दवाओं की बिक्री एजेन्सी के लिए सम्पर्क स्थापित कीजिए ।

जी० एस० चूड़ामणि आई. ए. एस.	वीरपालसिंह	ओमप्रकाश शर्मा
अध्यक्ष	उपाध्यक्ष	मन्त्री

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

गणतन्त्र दिवस के परम पावन पर्व के अवसर पर

मथुरा जिला परिषद्

अपने पूज्य स्वर्गीय प्रधान मंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री

को श्रद्धाञ्जलि अर्पित करती है तथा उनके राष्ट्रीय नारे

जय जवान जय किसान

के परिपालनार्थ संकल्प करती है कि :-

देश की खाद्य समस्या के समाधान हेतु

१-लघु सिंचाई योजनाओं द्वारा चप्पा-चप्पा भूमि को सिंचित करके दो फसली व तीन फसली बनायेंगे।

२-गोबर, कूड़े, पत्ते आदि की खाद बनाकर रसायनिक खाद की कमी को दूर कर उन्नतिशील कृषि यन्त्रों को अपनाकर अच्छे बीज प्रयोग कर, कीट नाशक दवाओं से फसलों की रक्षा कर अधिक अन्न उपलब्ध करायेंगे।

३-मत्स्य पालन, कुक्कुट पालन द्वारा सीमा पर लड़ने वाले जवानों को पौष्टिक आहार उपलब्ध करायेंगे।

४-सप्ताह में एक दिन व्रत रक्खेंगे।

सुरक्षा व समृद्धि हेतु

१-परिवार नियोजन के साधनों को अपनायेंगे।

२-राष्ट्रीय सुरक्षा प्रमाण-पत्रों पर धन लगायेंगे तथा राष्ट्रीय सुरक्षा कोष में गल्ला देकर जवानों का मनोबल बढ़ायेंगे।

शिक्षा व जन कल्याण हेतु

१-सभी बाल-बालिकाओं को शिक्षा प्राप्त हेतु पाठशाला भेजेंगे।

२-आवागमन के साधनों के सुधार के हेतु ब्रजयात्रा-मार्गों एवम् अन्य ग्रामीण मार्गों का निर्माण करेंगे।

बृजमोहन सिंह
मुख्य अधिकारी
जिला परिषद्, मथुरा।

चकलेश्वर सिंह
अध्यक्ष
जिला परिषद्, मथुरा।

मुद्रक तथा प्रकाशक : श्री किशन प्रसाद जैन, संयुक्त मन्त्री, अखिल भारतीय ब्रज साहित्य मण्डल, मथुरा के लिए राष्ट्रीय प्रेस, डैम्पियर नगर, मथुरा में मुद्रित।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

3999
18.2.71
Lucknow

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

STATE MUSEUM, LUCKNOW
LIBRARY
Acc. No. ____________
Book No. ____________

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

3999